ISSN : 2348-2656

पूसा सुरभि

2018-19

भा.कृ.अनु.प.–भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली 110012

माननीय संसदीय राजभाषा समिति के निरीक्षण हेतु माननीय सदस्यों के स्वागत हेतु उपस्थित अधिकारी गण

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उप समिति द्वारा संस्थान का निरीक्षण

ISSN : 2348-2656

बारहवां अंक

पूसा सुरभि

2018-19

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
नई दिल्ली-110012

पूसा सुरभि
अंक: 2018-19

संरक्षक एवं अध्यक्ष
डॉ. ए.के. सिंह
निदेशक

सह-अध्यक्ष
डॉ. अशोक कुमार सिंह
संयुक्त निदेशक (अनुसंधान)

संपादक
केशव देव
उप निदेशक (राजभाषा)

संपादन मंडल
डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान संभाग
डॉ राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग
राजेन्द्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी, कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई
सुनीता, सहायक निदेशक (राजभाषा)

संपर्क सूत्र
उप निदेशक (राजभाषा)
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली-110012
दूरभाष: 011-25842451

ISSN - 2348-2656

आवश्यक सूचना
इस अंक में प्रकाशित रचनाओं में व्यक्त विचारों/आंकड़ों आदि के लिए लेखक स्वयं उत्तरदायी है।

मुद्रण: नवंबर 2019
भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली के लिए हिंदी अनुभाग द्वारा प्रकाशित एवं
मै. एम एस प्रिंटर्स, सी-108/1 बैक साइड नारायणा इंडस्ट्रीयल एरिया, फेस-1, नई दिल्ली-110028
फोनः 7838075335, 9899355565, 9899355405, ईमेलः msprinter1991@gmail.com

आमुख

कृषि क्षेत्र, राष्ट्रीय अर्थव्यवस्था में रोजगार उत्पन्नकर्ता तथा ग्रामीण विकास में अति महत्वपूर्ण योगदान दे रहा है। आज भारत में एक ओर जहां तीव्र गति से जनसंख्या बढ़ रही है, तो वहीं दूसरी ओर कृषि योग्य भूमि का क्षेत्रफल निरंतर घट रहा है। ऐसी दशा में प्रति व्यक्ति खाद्यान्न की आत्मनिर्भरता सुनिश्चित करना समय की मांग है, जिसके लिये खेतीबाड़ी के साथ पशुपालन, मछली पालन, मुर्गीपालन, मधुमक्खी पालन, मछली पालन, वानिकी, कुक्कुट पालन व बतख पालन के अतिरिक्त खाद्य प्रसंस्करण एवं मूल्य संवर्धन इत्यादि कृषि के नवोन्मेषी आयाम खाद्य एवं पोषण सुरक्षा बढ़ाने का एक अहम हिस्सा बनते जा रहे हैं। भारत सरकार ने भी कृषि क्षेत्र की विकास दर को बढ़ाने और किसानों के लिए कल्याणकारी रणनीति अपनाते हुए उनकी आय को वर्ष 2022 तक दोगुना किए जाने का लक्ष्य रखा है। इसके लिए हमें कृषि क्षेत्र में केवल उत्पादन बढ़ाने पर अपना ध्यान केंद्रित न करके किसानों की आय बढ़ाने और कृषि जोखिम कम करने पर विशेष ध्यान दिए जाने की आवश्यकता है।

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान इसी दिशा में प्रयासरत है। संस्थान के वैज्ञानिक व तकनीकीगण निरंतर कृषि की नवीनतम प्रौद्योगिकियों की खोज में रत हैं और उनकी इस खोज को किसानों व जन-सामान्य तक पहुंचाने में संस्थान की राजभाषा हिंदी में प्रकाशित गृह पत्रिका **"पूसा सुरभि"** महत्वपूर्ण भूमिका निभा रही है। पत्रिका में प्रकाशित सामग्री अत्यंत सरल भाषा में होने के कारण किसान व जन-सामान्य इसका भरपूर लाभ उठाते हैं। साथ ही इसके प्रकाशन से संस्थान में राजभाषा हिंदी के प्रसार-प्रचार में लगातार वृद्धि हो रही है और वैज्ञानिक व तकनीकी अधिकारियों/ कर्मचारियों की राजभाषा हिंदी में लेखन क्षमता को बल मिल रहा है। पत्रिका के इस बारहवें अंक में प्रकाशित सामग्री पूर्व अंकों की भांति जनोपयोगी एवं कृषि के विकास से संबंधित है। इसमें विभिन्न विषयों के साथ रोजगारोन्मुखी कृषि के नए आयामों पर भी परिचर्चा की गयी है।

मैं पत्रिका के इस अंक के सफल प्रकाशन के लिए डॉ अशोक कुमार सिंह, संयुक्त निदेशक, अनुसंधान, श्री केशव देव, उप निदेशक(राजभाषा) तथा संपादन मंडल के सभी सदस्यों को बधाई के साथ यह आशा करता हूँ कि पत्रिका में प्रकाशित सामग्री सभी सुधी पाठकों एवं राजभाषा कार्य से जुड़े अधिकारी/कर्मचारी के लिए ज्ञानवर्धक और रोचक साबित होगी।

(ए.के. सिंह)
निदेशक

प्राक्कथन

कृषि भारतीय अर्थव्यवस्था की केंद्र बिंदु व भारतीय जीवन की धुरी है। इससे सर्वाधिक लोगों को रोजगार प्राप्त होता है। देश की कुल भूमि का 47.48 प्रतिशत भू-भाग कृषि कार्यों के अंतर्गत है। भारत की 60 प्रतिशत जनसंख्या प्रत्यक्ष एवं अप्रत्यक्ष रूप से कृषि कार्यों पर ही निर्भर है। आज भारतीय कृषि के समक्ष तेजी से बदलते कारोबारी व्यवसाय, तकनीकी परिवर्तन की गति और वैश्विक प्रतिस्पर्धी वातावरण जैसी अनेक चुनौतियां हैं। साथ ही ग्रामीण क्षेत्रों में कृषि योग्य भूमि की कमी व कम आमदनी के कारण रोजगार के अवसर कम होते जा रहे हैं। ग्रामीण क्षेत्रों में बड़े स्तर पर युवाओं का शहरों की ओर पलायन हो रहा है। जलवायु परिवर्तन भी इन दिनों चिंता का एक महत्वपूर्ण विषय बना हुआ है। इन सब कारणों के निवारण के लिए सरकार कृषि विकास को उच्च प्राथमिकता देते हुए ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए प्रतिबद्ध है। हमारा संस्थान भी किसान भाइयों को कृषि कार्य में आने वाली चुनौतियों के हल खोजने लिए संकल्पित है।

हमारा देश विभिन्नता में एकता वाला अनेक भाषा व बोलियों वाला देश है, किंतु भारत सरकार द्वारा आधिकारिक रूप से हिंदी को संघ के कामकाज के लिए राजभाषा घोषित किया गया है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान कृषि अनुसंधान में अग्रणी होने के साथ राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन में भी अग्रणी है। संस्थान समय-समय पर विभिन्न संस्थाओं से पुरस्कृत होता रहता है। संस्थान राजभाषा विभाग द्वारा "क" क्षेत्र के लिए निर्धारित लक्ष्य को प्राप्त करने हेतु सतत प्रयत्नशील है। कार्यालयीन कार्य में राजभाषा की निरंतर प्रगति देखने को मिल रही है। साथ ही संस्थान अपने अनुसंधानों को राजभाषा हिंदी के माध्यम से किसान व जन सामान्य को अनेक उपयोगी साहित्य उपलब्ध करा रहा है। ऐसे ही साहित्य के रूप में किसान व जन सामान्य के द्वारा पसंद की जाने वाली संस्थान की राजभाषा पत्रिका **"पूसा सुरभि"** के बारहवें अंक को आपको हस्तगत करते हुए मुझे अत्यंत प्रसन्नता हो रही है। पत्रिका में विभिन्न विषयों पर किसान व जन सामान्य उपयोगी सामग्री उपलब्ध कराई गई है।

पत्रिका के इस अंक के प्रकाशन के लिए हम संस्थान के निदेशक एवं उप महानिदेशक (कृषि प्रसार) भा.कृ.अनुप. डॉ ए.के. सिंह का तहे दिल से आभार प्रकट करते हैं जिनके उत्कृष्ट मार्ग दर्शन व दिशा निर्देशन से यह सफल प्रकाशन संभव हुआ। पत्रिका के प्रकाशन के लिए सामग्री का संकलन और कुशल संपादन के लिए उप निदेशक (राजभाषा) श्री केशव देव एवं सहायक निदेशक (राजभाषा) सुश्री सुनीता का भी आभार, जिनके निरंतर प्रयासों से इसको मूर्तरूप प्रदान किया गया। पत्रिका को और अधिक आकर्षक बनाने के लिए संपादन मंडल के सदस्य डॉ राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, डॉ दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक एवं श्री राजेंद्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी के प्रति भी आभार व्यक्त करता हूँ, जिन्होंने पत्रिका के संपादन में व प्रकाशन में अपने बहुमूल्य सुझाव व सेवाएं प्रदान की। साथ ही इस अंक में सम्मिलित लेखों के लेखकों के प्रति भी आभार, जिनके द्वारा उपलब्ध कराई गई सामग्री से यह प्रकाशन सफलता पूर्वक संपन्न हुआ। मैं आशा करता हूँ कि यह प्रकाशन सर्वोपयोगी साबित होगा।

(अशोक कुमार सिंह)
संयुक्त निदेशक (अनुसंधान)

संपादकीय

भाषा हमारे विचारों की अभिव्यक्ति और संप्रेषण का सशक्त माध्यम है और यह संपर्क का साधन होने के साथ-साथ हमारी संस्कृति व संस्कार के संरक्षण, संवर्धन की संवाहक भी है। विविधता में एकता भारत का मूलभूत स्वरूप रहा है, सामासिक संस्कृति भारतीय परंपरा की हमेशा धरोहर रही है। हमें अपनी इस धरोहर को हर हाल में अक्षुण्ण रखना है। हिंदी इस सांस्कृतिक धरोहर, राष्ट्रीय एकता और सामाजिक सद्भाव की संवाहिका है, क्योंकि सारी विविधताओं को एक सूत्र में पिरोये रखने में इसने सर्वाधिक योगदान दिया है। यह भारत के जनमानस की भाषा, राष्ट्रभाषा, संपर्क भाषा के साथ ही शासकीय प्रयोजनों के लिए भारत संघ की राजभाषा भी है। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343(1) में देवनागरी लिपि में लिखित हिंदी को संघ की राजभाषा के रूप में मान्यता दी गई है।

आज का युग सूचना प्रौद्योगिकी का युग है इस क्षेत्र में हिंदी का प्रयोग कई गुना बढ़ा है और हिंदी ने संचार की विभिन्न तकनीकों के प्रयोग में अपनी उपयोगिता को स्थापित किया है। सरकारी कामकाज में हिंदी का प्रयोग बढ़ाने के लिए सरकार द्वारा हर तरह के संसाधन और सुविधाएं उपलब्ध करवाई जा रही हैं। विभिन्न सॉफ्टवेयरों के विकास ने हिंदी में कार्य करना व्यवहारिक दृष्टि से आज बहुत आसान बना दिया है। इसी क्रम में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान की यह गृह पत्रिका **"पूसा सुरभि"** सभी कार्मिकों के लिए अपनी प्रतिभा तथा अभिव्यक्ति प्रदर्शित करने का सशक्त माध्यम है। संस्थान में आज दिन-प्रतिदिन नए अनुसंधान हो रहे हैं जिन्हें देश के किसानों तक पहुंचाने के लिए यह जरूरी है कि इनको देश की संपर्क भाषा हिंदी में पहुंचाया जाए। इस अंक में विविध विषयों पर किसानों व जनोपयोगी महत्वपूर्ण सामग्री का समावेश किया गया है। साथ ही गत वर्ष की भांति इस बार भी कृषि जगत की एक जानी-मानी हस्ती डॉ हरि कृष्ण जैन, विश्व प्रसिद्ध कोशिकानुवंशिक विज्ञानी एवं पादप प्रजनक के जीवनवृत्त पर प्रकाश डालने का लघु प्रयास किया गया है। पत्रिका के राजभाषा खंड में संस्थान में राजभाषा हिंदी के कार्यान्वयन के लिए किये गए प्रयासों की जानकारी भी उपलब्ध कराई गई है। उपर्युक्त जानकारी निश्चित ही पाठकगणों को बहुत उपयोगी एवं प्रेरणाप्रद साबित होगी।

हम संस्थान के निदेशक और संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) के प्रति आभार व्यक्त करते हैं जिनके उत्कृष्ट मार्गदर्शन व दिशा निर्देशन से संस्थान में राजभाषा का कार्यान्वयन निरंतर प्रगति पर है। पत्रिका के इस अंक के प्रकाशन में भी हमें उनके बहुमूल्य मार्गदर्शन व दिशा निर्देशन प्राप्त हुए। हम पत्रिका हेतु सामग्री उपलब्ध करवाने के लिए सभी वैज्ञानिकों, तकनीकी एवं अन्य कार्मिकों/लेखकों के प्रति भी आभार व्यक्त करते हैं। साथ ही संपादन मंडल के सभी सदस्यगण डॉ राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, डॉ दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, श्री राजेंद्र शर्मा, मुख्य तकनीकी अधिकारी एवं सुश्री सुनीता सहायक निदेशक (राजभाषा) का विशेष आभार जिनके अथक सहयोग से यह प्रकाशन सफल हुआ।

पत्रिका का यह अंक आपको कैसा लगा? पत्रिका को और बेहतर एवं उपयोगी बनाने के लिए आपके विचार और सुझावों का हमेशा स्वागत है। अंत में पूसा सुरभि से जुड़े सभी लोगों के प्रति आभार।

(केशव देव)
उप निदेशक (राजभाषा)

विषय सूची

आमुख (iii)

प्राक्कथन (v)

संपादकीय (vii)

तकनीकी खंड...

1. डॉ. हरि कृष्ण जैन : विश्व प्रसिद्ध कोशिकानुवंशिक विज्ञानी एवं पादप प्रजनक 3
   - सुमेरपाल सिंह एवं अशोक कुमार सिंह
2. गेहूं और धान की फसल में नाइट्रोजन का प्रभाव, कमी के लक्षण एवं उनको दूर करने के उपाय 5
   - हरि सिंह मीना, संदीप अडवी, जगदीशन बी, बिरेन्द्र कुमार पधान, दलवीर सिंह, शैलेन्द्र कुमार झा एवं लक्ष्मी सती
3. वर्षा पोषित कृषि में जल उत्पादकता एवं आय बढ़ाने वाली तकनीक: मक्का सह मूंग की अंतरवर्तीय खेती 9
   - रणबीर सिंह एवं अनिल कुमार मिश्र
4. सूत्रकृमियों एवं उनके प्रबंधन के प्रति अनभिज्ञता के कारण कृषकों को होने वाली आर्थिक क्षति 14
   - राशिद परवेज़, उमा राव एवं एच. के. शर्मा
5. गेहूं व जौ के प्रमुख सूत्रकृमि रोग एवं प्रबंधन 17
   - अर्चना उदय सिंह, इम्तियाज अहमद और राजेन्द्र शर्मा
6. राजमा की उन्नत किस्मों का बीज उत्पादन 20
   - ज्ञानेन्द्र सिंह, रमेश चन्द, चन्दू सिंह , संजय कुमार, संजीव कुमार शर्मा, विपिन कुमार, राजेश कुमार एवं किरण ठाकुर
7. उर्द की उन्नत किस्मों का बीज उत्पादन 27
   - रमेश चन्द, चन्दू सिंह, ज्ञानेन्द्र सिंह, संजय कुमार एवं एस.पी. जीवन कुमार
8. अतिरिक्त कृषि आय के साथ मृदा स्वास्थ्य सुधार में भी सहायक: ग्रीष्मकालीन (जायद) मूँग की खेती 32
   - हरि सिंह मीना, सुरेन्द्र कुमार मीना, मुकेश कुमार मीना, बिन्द्र सिंह, एवं प्रलोय कुमार भोमिक
9. बीज उपचार: पर्यावरण अनुकूल तकनीक 35
   - अतुल कुमार एवं देवेन्द्र कुमार यादव
10. पादप परजीव सूत्रकृमि एवं सूक्ष्म जीवों के पारस्परिक संबंध से फसलों के रोग में तीव्रता 40
    - हरेंद्र कुमार शर्मा, पंकज एवं सोनी
11. किसान - विकसित तकनीक द्वारा आलू और प्याज का भंडारण 43
    - रमेश चंद हरित, सुनीता यादव, संदीप कुमार, ऊषा मीना एवं संदीप कुमार सिंह
12. लाभकारी है किन्नू में सघन बाग़वानी 46
    - अंजली सोनी, अंजना खोलिया एवं अनिल कुमार दुबे
13. अंगूरों में गुणवत्ता सुधार हेतु सरलतम विधियां 50
    - राम रोशन शर्मा
14. गुलाब में रोग एवं कीट प्रबंधन 53
    - नमिता, एम.के. सिंह एवं सपना पंवर
15. ऑर्किड्स और लिली में बोट्राईटिस पर्ण झुलसा रोग एवं उसका प्रबंधन 58
    - तुसार कांत बाग एवं राम चरण मथुरिया
16. पादप वृद्धि एवं विकास में पोषक तत्वों का योगदान 62
    - एम.एस. राठी, संगीता पॉल, एस.एन. भौमिक एवं के. अन्नपूर्णा

17. गुणवत्तायुक्त तेल एवं खली वाली भारतीय सरसों की किस्में 65
- यशपाल, सुजाता वासुदेव, नवीन सिंह, नविन्द्र सैनी, राजेन्द्र सिंह, महेन्द्र सिंह यादव, मुकेश ढिल्लों, भगवान दास, मिथलेश नारायण, राजेश कुमार एवं देवेन्द्र कुमार यादव
18. शीतोष्ण फलों की पौधशाला चयन की विधि 70
- के.के. प्रमाणिक, ए.के. शुक्ला, संतोष वाटपाडे एवं सुनील कुमार गर्ग

विविधा....

1. कृषि भौतिकी संभाग - एक परिचय 77
- अनन्ता वशिष्ठ एवं पी. कृष्णन
2. किसानों की आमदनी में वृद्धि हेतु संसाधनों का सतत प्रबंधन 86
- ओ.पी. सिंह एवं रणबीर सिंह
3. सूखे के प्रबंधन के लिए कृषि संबंधित रणनीतियां 89
- सुनील कुमार त्यागी एवं भूपिन्द्र सिंह
4. पौधशाला (नर्सरी) से रोजगार सृजन 95
- रामेश्वर दयाल मीना एवं रणबीर सिंह
5. भा.कृ.अनु.सं. के खेत तालाबों में मछली पालन द्वारा अतिरिक्त आय सृजन का पहला प्रयास 100
- ग्रेगरी पोलोव, मान सिंह, मुर्तजा हसन, अनिल कुमार मिश्र, एस.एस. परिहार और एस.डी. सिंह
6. ब्रोकली लगाएं, अधिकाधिक लाभ कमाएं 109
- श्रवण सिंह, बृज बिहारी शर्मा एवं भोपाल सिंह तोमर
7. कमरख एक लाभ अनेक 114
- विद्या राम सागर एवं जितेंद्र कुमार बैरवा
8. चियाबीज (साल्विया हिस्पैनिका): एक पौष्टिक पावर हाउस 117
- मोनिका जॉली, वेदा कृष्णन, शैली प्रवीण एवं अर्चना सचदेव
9. माइक्रोग्रीन्स : एक नवीन व पौष्टिक खाद्य विकल्प 120
- ज्ञान प्रकाश मिश्रा, अतुल कुमार, हर्ष कुमार दीक्षित, प्रीति एवं मुरलीधर अस्कि
10. बागवानी फसलों हेतु आधुनिक कृषि उपकरण 125
- रणबीर सिंह एवं राजकुमार
11. कृषि में मौसम पूर्वानुमान एवं मौसम आधारित सलाह 131
- अनन्ता वशिष्ठ
12. बेहतर पोषण और स्वास्थ्य के लिए अपनाएं गृह वाटिका 136
- बृज बिहारी शर्मा, महेश कुमार धाकड़ एवं श्रवण सिंह
13. सूबे सिंह को सूबे में फसल विविधीकरण से लाभ : सफलता की कहानी 141
- प्रतिभा जोशी, जे.पी. एस. डबास, निशी शर्मा, नफीस अहमद, सर्वाशीष चक्रवर्ती एवं पुनीता पी.
14. बायोगैस अपनाने से किसान मालामाल : किसान की जुबानी सफलता की कहानी 143
- प्रतिभा जोशी, जे.पी.एस. डबास, निशी शर्मा, नफीस अहमद, सर्वाशीष चक्रवर्ती एवं पुनीता पी.

राजभाषा खंड...

1. भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान: राजभाषा प्रगति रिपोर्ट 2018-19 151
2. संस्थान में आयोजित हिंदी चेतना मास एवं हिंदी वार्षिकोत्सव संबंधी गतिविधियां 155
3. पुरस्कार व सम्मान 161
4. हिंदी चेतना मास 01 सितंबर - 30 सितंबर, 2018 के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में पुरस्कृत प्रतियोगी 166

तकनीकी खंड...

डॉ. हरि कृष्ण जैन : विश्व प्रसिद्ध कोशिकानुवंशिक विज्ञानी एवं पादप प्रजनक

सुमेरपाल सिंह एवं अशोक कुमार सिंह

आनुवंशिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

प्रारंभिक जीवन और शिक्षा - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने कृषि विज्ञान के क्षेत्र में कई दिग्गजों को जन्म दिया है। डॉ. हरि कृष्ण जैन उनमें से एक हैं। विश्वप्रसिद्ध कोशिकानुवंशिक विज्ञानी एवं पादप प्रजनक डॉ. हरि कृष्ण जैन का जन्म 28 मई 1930 को हरियाणा राज्य के गढ़ी हरसरू (गुडगाँव) में हुआ था। उनकी माता का नाम श्रीमती चमेली देवी एवं पिता का नाम श्री नेमी चंद जैन था। डॉ. जैन का विवाह श्रीमती कुसुम लता के साथ हुआ। उनकी दो बेटियां नीरा एवं रीना हैं। डॉ. हरि कृष्ण जैन ने अपनी स्कूल की शिक्षा रामजस स्कूल, दिल्ली से 1945 में एवं सन् 1949 में दिल्ली विश्वविद्यालय से वनस्पति विज्ञान में स्नातक की उपाधि प्राप्त की। वर्ष 1951 में एसोसिएटशिप के द्वारा वो भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली से जुड़े। बाद में उन्हें रॉयल कमीशन लंदन की स्कॉलरशिप प्राप्त हुई और उन्होंने यूनिवर्सिटी ऑफ़ वेल्स, ऐबरिस्टविद कैंपस से डॉक्टरेट की उपाधि (1952-1955) भी प्राप्त की। डॉक्टरेट की उपाधि प्राप्त करने के बाद वो भारत लौट आए एवं वर्ष 1956 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में कोशिका-विज्ञानी के रूप में अपना कैरियर प्रारंभ किया। डॉ. जैन 1966 से 1976 तक आनुवंशिकी संभाग के अध्यक्ष रहे। आप लगभग 27 वर्षों तक भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली से जुड़े रहे। डॉ. जैन 1977-1983 के दौरान भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के निदेशक रहे एवं वर्ष 1983 में संस्थान के निदेशक पद से सेवानिवृत हुए। वर्ष 1984 में, आप सी.जी. आई.ए.आर. के इंटरनेशनल सर्विस फॉर एग्रीकल्चरल रिसर्च, हेग से जुड़े एवं वहाँ डिप्टी डायरेक्टर जनरल (1984-1992) के रूप में काम किया। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने आपको 2005 में डी. एस.सी. की उपाधि से सम्मानित किया। सेंट्रल एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी इम्फाल का कुलपति (2012 तक) बनने से पूर्व डॉ. जैन ने अपना शैक्षणिक कार्य एम.पी.यू.ए.टी. उदयपुर में जारी रखा।

पेशेवर उपलब्धियां - लिलियम जीनस में मिओटिक सेल डिवीज़न के द्वारा उन्होंने क्रोमोजोम कन्डेंसेशन एवं नूक्लिओलर सिंथेसिस में संबंध पाया। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में, डॉ. जैन ने डेलफिनियम जीनस में जेनेटिक रेकॉम्बिनेशन की साईटोलॉजिकल मैकेनिज्म पर काम किया। उनके कार्य ने इंटरक्रोमोसोमल लेवल पर कंट्रोल के लिए प्रोटोकॉल तैयार करने में योगदान दिया। बाद में टमाटर एवं ड्रोसोफिला पर कार्य करते हुए केमिकल मूटाजन स्पेसिफीसिटी की खोज करने में सहायता की। वे भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के गेहूं सुधार प्रोग्राम के लीडर रहे। पादप कोशिकाओं में राइबोसोमल सिंथेसिस पर भी उन्होंने शोध कार्य किया। डॉ. जैन ने नेशनल मल्टी-लिनिअल कॉम्प्लेस की अवधारणा का भी विकास किया। डॉ. जैन एक उत्तम शोधकर्ता होने के साथ-साथ एक अच्छे लेखक भी थे। उन्होंने प्लांट ब्रीडिंग-मेंडेलियन टू मॉलिक्यूलर अप्प्रोचेज़, जेनेटिक्स: प्रिंसिपल्स, कॉन्सेप्ट्स एंड इम्प्लिकेशन्स एवं ग्रीन रेवोलूशन: हिस्ट्री, इम्पैक्ट एंड फ्यूचर आदि पुस्तकें लिखी। आपने 1982-83 के दौरान साइंटिफिक एडवाइजरी समिति के सदस्य के रूप में भारत सरकार को एवं उत्तर प्रदेश स्टेट प्लानिंग कमीशन (1978-1980) को अपनी सेवा प्रदान की। वर्ष

1980-83 के दौरान उन्होंने भाभा एटॉमिक रिसर्च सेंटर की खाद्य कृषि समिति एवं यूनेस्को के मैन एंड बायोस्फियर प्रोग्राम (1978-83) के अध्यक्ष के रूप में कार्य किया। वे 1982-83 के दौरान विज्ञान एवं तकनीकी विभाग की जैव प्रौद्योगिकी सलाहकार समिति के सदस्य रहे। डॉ. जैन को 1993 में सी.एस.आई.आर. के एमेरिटस साइंटिस्ट के लिए चुना गया। आप 1979 से 1981 तक इंडियन नेशनल साइंस अकादमी की कौंसिल के सदस्य रहे एवं 2009-2011 के दौरान एग्रीकल्चरल साइंस की नेशनल अकादमी के उपाध्यक्ष रहे।

पुरस्कार और सम्मान - डॉ. जैन को जैविक विज्ञान के क्षेत्र में उनके योगदान के लिए, विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी के लिए वैज्ञानिक तथा औद्योगिक अनुसंधान परिषद् के सर्वोच्च पुरस्कार 'शांति स्वरुप भटनागर प्राइज' से 1966 में सम्मानित किया गया। अगले ही वर्ष यानि 1967 में, भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद् द्वारा डॉ. जैन को रफ़ी अहमद किदवई अवार्ड से सम्मानित किया गया। वर्ष 1973 में डॉ. जैन को जवाहरलाल नेहरू फ़ेलोशिप के लिए चुना गया। डॉ. जैन को वर्ष 1981 में पद्मश्री एवं 1982 में बोरलॉग अवार्ड से सम्मानित किया गया। आपको ओम प्रकाश भसीन अवार्ड 1986 एवं डॉ. बी .पी. पाल. अवार्ड 1999 में प्राप्त हुआ। डॉ. जैन को इंडियन साइंस कांग्रेस एसोसिएशन के बी.पी.पाल. मेमोरियल अवार्ड से 2004 में सम्मानित किया गया।

फैलोशिप- वर्ष 1974 में डॉ. जैन, इंडियन नेशनल साइंस अकादमी एवं 1975 में इंडियन अकादमी ऑफ़ साइंसेज के फेलो बने। डॉ. जैन नेशनल अकादमी ऑफ़ साइंसेज, इंडिया के फेलो 1988 में एवं नेशनल अकादमी ऑफ़ एग्रीकल्चरल साइंसेज के फेलो 1991 में बने। वर्ष 2005 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान ने डॉ. जैन को डॉक्टर ऑफ़ साइंस की उपाधि से सम्मानित किया। सेंट्रल एग्रीकल्चरल यूनिवर्सिटी, इम्फाल जिसके वो कुलपति भी थे, ने डॉ. जैन के नाम पर एक वार्षिक पुरस्कार डॉ. एच.के. जैन सी.ए.यू. अवार्ड वर्ष 2015 से प्रारंभ किया ताकि कृषि अनुसंधान के क्षेत्र में सर्वोत्तम कार्य करने वाले शोध-कर्ताओं को प्रोत्साहित एवं प्रेरित किया जा सके।

प्रकाशन- डॉ. जैन बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे। आप सर्वोच्च कोटि के शोधकर्ता, शिक्षक, लेखक एवं नीति निर्माता थे। डॉ. जैन ने आनुवंशिकी, पादप प्रजनन एवं कोशिकानुवंशिकी विज्ञान के क्षेत्र में ज्ञान की अविरल गंगा को कई दशकों तक बहाया। आपने आनुवंशिकी, पादप प्रजनन, एवं कोशिकानुवंशिकी विज्ञान से संबंधित पाँच पुस्तकें एवं सत्तावन से अधिक शोधपत्र लिखे। हर वैज्ञानिक का सपना होता है कि उसका शोध कार्य नेचर'पत्रिका में प्रकाशित हो। आपका वैज्ञानिक दृष्टिकोण इतनी उच्च कोटि का था कि आपने नेचर' पत्रिका में एक नहीं दो नहीं छह लेख प्रकाशित किए। आपने एक शोधपत्र साइंस पत्रिका में, चार शोधपत्र हेरीडिटी में एवं एक शोधपत्र जेनेटिक्स पत्रिका में प्रकाशित किया। कृषि विज्ञान के क्षेत्र में यह मुकाम बहुत कम वैज्ञानिकों को प्राप्त होता है।

आप बारह वर्षों तक आनुवंशिकी संभाग के अध्यक्ष रहे। संभाग आपके बहुमूल्य एवं अविस्मरणीय योगदान का हमेशा आभारी रहेगा। संभाग के सभी अधिकारियों एवं कर्मचारियों को आपकी उपलब्धियों पर गर्व है और आप हमेशा हमारे प्रेरणास्रोत रहेंगे। संस्थान के निदेशक के रूप में आपके द्वारा किए गए कार्यों के लिए संस्थान आपका ऋणी है। संस्थान के छात्रों, वैज्ञानिकों, शिक्षकों, प्रसार-कर्ताओं एवं प्रशासकों के लिए आप हमेशा एक प्रेरणास्रोत रहेंगे। कृषि विज्ञान के क्षेत्र में चमकता हुआ यह सितारा आठ अप्रैल 2019 को नवासी वर्ष की आयु में पंचतत्व में विलीन हो गया। आपका चले जाना, आनुवंशिकी एवं पादप प्रजनन के क्षेत्र में एक अपूर्णीय क्षति है। पूसा संस्थान परिवार, आपको भावभीनी श्रद्धांजली अर्पित करते हुए आपके योगदान के लिए आपका धन्यवाद करता है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली जो कि सही मायने में आपकी कर्मभूमि रहा है, के सभी छात्र, वैज्ञानिक, शिक्षक एवं कर्मचारी आपके योगदान के लिए आपको शत-शत नमन करते हैं।

गेहूं और धान की फसल में नाइट्रोजन का प्रभाव, कमी के लक्षण एवं उनको दूर करने के उपाय

हरि सिंह मीना[1], संदीप अडवी[1], जगदीशन बी[1], बिरेन्द्र कुमार पधान[1], दलवीर सिंह[1], शैलेन्द्र कुमार झा[2] एवं लक्ष्मी सती[1]

[1]पादप कार्यिकी संभाग, [2]आनुवांशिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

पौधों के समुचित विकास के लिए 17 पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है। इन सभी आवश्यक पोषक तत्वों में से कार्बन, हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन, हवा और पानी से प्राप्त कर लेते हैं तथा बचे हुए 14 पोषक तत्वों को पौधे मृदा से प्राप्त करते हैं। इन 14 पोषक तत्वों में से पौधे को नाइट्रोजन, फॉस्फोरस, पोटाश, गंधक, कैल्शियम, मैग्नीशियम की अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है इसलिए इन पोषक तत्वों को मुख्य पोषक तत्व भी कहते हैं। इन पोषक तत्वों के अतिरिक्त 8 अन्य पोषक तत्व, कॉपर, मैंगनीज, जिंक, बोरॉन, क्लोरीन, मोलिब्डेनम, आयरन और निकिल है, जिन्हें सूक्ष्म पोषक तत्व कहा जाता है। ये पोषक तत्व भी पौधे की उचित वृद्धि एवं विकास में उतने ही महत्वपूर्ण हैं जितने की मुख्य पोषक तत्व होते हैं।

आधुनिक कृषि में नाइट्रोजन सबसे महत्वपूर्ण पोषक तत्व है जिससे फसल की पैदावार में नाटकीय रूप से वृद्धि होती है। ज्यादातर फसलें नाइट्रोजन का उपयोग नाइट्रेट और अमोनियम के रूप में करती हैं। यह फसलों की उचित वृद्धि और विकास के लिए सबसे मुख्य पोषक तत्व है, इसकी आवश्यकता पौधों को अधिक मात्रा (1 ग्राम प्रति किग्रा. शुष्क भार) में होने के कारण, यह फसलों की जैव-रासायनिक और शारीरिक क्रियाओं में महत्वपूर्ण भूमिका निभाकर इसकी उपज और गुणवत्ता को बढ़ाता है।

मृदा परीक्षणों से यह ज्ञात हुआ है कि देश के उत्तर पश्चिम राज्यों के अलावा अधिकांश राज्यों में नाइट्रोजन की कमी वाले क्षेत्र पाये गये हैं। बहुत से प्रयोगों से यह पता चला है कि जिन मृदाओं में नाइट्रोजन की कमी पाई जाती है वहां पर फॉस्फोरस एवं पोटाश उर्वरकों से तब तक पूरा लाभ नहीं लिया जा सकता जब तक नाइट्रोजन की कमी को पूरी तरह ठीक नहीं कर दिया जाये। पौधों को नाइट्रोजन के अतिरिक्त अन्य कई मुख्य पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, परंतु नाइट्रोजन के अभाव में पौधे अपना जीवन चक्र पूरा करने में असमर्थ होते हैं। अतः गेहूं एवं धान की फसल में नाइट्रोजन का प्रभाव, कमी के लक्षण एवं उनको दूर करने के उपाय इस लेख में बताए गए हैं।

पौधों में नाइट्रोजन की भूमिका

- नाइट्रोजन पादप संरचनाओं में सभी अमीनो अम्ल का एक आवश्यक तत्व है जो पौधों में प्रोटीन निर्माण के साथ-साथ महत्वपूर्ण ऊतकों, कोशिका झिल्ली और क्लोरोफिल के विकास में सहायक होता है।
- नाइट्रोजन, न्यूक्लिक अम्ल का भी एक प्रमुख घटक है जो डीएनए के द्वारा आनुवंशिकी लक्षणों को एक संतति से दूसरी संतति में स्थानांतरित करने के साथ-साथ आनुवंशिकी कोडों को केंद्रक में संगृहीत करने में सहायता प्रदान करता है।
- क्लोरोफिल प्रकाश संश्लेषण द्वारा कार्बोहाइड्रेट निर्माण के लिए आवश्यक कोशिकांग है और इसके घटक पौधों में पत्तियों के हरे रंग के निर्माण में सहायक होते हैं। नाइट्रोजन इसमें एक महत्वपूर्ण घटक है जो इस प्रकार की क्रियाओं को बढ़ाने में सहायक होता है।
- नाइट्रोजन पौधों में प्रकाश संश्लेषण को मुख्य रूप से प्रभावित करता है। जिन पौधों को उचित मात्रा में नाइट्रोजन उपलब्ध होता है, वे अधिक मात्रा में प्रकाश संश्लेषण करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप पौधे उचित वृद्धि और विकास करने लगते हैं।

गेहूं व धान की फसल में नाइट्रोजन की कमी के लक्षण

- नाइट्रोजन की कमी के प्रारंभिक लक्षण पुरानी पत्तियों पर दिखाई देते हैं।
- पत्तियों में पीलापन (क्लोरोफिल विघटन के कारण) होने लगता है।
- पौधों की वृद्धि धीमी, कम पत्तियां एवं पौधे छोटे रह जाते हैं।
- कम प्रोटीन का निर्माण एवं फसल का शीघ्र पंक्वन होने लगता है।
- कम कल्ले (टिलर) होने के कारण पैदावार में भारी कमी आती है।

गेहूं व धान की फसल में नाइट्रोजन की कमी के मुख्य कारण

नाइट्रोजन की कमी पर किये गए विभिन्न शोधों से यह पता चला है कि फसलों में नाइट्रोजन की कमी का सबसे बड़ा कारण नाइट्रोजन के अनुचित और गैर-विवेकपूर्ण तरीके से प्रयोग करने की वजह से है, जैसे कि अनुचित समय पर नाइट्रोजन के फसलों में आवेदन की विधियां, फसल की कटाई के दौरान नाइट्रोजन का वाष्पीकरण, खेत में अधिक मात्रा में नाइट्रोजन देने से पानी के साथ लीचिंग द्वारा मृदा की निचली सतह में चले जाने से और विनाइट्रीकरण क्रिया के द्वारा मुख्यत: नाइट्रोजन की फसल में कमी आने लगती है और इसका मुख्य कारण जागरूकता की कमी है।

गेहूं व धान की फसल में नाइट्रोजन की कमी को दूर करने के उपाय

विश्व में पिछले 50 वर्षों में नाइट्रोजन उर्वरक के उपयोग की मात्रा में लगभग 10 गुना की वृद्धि हुई है और यह भविष्यवाणी की गई है कि इस सदी में भी यही प्रवृत्ति जारी रहेगी। वर्ष 2000 में लगभग 87 मिलियन टन नाइट्रोजन का उपयोग किया गया था जो 2050 में बढकर लगभग 236 मिलियन टन होने का अनुमान है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए निम्नलिखित कुछ उपायों के द्वारा फसलों में नाइट्रोजन उपयोग दक्षता को बढ़ा कर कम लागत पर अधिक लाभ कमाया जा सकता है।

- उच्च नाइट्रोजन उपयोग दक्षता को नियंत्रित करने वाले लक्षणों के विच्छेदन एवं वाहक जीन की पहचान के साथ-साथ कम नाइट्रोजन की उपलब्धता पर अधिक उत्पादन देने वाली किस्मों का विकास करना चाहिए।
- फसल को उसकी मांग के अनुसार ही नाइट्रोजन की मात्रा देनी चाहिए क्योंकि अधिक मात्रा देने पर यह पानी के साथ मिलकर मृदा की निचली सतह में चली जाती है जिसके कारण पौधे इसका उपयोग नहीं कर पाते हैं।
- फसल में नाइट्रोजन को सही तरीके और सही समय पर देना चाहिए।
- फसल की जिन किस्मों को कम मात्रा में नाइट्रोजन की आवश्यकता हो उन्हें कभी भी अधिक मात्रा में नाइट्रोजन नहीं देना चाहिए।

- पौधों की पंक्तियों एवं पौधे से पौधे के बीच हमेशा उचित दूरी होनी चाहिए। ऐसा करने से प्रत्येक पौधे को उचित मात्रा में नाइट्रोजन उपलब्ध हो पाती है।
- जल निकास का उचित प्रबंधन करना चाहिए क्योंकि खेत में पानी भरे रहने के कारण नाइट्रोजन पानी के साथ मिलकर मृदा की निचली सतह में चली जाती है। जिसके परिणामस्वरूप पौधे इस नाइट्रोजन की मात्रा को उपयोग में नहीं ले पाते हैं।
- अनाज वाली फसलों की बुआई के बाद अगले वर्ष दलहनी फसलों को उगाना चाहिये क्योंकि दलहनी फसलें वायुमंडलीय नाइट्रोजन का यौगिकीकरण करती है जिसके परिणामस्वरूप मृदा में नाइट्रोजन की मात्रा में वृद्धि होती है।
- समय-समय पर खरपतवार नियंत्रण करते रहना चाहिए क्योंकि खरपतवार फसल के साथ नाइट्रोजन के लिए प्रतिस्पर्धा करते हैं।
- मृदा की निचली सतह में एकत्रित नाइट्रोजन की मात्रा को गहरे जड़ तंत्र वाली फसलें आसानी से उपयोग कर लेती हैं इसलिए उथले जड़तंत्र वाली फसलों के बाद गहरे जड़तंत्र वाली फसलों को उगाना चाहिए।

गेहूं एवं धान की फसल के लिए नाइट्रोजन की आवश्यक मात्रा

नाइट्रोजन की मात्रा मिट्टी की जांच के आधार पर ही देनी चाहिए जैसे कि धान की बौनी किस्मों के लिए 120 किग्रा., बासमती किस्मों के लिए 100 से 120 किग्रा. और संकर धान के लिए 130 से 140 किग्रा. प्रति हेक्टेयर की दर से देना चाहिए। गेहूं की अच्छी उपज प्राप्त करने के लिए समय पर बुआई किये और सिंचित क्षेत्र के लिए नाइट्रोजन की 100 से 120 किग्रा., देसी किस्मों में 60 किग्रा. और असिंचित गेहूं की देसी किस्मों में 40 किग्रा./हेक्टेयर दर से नाइट्रोजन देनी चाहिए।

खड़ी फसल में नाइट्रोजन की कमी का चार्ट विधि द्वारा निर्धारण

पत्तियों में उपस्थित नाइट्रोजन की मात्रा का सीधा संबंध पौधे की प्रकाश संश्लेषण और जैविक उत्पाद से होता है। यह फसल की वृद्धि अवस्था में नाइट्रोजन मांग का एक संवेदनशील सूचक होता है। प्रयोगशाला प्रक्रिया द्वारा पत्तियों में उपस्थित नाइट्रोजन की मात्रा का परीक्षण अधिक समय लेने वाली और महंगी प्रक्रिया है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए वैज्ञानिकों ने खड़ी फसल में नाइट्रोजन परीक्षण के लिए एक पत्ती चार्ट विधि का विकास किया है। यह एक ऐसी आसान विधि है जिसके द्वारा किसान भी फसल की पत्तियों में उपस्थित रंग का इस चार्ट द्वारा तुलना करके फसल में नाइट्रोजन की मांग का पता लगा सकते हैं।

पत्ती चार्ट विधी

पत्ती चार्ट विधि फसल में नाइट्रोजन की कमी का पता लगाने का एक सरल साधन है जिसमें 1-6 अलग-अलग रंग की पत्तियों का एक समूह होता है जिनको 1-6 नंबर तक रंग के आधार पर वर्गीकृत किया गया है। इसमें 1 नंबर की पत्ती का रंग पीला एवं 2 नंबर की पत्ती का रंग हल्का पीला और इसी क्रम में 6 नंबर की पत्ती का रंग गहरा हरा होता है, क्योंकि पत्ती का रंग सीधे तौर से नाइट्रोजन की मात्रा पर निर्भर करता है जो पत्ती जितनी गहरी हरी होगी उसे उतनी ही कम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है। इन्हीं रंगों के आधार पर फसल में नाइट्रोजन की मांग का पता लगाते हैं। जैसे कि 1 नंबर की पत्ती का रंग सबसे ज्यादा पीला होने के कारण इसे सबसे ज्यादा नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है और 6 नंबर की पत्ती का रंग गहरा हरा होने के कारण इसे सबसे कम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है।

गेहूं एवं धान की फसल में पत्ती चार्ट विधि का प्रयोग

- पत्ती चार्ट विधि द्वारा नाइट्रोजन की मांग का पता लगाने के लिए बुआई किये हुए धान में 21वें

दिन और रोपाई किये गए धान में 14वें दिन बाद खेत में जहां पर एक समान पौधे हों वहाँ से 10 पौधों का चयन करना चाहिए।

- इन पौधों की सबसे ऊपरी स्वस्थ एवं पूरी तरह खुली हुई पत्ती के बीच वाले हिस्से को पत्ती चार्ट से तुलना करनी चाहिए तथा पत्ती को इस प्रकार से पकड़ना चाहिए कि यह टूटे नहीं, सुबह के 8 से 10 बजे के बीच में ही रीडिंग लेनी चाहिए और कोशिश करें कि रीडिंग के दौरान पत्ती चार्ट सूर्य की रोशनी के संपर्क में न आये। पत्ती चार्ट द्वारा पहली और आखिरी रीडिंग लेने वाला व्यक्ति एक ही होना चाहिए।
- 110 से 130 दिन अवधि वाले धान की फसल के लिए पत्ती चार्ट की रीडिंग प्रत्येक 7 दिन के अंतराल और 130 दिन से अधिक अवधि वाले धान में अलग-अलग 10 पत्तियों के समूह से 10 दिन के अंतराल पर रीडिंग लेनी चाहिए।
- अगर 10 में से 6 पत्तियों का रंग पत्ती चार्ट के रंग से कम हो तो निम्नानुसार फसल में नाइट्रोजन की मात्रा देनी चाहिए।
- खरीफ बासमती धान में अगर पत्ती चार्ट की रीडिंग 3 है तो लगभग 23 किग्रा. नाइट्रोजन/हेक्टेयर और 1 बोरा यूरिया/हेक्टेयर में देना चाहिए।
- बुआई किये हुए धान में अगर पत्ती चार्ट की रीडिंग 2 आए तो लगभग 35 किग्रा. नाइट्रोजन/हेक्टेयर और 1.5 बोरा यूरिया/हेक्टेयर देना चाहिए।

धान एवं गेहूं की फसल में नाइट्रोजन उर्वरक देने का सही तरीका और समय

बीज एवं उर्वरक एक-साथ देने की मशीन

धान की फसल में नाइट्रोजन की पहली तिहाई मात्रा का प्रयोग रोपाई के 5 से 8 दिन बाद करना चाहिए जब पौधे अच्छी तरह से जड़ पकड़ लें तथा दूसरी एक तिहाई नाइट्रोजन की मात्रा कल्ले फूटते समय (रोपाई के 25 से 30 दिन बाद) तथा शेष एक तिहाई हिस्सा, फूल आने से पहले (रोपाई के 50 से 60 दिन बाद) खड़ी फसल में छिड़काव विधि से करना चाहिए। गेहूं की फसल में नाइट्रोजन की मात्रा को 3 खुराक में देना चाहिए, आधी मात्रा बीज बोने से पहले सीड ड्रिल द्वारा जमीन में 10 से.मी. की गहराई पर डालना चाहिए या बुआई के समय डबल फोर फडक द्वारा बीज से 5 से.मी. नीचे डालना चाहिए एवं बची हुई मात्रा को बराबर दो भागों में बांटकर देना चाहिए। दूसरी खुराक फसल की बुआई के 21 से 25 दिन बाद और तीसरी खुराक फसल की बुआई के 65 दिन बाद खेत में डालनी चाहिए। अगर सिंचाई की व्यवस्था कम हो तो नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा पहली सिंचाई के साथ देनी चाहिए। असिंचित खेती में उर्वरक की संपूर्ण मात्रा पहली सिंचाई के साथ छिड़काव विधी से देनी चाहिए। दाना बनते समय यूरिया के 2.5 प्रतिशत घोल का छिड़काव करने से दाने का विकास अच्छा होता है।

कोई लक्ष्य मनुष्य के साहस से बड़ा नहीं, हारा वही जो लड़ा नहीं

- स्वामी विवेकानंद

वर्षा पोषित कृषि में जल उत्पादकता एवं आय बढ़ाने वाली तकनीक: मक्का सह मूँग की अंतरवर्तीय खेती

रणबीर सिंह एवं अनिल कुमार मिश्र

फोसू एवं जल प्रौद्योगिकी केंद्र

भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली 110012

वर्षा पोषित अथवा बारानी कृषि क्षेत्र देश के कुल कृषि क्षेत्रफल के लगभग 65 प्रतिशत भू-भाग पर फैला हुआ है। इन क्षेत्रों में कृषि उत्पादन पूर्ण रूप से मानसूनी एवं गैर मानसूनी वर्षा पर निर्भर करता है। वर्तमान में बारानी क्षेत्रों का कुल खाद्यान्न उत्पादन में लगभग 42 प्रतिशत योगदान है। इन क्षेत्रों में वर्षा ऋतु में मुख्य तौर पर ज्वार, बाजरा, मक्का, दलहनी, मूँगफली, अरहर, तिल, कपास और सोयाबीन इत्यादि फसलों को उगाया जाता है। परंतु किसानों द्वारा इन फसलों को एकल फसल पद्धति में लगाने के कारण सीमित वर्षा जल का अधिकतम उपयोग नहीं हो पाता है एवं शुद्ध लाभ कम प्राप्त होता है। वर्षा आधारित क्षेत्र ढलान वाली भूमि सतह, मृदा में पोषक तत्वों की कमी, कमजोर मृदा संरचना एवं अधिक तापमान आदि समस्याओं से ग्रसित है। इन समस्याओं के समाधान एवं किसानों की आय को दोगुना करने के लिए भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान में स्थापित जल प्रौद्योगिकी केंद्र में वर्ष 2017 के अंतर्गत खरीफ मौसम में मक्का के मूँग की अंतरवर्तीय खेती पर प्रयोगात्मक परीक्षण किया था। क्योंकि शुष्क एवं अर्ध शुष्क क्षेत्रों के ढालनुमा व मृदा क्षरण सहिष्णु खेतों के लिए मक्का व मूँग की अंत: सस्य खेती न केवल किसानों के लिए अधिक आय प्रदान करने वाली है बल्कि प्राकृतिक संसाधनों जैसेः भू-क्षरण में कमी होने व वर्षा जल के संरक्षण में भी एक महत्वपूर्ण भूमिका निभा सकती है।

चित्र 1. मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती से मृदा एवं जल का संरक्षण

यह तकनीक जहां एक ओर फसल विविधीकरण द्वारा किसान परिवारों की प्रोटीन की उपलब्धता को बढ़ाती है वहीं दूसरी ओर खाद्य सुरक्षा को सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन भी करती है। इसके अतिरिक्त पंक्तियों के बीच अधिक दूरी होने के कारण मक्का क्षरण अनुमोदित फसलों की श्रेणी में आती है। विभिन्न अनुसंधानों के परिणामों में यह पाया गया है कि यदि मक्का को 2 से 4 प्रतिशत ढाल वाले खेतों में उगाया जाता है तो इससे लगभग 10 से 12 टन उपजाऊ मृदा प्रति हेक्टेयर, मृदा क्षरण द्वारा बहकर खेतों से बाहर चली जाती है। यह मृदा के साथ क्रमशः 24-30, 1-2, 18-20 किग्रा. प्रति हेक्टेयर नाइट्रोजन, फॉस्फोरस व पोटाश भी बहाकर ले जाती है, जिससे किसानों को प्रत्यक्ष व अप्रत्यक्ष दोनों प्रकार के नुकसान होते हैं। मृदा एवं जल संरक्षण के सस्य उपायों में से अंत: सस्यक खेती एक महत्वपूर्ण फलदायक व व्यवहारिक उपाय है। इस कारण वर्ष 2017 में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली-12 के जल प्रौद्योगिकी केंद्र में वैज्ञानिकों ने अपने अनुसंधान प्रक्षेत्र पर किए गए अनुसंधान कार्यों व प्रदर्शनों के शोध परिणामों से यह निष्कर्ष निकाला है कि यदि ढाल वाले खेतों में मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती करें तो यह न केवल लाभदायक सिद्ध होगी बल्कि मृदा एवं जल का संरक्षण करने में भी महत्वपूर्ण सिद्ध हो सकती है।

मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती को अपनाये जाने के कारण

- मक्का की फसल विरल, चौड़े पत्तोंयुक्त तथा अधिक विस्तृत कैनोपी के कारण वर्षा जल की बूँदों की भू-क्षरण क्षमता को कम कर देती है तथा मूँग की फसल घनी होने से अधिक भू-क्षरण करने के कारण, भू-क्षरण रोधी फसल का कार्य करती है और भूमि को बाँध कर रख सकती है।
- जहां मक्का की जड़ें भूमि से 15 से 30 सेमी. की नमी का प्रयोग करती हैं, वहाँ पर मूँग की जड़ें 30 से 50 सेमी. गहराई तक नमी का प्रयोग करते हुए सीमित मात्रा में उपलब्ध जल की उत्पादकता बढ़ाती हैं।
- मक्का व मूँग की खेती एक ही खेत में, एक ही मौसम में एवं एक ही समय में की जा सकती है।
- मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती में प्रति इकाई क्षेत्र उत्पादन में कम लागत एवं आमदनी अधिक प्राप्त होती है।
- धान्य फसलों के साथ दलहनी फसलों को उगाकर मृदा स्वास्थ्य को बनाये रख सकते हैं।
- मक्का व मूँग की अंत: सस्य खेती में एक सीधी ऊपर की ओर बढ़ने वाली तो दूसरी फैलने वाली फसल उगाने के कारण खरपतवारों का स्वतः ही नियंत्रण हो जाता है।
- तेज वर्षा एवं तेज हवाओं के कारण होने वाले मृदा क्षरण को भी रोका जा सकता है।
- मक्का व मूँग की अंतः फसलोत्पादन को अपनाने से श्रम, पूंजी, जल, उर्वरक इत्यादि को बचाकर लागत को कम किया जा सकता है।

चित्र 2. मानव द्वारा मेंड़ पर मक्का की बुआई

- मक्का व मूँग फसलों की कृषि क्रियाएं लगभग समान है।

मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती के लाभ

मूँग एक दलहनी फसल होने के साथ-साथ भू-क्षरण प्रतिरोधी भी है, क्योंकि यह बुआई के 40-45 दिनों में ही 80-100 प्रतिशत तक फसल आवरण या कैनोपी बनाकर मृदा की सतह को ढक लेती है। इस प्रकार यह वर्षा की तेज बौछारों को सीधे मृदा पर पड़ने से रोकती है, जिससे बौछार (स्पलैश) क्षरण पर अंकुश लगता है। साथ ही साथ इसके तने भी वर्षा जल को तीव्र वेग से बहने से रोकने में अवरोधक का कार्य करते हैं। दलहनी फसल होने के साथ-साथ यह न केवल मक्का की फसल को नाइट्रोजन उपलब्ध कराती है बल्कि आगामी गेहूं की फसल की नाइट्रोजन की मात्रा को भी कम करती है। इसके अतिरिक्त मक्का की फसल में खरपतवार की बढ़वार को दबाकर निराई-गुड़ाई के खर्चे में भी कमी लाती है।

चित्र 3. अंकुरण पूर्व पेंडिमेथिलीन का प्रयोग

अनुसंधान परीक्षण के अंतर्गत उपयुक्त सांख्यिकी अभिकल्पना एस.पी.डी. का प्रयोग किया था। जिसमें प्रत्येक किस्म हेतु 4 उपचारों एवं 3 पुनरावृत्ति के साथ 12 संयोजन को रखा गया था। उक्त परीक्षण में मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती करने के लिए मानसून शुरु होने की पहली वर्षा के बाद उपयुक्त नमी पर जुलाई में खेत तैयार करके ट्रैक्टर चालित रिज मेकर से पहले मेंड़ तैयार की गयी थी। फिर मक्का की जैसे; एच.एम. 8 व डी.एच.एम. 117 संकर किस्मों की दिनांक 13/7/2017

को मानव द्वारा बुआई की गयी थी। दिनांक 14/7/2017 को बुआई के बाद एवं अंकुरण पूर्व ट्रैक्टर चालित पावर स्प्रेयर यंत्र से खेत की ऊपरी सतह पर पैंडिमेथिलीन नामक खपतवारनाशक दवा का छिड़काव किया गया था ताकि खेत खरपतवार मुक्त रहे। मक्का की बुआई के 10 दिनों बाद मूँग की पूसा 672 एवं पूसा रतना किस्मों के फफूंदनाशक दवा थीरम से उपचारित बीज को दिनांक 23/7/2017 में बुआई की गई थी।

प्रयोग में पौधों की उचित संख्या रखने के लिए मक्का की बुआई के 20 दिनों बाद पौधे से पौधे की दूरी 20 सेमी. रखते हुए अतिरिक्त पौधों को निकाल दिया गया था। प्रयोग में प्रत्येक किस्म की तीन पुनरावृत्ति एवं उपचारों की संख्या चार रखी गयी थी तथा परीक्षण खंड का आकार 4 × 2 वर्ग मीटर रखा गया था। प्रत्येक प्लॉट में मक्का के दानों का भार 1.15 से 2.79 किग्रा. एवं मूँग के दानों का भार 0.400 से 0.650 कि.ग्रा प्राप्त हुआ था। फसल की बुआई के 32 दिनों बाद नाइट्रोजन की आधी मात्रा दी गयी थी तथा अन्य सस्य प्रक्रियाएं सारणी 1 में दर्शायी गई हैं।

चित्र 4. मक्का सह मूँग अंतरवर्तीय खेत की निराई-गुड़ाई

चित्र 5. क व खः मक्का व मूँग की वृद्धि अवस्था

सारणी 1. मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती की सस्य प्रक्रियाओं का अध्ययन

क्र.सं.	सस्य प्रक्रियाएं	विवरण
1.	बुआई का समय	मानसून के प्रारंभ होने पर (15 जुलाई के आस-पास)
2.	बुआई विधि अ. मक्का ब. मूँग	-- पंक्ति से पंक्ति की दूरीः 90 सेमी. एवं पौधे से पौधे की दूरीः 20 सेमी. मक्का की दो पंक्तियों के बीच दो पंक्तियों एवं पौधे से पौधे की दूरी: 20 सेमी.
3.	पोषक तत्व प्रबंधन	50 किग्रा. नाइट्रोजन, 60 किग्रा. फॉस्फोरस व 40 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर की दर से बुआई एवं 32 दिनों बाद पंक्तियों में दी गई थी। उर्वरक को पौधों की पंक्ति से लगभग 15 सेमी. बगल में डाला गया।
4.	खरपतवार प्रबंधन	पैंडिमेथिलीन की अनुशंसित मात्रा बुआई के बाद एवं अंकुरण से पूर्व छिड़काव के रूप में दी गई थी।
5.	मूँग की फलियों की तुड़ाई	बुआई के 72 से 78 दिन बाद से
6.	मक्का दाना उपज (किग्रा./है.)	1764
7.	मूँग दाना उपज (किग्रा./है.)	561
8.	मक्का कड़वी उपज (किग्रा./है.)	3245
9.	मूँग कड़वी उपज (किग्रा./है.)	765

सारणी 2. मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती की लागत का विस्तृत विवरण

क्र.सं.	सस्य प्रक्रियाएं	खर्चों का विवरण (रुपये/है.)	सकल खर्च (रुपये/है.)
1.	खेत की तैयारी	4500	4500
2.	बीज अ. मक्का (5 किग्रा./है) ब. मूँग (5 किग्रा./है)	-- 5× 400 5× 120	-- 2000 600
3.	खाद एवं उर्वरक (50 किग्रा. नाइट्रोजन, 60 किग्रा. फॉस्फोरस व 40 किग्रा. पोटाश)	--	3500
4.	बुआई प्रति हेक्टेयर	1500	1500
5.	खरपतवार प्रबंधन (पेंडिमेथिलीन 1.5 किग्रा./है.)	प्रति ली./हेक्टेयर एवं श्रमिक खर्च	1100
6.	मूँग फलियों की तुड़ाई (2 तुड़ाई, 5 पुरुष)	10 × 300	3000
7.	मक्का तुड़ाई (2 पुरुष द्वारा)	2 × 300	600
8.	मक्का कड़वी की कटाई (3 पुरुष)	3 × 300	900
9.	भूमि का किराया 3 माह		4000
10.	फसल की रखवाली 5 पुरुष	5 × 300	1500
11.	सकल लागत (रुपये हेक्टेयर)		23200

सारणी 3. मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती की आर्थिकी का विवरण

क्र.सं.	**विशिष्ट**	**रुपये प्रति हेक्टेयर**
प्रत्यक्ष लाभ		
1.	मक्का दाना से आय	1764 किग्रा. × 10=17640
2.	मक्का कडवी से आय	3245 किग्रा. × 2= 6490
3.	मूँग दाना से आय	561 किग्रा. × 40=22440
4.	कुल प्रत्यक्ष लाभ	46570
अप्रत्यक्ष लाभ		
1.	मक्का में निराई-गुड़ाई की बचत	1500
2.	पादप पोषक तत्वों की मृदा क्षरण द्वारा हानि से बचाव	450
3.	आगामी गेहूं की फसल में 25 प्रतिशत नाइट्रोजन उर्वरक की बचत	300
4.	आगामी गेहूं की फसल के लिए उचित मृदा नमी का सिंचाई जल के रूप में संरक्षण	400
5.	कुल अप्रत्यक्ष लाभ	2760

	सकल कुल लाभ प्रति हेक्टेयर	46570
	कुल लागत प्रति हेक्टेयर	23200
	शुद्ध लाभ प्रति हेक्टेयर	23370

मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती की लागत, आय व शुद्ध लाभ का विवरण सारणी 2 व 3 में दिया गया है। इन सारणियों का अध्ययन करने से पता चलता है कि यदि किसान उपर्युक्त वर्णित तकनीक द्वारा मक्का व मूँग की अंतरवर्तीय खेती करें तो, उन्हें शुद्ध लाभ 23,370 रुपये प्रति हेक्टेयर प्राप्त होता है, जोकि अकेले मक्का फसल से कहीं अधिक है। मक्का की फसल में पंक्तियों के बीच में अधिक दूरी होने के कारण तीव्र वर्षा की स्थिति में मृदा व जल का अपवाह हो जाता है। मक्का की दो पंक्तियों के बीच यदि किसान, उपर्युक्त बताई हुई विधि से मूँग की दो पंक्ति उगाएं, तो उपजाऊ भूमि व कीमती वर्षा जल का खेत में ही संग्रहण कर सकते हैं, जिससे प्राकृतिक संसाधन जैसे; मृदा एवं जल आदि का संरक्षण भी संभव होगा। इसके साथ ही साथ किसान भाई अधिक से अधिक लाभ प्राप्त कर सकते हैं। अंत में संक्षेप में कह सकते हैं कि वर्षा आधारित क्षेत्रों में खेती में बढ़ती लागत एवं मृदा के स्वास्थ्य को ध्यान में रखकर मक्का व मूँग अंतरवर्तीय फसलोत्पादन हमारे किसानों के लिए अपनी आय में वृद्धि हेतु एक अच्छा विकल्प हो सकता है।

चित्र 5. मक्का व मूँग सह फसल में पुष्पन एवं फलत अवस्था

अध्यापक राष्ट्र की संस्कृति के चतुर माली होते हैं। वे संस्कारों की जड़ों में खाद देते हैं और अपने श्रम से उन्हें सींच-सींच कर महाप्राण शक्तियां बनाते हैं।

- महर्षि अरविंद

सूत्रकृमियों एवं उनके प्रबंधन के प्रति अनभिज्ञता के कारण कृषकों को होने वाली आर्थिक क्षति

राशिद परवेज़, उमा राव एवं एच. के. शर्मा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

हरित क्रांति की जननी भा.कृ.अ.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली में कृषकों और उद्धमियों को कृषि में विकसित नूतन तकनीकियों तथा नवीन किस्मों की प्रदर्शनी एवं उनके बारे में जानकारी देने के उद्देश्य से कृषि विज्ञान मेले का आयोजन 05-07-2019 को किया गया। इस मेले में बहुत सारे कृषि संबंधी संस्थानों ने भाग लिया। परंतु स्कूल ऑफ क्रॉप प्रोटैक्शन के अंतर्गत सूत्रकृमि संभाग का पंडाल कृषकों, उद्धमियों और विद्यार्थियों के लिए आकर्षण का केंद्र बना रहा। इसका प्रमुख कारण संभाग के वैज्ञानिकों द्वारा पंडाल में भ्रमण करने वालों को सूत्रकृमियों के बारे में विस्तृत जानकारी के अतिरिक्त उन्हें सूक्ष्मदर्शी की सहायता से जीवित सूत्रकृमि दिखाए गए तथा विभिन्न फसलों को हानि पहुंचाने वाले सूत्रकृमियों एवं फसलों पर इनके दुष्परिणाम एवं लक्षणों को सजीव मॉडल द्वारा प्रस्तुत किया गया।

सूत्रकृमि अपने नाम के अनुसार धागेनुमा कीड़ा होता है, जो प्राय: मिट्टी में पाया जाता है। यह इतना सूक्ष्म होता है कि इन्हें नग्न आखों से नहीं देखा जा सकता, इन्हें केवल सूक्ष्मदर्शी यंत्र की सहायता से ही देख सकते हैं, यही कारण है कि कृषक इनकी खेतों में उपस्थिति होते हुए भी इनके होने का आभास नहीं कर पाते। जब तक पादप लक्षणों तथा मिट्टी जांच द्वारा सूत्रकृमियों की उपस्थिति का आभास होता है तब तक बुहत देर हो चुकी होती है और सूत्रकृमि की समस्या विकराल रूप धारण करके फसल को हानि पहुंचा चुकी होती है। इन समस्याओं को ध्यान में रखते हुए मेले में आए कृषकों विशेषकर सूत्रकृमि संभाग के पंडाल में भ्रमण करने वाले किसानों से प्रश्नोत्तरी भरवाई गई, जिसका वर्णन इस लेख में किया गया है।

भ्रमणकर्ता कृषक

मेला अवधि में सूत्रकृमि संभाग के पंडाल में अभिलेखानुसार लगभग 250 कृषकों, उद्धमियों और विद्यार्थियों ने भ्रमण किया, जो 9 राज्यों के 52 जिलों के रहने वाले या खेती करने वाले थे। इनमें से उत्तर प्रदेश के 21 जिलों जैसे बुलंदशहर, इटावा, हमीरपुर, सहारनपुर, अलीगढ़, हाथरस, हापुड़, मिर्जापुर, बरेली, बागपत, गोंडा, झांसी, गौतम बुधनगर, बहराइच, फिरोजाबाद, गाजीपुर, पीलीभीत, मेरठ, शामली, मुजफ्फरनगर और मऊ: राजस्थान के 10 जिलों (बूंदी, भरतपुर, टोंक, चूरु, बौंडी, भीलवाड़ा, बाराँन, झुंझुनू और हनुमानगढ़), हरियाणा के 9 जिलों (फ़रीदाबाद, भिवानी, सोनीपत, जींद, झज्जर, कुरुक्षेत्र, गुरुग्राम, हिसार, रेवाड़ी और रोहतक); दिल्ली के 7 जिलों (ईस्ट दिल्ली, वेस्ट दिल्ली, साउथ दिल्ली, नॉर्थ दिल्ली, सेंट्रल दिल्ली, न्यू दिल्ली, शाहदरा); बिहार के 2 जिलों (समस्तीपुर और बेगूसराय); पंजाब (फ़िरोज़पुर), आंध्र प्रदेश (विशाखापट्टम) और उत्तराखंड (अलमोड़ा) के एक-एक जिले से थे (चित्र 1) |

फसलों की खेती

भ्रमणकर्ता कृषकों में मुख्यत: 59 किसान- सब्जी की खेती, 34 किसान- अनाज की खेती, 24 किसान-बागवानी फसलों की खेती, 7 किसान- दलहन एवं तिलहन की खेती, 2 किसान- मसालों की खेती तथा इनके अतिरिक्त 1 किसान- पौधशाला, 4 किसान- पॉलीहाउस में खेती तथा 10 किसान- अन्य फसलों की खेती कर रहे थे (चित्र 2)। भ्रमणकर्ता कृषकों में बहुत से ऐसे किसान भी थे, जो एक या उससे अधिक फसलों की खेती कर रहे थे।

अनभिज्ञ या जागरूक कृषक

जब कृषकों से फसल सुरक्षा संबंधी ज्ञान की जानकारी ली गई तब ज्ञात हुआ कि 69% कृषक फसलों को हानि

पहुंचाने वाले सूत्रकृमियों से अनभिज्ञ थे, जबकि 31% कृषकों को ही सूत्रकृमियों के बारे में जानकारी थी (चित्र 3)। जब कृषकों से सूत्रकृमियों के प्रति अनभिज्ञता का कारण पूछा गया तब उन्होंने बताया कि इस समस्या के बारे में पहले कोई जागरूक कार्यक्रम या विशेषकर सूत्रकृमि केंद्रित गोष्ठी या प्रशिक्षण कार्यक्रम में भाग नहीं लिया है, जो जागरूक कृषक थे, उन्होंने पिछली बार फसलों को हुई हानि के पश्चात विभिन्न माध्यमों से एकत्र की गई जानकारी और अपने अनुभव के आधार पर सूत्रकृमियों के बारे में ज्ञात हुआ।

सूत्रकृमि ग्रसित खेती

जागरूक कृषकों से उनकी फसल की स्थिति के बारे में पूछने पर पता चला कि 78% कृषकों की फसल सूत्रकृमि ग्रसित, जबकि 22% कृषकों की फसल सूत्रकृमियों की समस्या विहीन या स्वस्थ थी (चित्र 4)। इस बारे में ली गई विस्तृत जानकारी से ज्ञात हुआ कि किसानों के खेतों में सूत्रकृमि की समस्या अनेक रास्तों से आ रही है, इनमें से स्वस्थ बीज या रोपण सामग्री की अनुपलब्धता सबसे महत्वपूर्ण चुनौती है, जिसका मुख्य कारण प्रमाणित बीज या रोपण सामग्री के क्रय हेतु संस्था का अभाव है। सही फसल चक्र को न चुनना भी एक अहम वजह थी।

सूत्रकृमि प्रबंधन

जिन कृषकों की फसल सूत्रकृमि ग्रसित थी, उनसे सूत्रकृमि प्रबंधन के बारे में जानकारी के पश्चात ज्ञात हुआ कि 58% किसानों को सूत्रकृमि प्रबंधन के बारे में जानकारी नहीं थी या उन्हें सूत्रकृमि नियंत्रण करने का सही तरीका मालूम नहीं था, वे चाह कर भी कोई कदम नहीं उठा सकते थे या सीधे तौर पर कहें कि वे सूत्रकृमि नियंत्रण करने में असहाय थे। जबकि कुल 42% किसानों को सूत्रकृमि प्रबंधन के बारे में जानकारी थी। सूत्रकृमि प्रबंधन के जानकार किसानों में से 30% किसानों ने सूत्रकृमि नियंत्रण करने के लिए आवश्यक और उपयुक्त कदम उठाए या उन्होंने अपनी फसल को सूत्रकृमियों से होने वाली हानि से बचाने का प्रयास किया, जबकि 12% किसानों ने सूत्रकृमि नियंत्रण करने के लिए आवश्यक और उपयुक्त कदम नहीं उठाए या उन्होंने अपनी फसल को सूत्रकृमियों से होने वाली हानि से बचाने का प्रयास ही नहीं किया (चित्र 5)।

फसलों में सूत्रकृमि प्रबंधन

जिन कृषकों ने सूत्रकृमि ग्रसित फसल का प्रबंधन या अपनी फसल को सूत्रकृमियों से होने वाली हानि से बचाने के लिए नियंत्रण विधियों का उपयोग किया, उनमें से 77% किसानों के खेतों में उपचार के बाद भी फसल सुधार नहीं हुआ। इस विफलता के बारे में ली गई विस्तृत जानकारी से ज्ञात हुआ कि इसके पीछे किसानों द्वारा सही समय पर उपचार न करना, उपचार के लिए उपयोग किए गए उपयुक्त सूत्रकृमिनाशक का चयन न करना, सूत्रकृमिनाशक की गुणवत्ता आदि इसके प्रमुख कारण थे। जबकि 23% किसानों को सूत्रकृमि नियंत्रण करने में सफलता मिली या उन्होंने अपनी फसल को सूत्रकृमियों से होने वाली हानि से बचाया

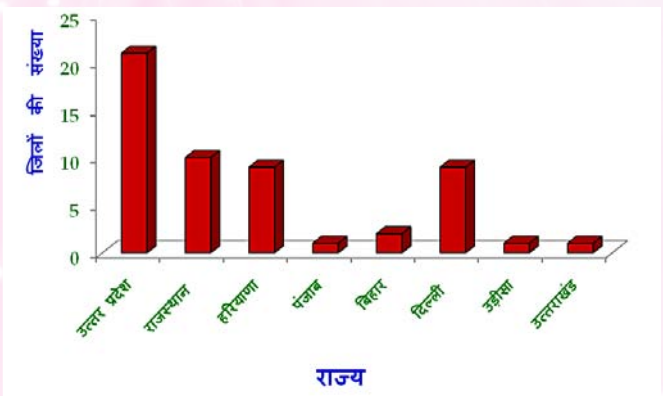

चित्र 1: राज्यवार विभिन्न जिलों से सूत्रकृमि संभाग के पंडाल में भ्रमण करने वाले किसान।

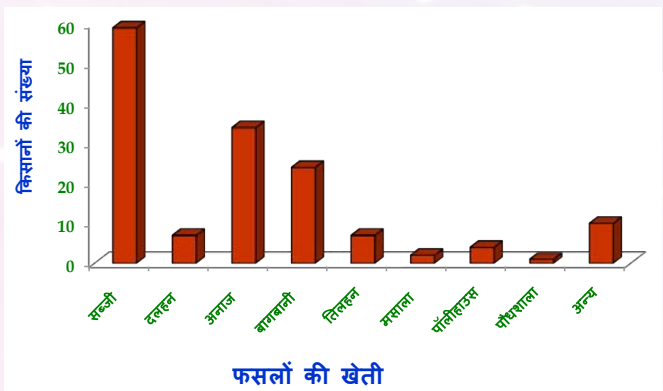

चित्र 2 : किसानों द्वारा विभिन्न फसलों की खेती का विवरण

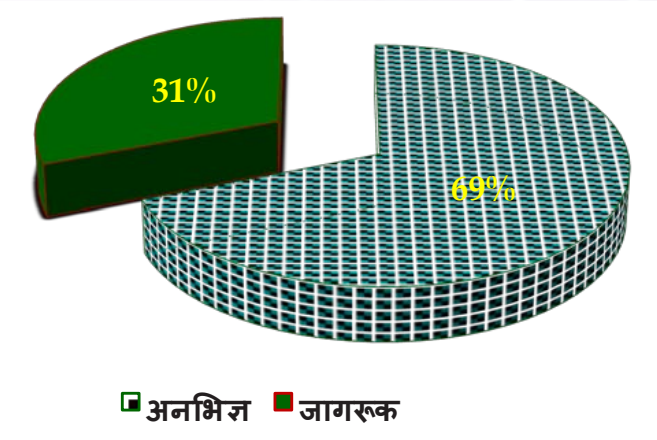

चित्र 3: सूत्रकृमियों से अनभिज्ञ और जागरूक किसान

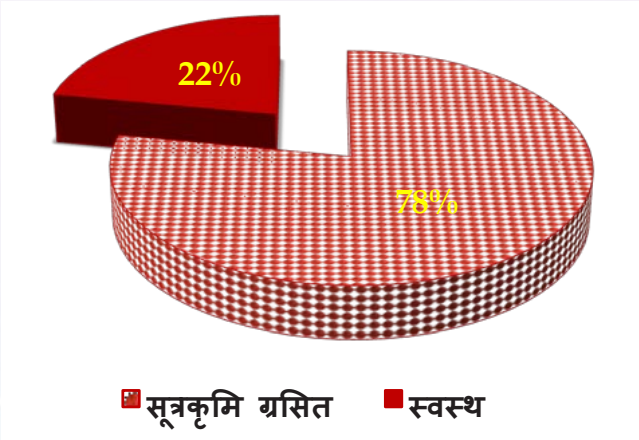

चित्र 4: सूत्रकृमि ग्रसित एवं स्वस्थ खेती

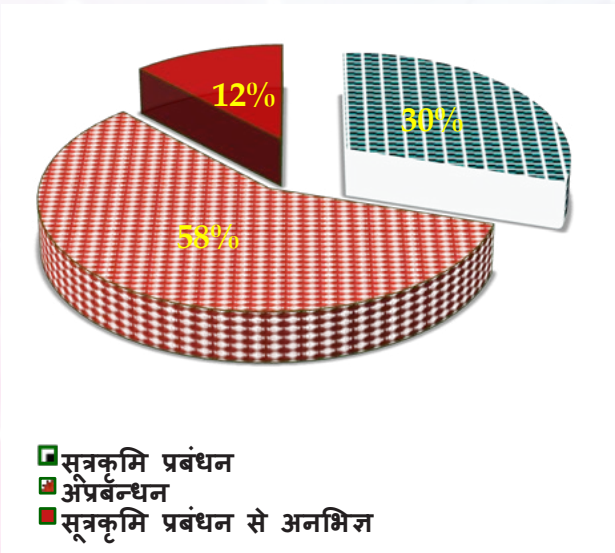

चित्र 5 : सूत्रकृमि प्रबंधन एवं अप्रबंधन

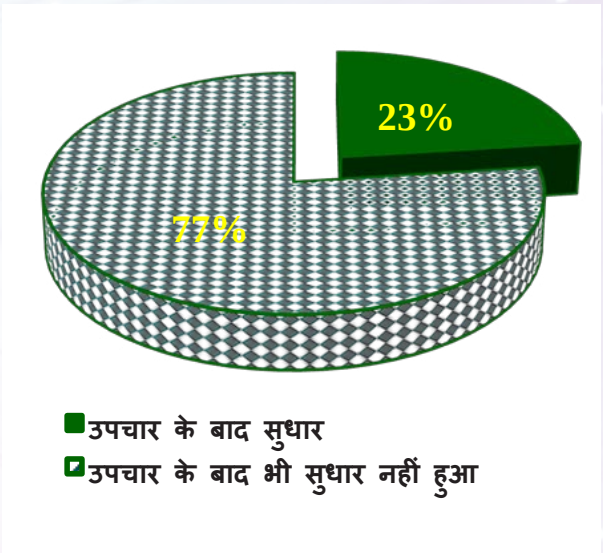

चित्र 6: सूत्रकृमि ग्रसित खेती में फसल सुधार

अर्थात उनकी फसल उपचार के उपरांत स्वस्थ हो गई (चित्र 6)।

उपर्युक्त जानकारी के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि सूत्रकृमियों के प्रति किसानों की अनभिज्ञता उनकी फसल को होने वाली हानि को और विकराल रूप दे रही है। परिणामस्वरूप कृषकों की दिन रात की मेहनत से की गई फसल को हानि पहुंचा रही है, जिससे फसल की गुणवत्ता पर असर पड़ता है और उसकी सही कीमत नहीं मिल पाती या लाभ में कमी आती है अर्थात उनको आर्थिक क्षति होती है। अत: यह आवश्यक है कि कृषकों को सूत्रकृमियों और सूत्रकृमि प्रबंधन के बारे में जानकारी उचित माध्यम से उपलब्ध कराई जाए, ताकि उनकी दिन रात की मेहनत से पैदा की गई फसल को हानि से बचाया जा सके और वह अपनी फसल को स्वस्थ रख सकें, जिससे फसल की गुणवत्ता अच्छी हो और वह उससे अधिक लाभ अर्जित कर सकें।

गेहूं व जौ के प्रमुख सूत्रकृमि रोग एवं प्रबंधन

अर्चना उदय सिंह, इम्तियाज अहमद और राजेन्द्र शर्मा

सूत्रकृमि विज्ञान संभाग, कृषि ज्ञान प्रबंधन इकाई

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

फसलों की उपज एवं गुणवत्ता में कमी के प्रमुख कारणों में एक उनमें लगने वाले कीट एवं रोग हैं। फसलों में रोग कारक एवं परजीवियों की भी भरमार रहती है। इन फसलों में लगने वाले प्रमुख रोग एवं परजीवियों में सूत्रकृमियों का स्थान प्रमुख है। सूत्रकृमि नंगी आंखों से न दिखने वाले धागे के आकार के गोल खंडरहित कृमि होते हैं। ये मृदा में बहुतायत पाए जाते हैं और लगभग सभी फसलों को संक्रमित करते हैं। अंग्रेजी भाषा में इन्हें निमेटोड के नाम से जाना जाता है जोकि कीड़ों की इल्लियों एवं कैंचुओं से काफी भिन्न होते हैं। संसार में सूत्रकृमि की लगभग एक लाख जातियां हैं, जिनमें से अभी तक 20,000 की ही पहचान हो पाई है। पृथ्वी पर कोई भी पेड़-पौधा ऐसा नहीं है जिससे सूत्रकृमि किसी न किसी रूप में अपना भोजन न प्राप्त करते हों अर्थात उसे संक्रमित न करते हों।

सूत्रकृमियों की अधिकतर जातियां, जड़ों व पौधों के भूमिगत भागों से अपना भोजन ग्रहण करती हैं, परंतु कुछ ऐसी भी जातियां हैं जो पौधों के ऊपरी भागों पर भी आक्रमण करती हैं। सूत्रकृमि जड़ों से बाहर रह कर अथवा आधा शरीर जड़ों में प्रवेश कर या पूर्णरूप से जड़ के अंदर प्रवेश कर, भोजन प्राप्त करते हैं। पौद परजीवी सूत्रकृमियों के अंदर एक खोखली सूई के आकार की रचना होती है, जिसे अपनी शारीरिक ताकत के द्वारा पौधों की कोशिकाओं में प्रवेश करा कर कोशिकाओं में लार डालकर उसके अंदर के तत्वों को घुलाकर वापिस अपने शरीर में सोख लेते हैं। इस तरह की प्रक्रिया द्वारा पौधों की कोशिकाओं में परिवर्तित हो जाती है। जबकि कुछ सूत्रकृमि की जातियों की लार से कोशिका फूलकर गांठ रूपी हो जाती है। साथ ही ये भोजन के अभाव में कमजोर हो जाता है जिससे दूसरे परजीवी व रोग कारक भी पौधों पर आक्रमण कर उन्हें संक्रमित कर देते हैं। इन सबके अलावा ये सूत्रकृमि परोक्ष रूप में भी पौधों को विषाणुओं का संवहन करके व राइजोबियम जीवाणु द्वारा नाइट्रोजन स्थिरीकरण की मात्रा में कमी करके क्षति पहुंचाते हैं एवं गंभीर रोग उत्पन्न करते हैं। इस प्रकार सूत्रकृमि हर तरह से फसलों को क्षति पहुंचाते हैं। इन्हें छोटे आकार एवं मिट्टी में रहने के कारण विशेष विधि द्वारा मिट्टी से निकालकर केवल सूक्ष्मदर्शी यंत्र के द्वारा ही देखा जा सकता है। साधारणत: इनके बारे में किसानों एवं अन्य विषयों के विशेषज्ञ भी अधिक जानकारी नहीं रखते हैं। यही वह कारण है जिसके लिए इन्हें फसलों का छुपा हुआ शत्रु भी कहा जाता है। इस लेख में सूत्रकृमियों द्वारा गेहूं और जौ को लगने वाले प्रमुख रोगों एवं उनके प्रबंधन की जानकारी देने की कोशिश की है।

मोल्या रोग

गेहूं व जौ, रबी की दो मुख्य फसलें हैं, जोकि सिंचित व असिंचित दोनों ही क्षेत्रों में बोई जाती हैं। राजस्थान में दोनों ही फसलों को लगभग 21 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में बोया जाता है। उचित मात्रा में खाद व पानी देने के बावजूद भी यहां का औसत उत्पादन अन्य राज्यों की तुलना में काफी कम है। उत्पादन में कमी के वैसे तो बहुत से कारण है, परंतु राजस्थान के संदर्भ में जो सबसे प्रमुख है, वह है मोल्या रोग। इस रोग के कारक की खोज सर्वप्रथम प्रसाद और उनके साथियों ने सन् 1969 में सीकर जिले के नीम का थाना नामक स्थान से की, हालांकि किसान उससे पहले भी यह तो अवश्य जानते थे कि यह कोई रोग है, जिसमें फसल कहीं पर बंदरों के नोचने जैसी हो जाती है। इसीलिए इसका नाम मोल्या रोग पड़ा।

कारक व लक्षण: मोल्या रोग का कारक एक पुट्टी सूत्रकृमि है, जिसे विज्ञान की भाषा में हैटेरोडेरा एवीनी के

नाम से जाना जाता है। ये मिट्टी में पुट्टी (सिस्ट) के रूप में हमेशा बने रहते हैं तथा नवंबर के माह में फसल की उपस्थिति में इस पुट्टी में उपस्थित अंडों से लट के रूप में सूत्रकृमि बाहर आते हैं और गेहूं व जौ की जड़ों में घुसकर क्षति पहुंचाते हैं। यह सूत्रकृमि एक वर्ष में सिर्फ एक ही जीवन चक्र पूरा करता है। हर एक पुट्टी में 200 से 400 तक अंडे होते हैं और एक वर्ष में सिर्फ 50 प्रतिशत ही अंडे लाखों में बदलते हैं, जिससे कि इस रोग के कृमि कई वर्षों तक खेत में बने रहते हैं। रोग शुरू में छोटे-छोटे टुकड़ों में होता है, लेकिन लगातार गेहूं व जौ की फसल एक ही खेत में लेने से बढ़ता जाता है और 4-5 वर्ष में पूरे खेत में फैल जाता है। रोग की सही पहचान के लिए, यदि रोगी खेतों में से पौधे उखाड़कर साफ पानी में धोकर देखें तो जड़ों में गुच्छा सा बन जाता है व उन पर सफेद रंग के छोटे-छोटे मोती जैसे दानें नजर आते हैं। सही मायने में ये रोग कृमि की मादाएं हैं, जो आगे चलकर पुट्टी में परिवर्तित होती हैं। रोगग्रसित खेत से पानी का धोरा अगर स्वस्थ खेत में जाता है, तो भी इसकी मादाएं पानी में तैरती हुई स्वस्थ खेत में पहुंच जाती हैं और रोग पैदा करती हैं।

रोग प्रबंधन

- रबी में गेहूं व जौ के स्थान पर रोग ग्रसित खेतों में सरसों, चना, मटर, आलू, प्याज, गाजर या अन्य कोई गैर धान्य फसल बोई जाए, तो इस रोग के 50 प्रतिशत तक कृमि कम हो जाते हैं, इसलिए सांद्रता की मात्रा के हिसाब से मोल्या ग्रसित खेतों में एक या दो वर्ष का फसल चक्र अपनाएं।
- मोल्या रोग के प्रभावी नियंत्रण के लिए क्षेत्रों में जहां गर्मियों में मिट्टी के कटाव की समस्या न हो वहां पर मई-जून में 10-15 दिन के अंतर पर तीन गहरी जुताई करने से इस रोग की तीव्रता करीब 30-35 प्रतिशत कम की जा सकती है। जुताई इस प्रकार की जाए कि खेत सूर्य की दिशा में खुले, जिससे कड़ी धूप का असर ज्यादा से ज्यादा पड़े। ऐसे खेतों में रबी में गेहूं व जौ की फसल लगाने पर भी रोग की संभावना कम होती है।
- रोग रोधक किस्मों का प्रयोग करें। जौ में राजकिरण, एच डी 2052 एच डी 2032 आदि कई प्रभावी रोगरोधी किस्में है। इसी प्रकार से गेहूं की आर.जे.एम.आर.-1 नामक किस्म भी वैज्ञानिकों ने विकसित की है। इन किस्मों को बोने से उपज भी अच्छी मिलती है और रोग की तीव्रता में भी कमी आती है।
- सूत्रकृमि नाशक रसायन का प्रयोग केवल उन खेतों में ही किया जाए जहां पर पिछले वर्ष की गेहूं या जौ की फसल में पचास प्रतिशत या अधिक नुकसान हुआ हो। उसके लिए किसान फ्यूराडान (3 प्रतिशत) का प्रयोग बीज की बुआई के साथ करें। गेहूं की फसल में फ्यूराडान की 45 किग्रा. व जौ की फसल में 30 किग्रा. मात्रा प्रति हेक्टेयर की दर से करें। चूंकि ये दवाइयां मंहगी होती हैं साथ ही इनके दूसरे नुकसान भी किसान और भूमि को होते हैं, इसलिए सिर्फ रोग की गंभीर अवस्था में ही इनके प्रयोग की सलाह दी जाती है।

टुण्डू रोग

सूत्रकृमि विज्ञान के इतिहास में यह पहला रोग है जिसे सन् 1743 में निधम नामक वैज्ञानिक ने गेहूं के बीजों में देखा था। इस रोग के कारण गेहूं की संपूर्ण फसल नष्ट हो जाती है। यह रोग दो अवस्थाओं में होता है प्रथम अवस्था में सिर्फ ऐन्गुइना ट्रीटीसी नामक सूत्रकृमि ही लगभग 15 प्रतिशत नुकसान करता है, परंतु दूसरी अवस्था में जब इस कृमि के साथ कोरिनो बैक्टीरियम ट्रीटीसी नामक जीवाणु आ जाता है, तब इस रोग की उग्रता अधिक बढ़ जाती है और जो भी पौधा इसकी चपेट में आता है, उसकी बाली के अंदर एक दाना भी नहीं बनता है। संपूर्ण फसल में लगभग 80 प्रतिशत तक की हानि हो जाती है। रोग ग्रसित पौधों में दानों के स्थान पर गैगले होते हैं, जिन्हें देसी भाषा में 'कायमा' कहा जाता है। वास्तव में ये अंडों से भरे हुए बीज होते हैं, जो भूरे व काले रंग के हो जाते हैं। इनके अंदर बहुत अधिक संख्या में द्वितीय अवस्था के शिशु कृमि रहते हैं, जिनकी औसतन संख्या 6000 प्रति गैंगला होती है। ये गैंगले और इनमें पाए जाने वाले अवयव शुष्क मौसम के

प्रति प्रतिरोधी होते हैं और ऐसी अवस्था में ये करीब 32 वर्षों तक जिंदा रह सकते हैं। अनुकूल मौसम जैसे मृदा तापक्रम 15^0 सेल्सियस, बीज की गहराई 2 सेमी., मृदा नमी 20 प्रतिशत और मृदा वातस्ध्र 51 प्रतिशत मिलने पर ये गैंगले फटते हैं और इनमें से द्वितीय अवस्था के शिशु कृमि निकलते हैं, जो फसल पर आक्रमण करते हैं।

जागरूक किसान अब प्रमाणित बीज ही खरीदते हैं। इसलिए बड़े किसानों के यहां तो इस रोग का प्रकोप कम हो गया है लेकिन राजस्थान के ग्रामीण आदिवासी क्षेत्रों में जहां परंपरागत बीज काम में लिया जाता है वहां पर आज भी इस रोग का प्रकोप पाया जाता है।

लक्षण : इस रोग का सबसे प्रमुख लक्षण 20-25 दिन बाद दिखाई देता है, जिसमें तना भूमि की सतह पर फूलना शुरू कर देता है। इसके बाद पत्तियां सकुंचित होकर ऐंठ जाती हैं और इस प्रकार से दिखाई देती हैं जैसे बल लगातार मोड़ दी गई हों। पौधे छोटे रह जाते हैं। ये लक्षण चकतों में दिखाई देते हैं। रोगग्रस्त पौधों की जड़ों से बड़ी संख्या में उपजहीन किल्ले निकलते हैं, जोकि काफी समय तक हरे रहते हैं और अंत में दानों के स्थान पर कायमा (गैंगले) बन जाते हैं। यही गेंगले स्वस्थ बीजों के साथ खलिहान से घर एवं घर से वापिस बीज के रूप में खेत में आ जाते हैं और रोग प्रतिवर्ष फैलता रहता है।

रोग प्रबंधन

- स्वस्थ, स्वच्छ एवं प्रमाणित बीजों का प्रयोग करें।
- उन्नत एवं रोगरोधी किस्में लगाएं।
- घर के बीज का प्रयोग करना हो, तो बीजों को अच्छी तरह से साफ कर लें।
- फसल चक्र का प्रयोग करें। खेत में एक ही फसल को लगातार दो वर्ष या इससे अधिक न लें।
- गर्मियों में खेत के खाली रहने की अवस्था में हल से गहरी जुताई करें।
- नर्सरी वाली फसलों में नर्सरी के स्थान की जुताई कर हल्की सिंचाई करें एवं 15 दिन के लिए सफेद पॉलीथीन से ढक दें, ताकि सूत्रकृमि के साथ कीड़े एवं खरपतवार भी नियंत्रित हो जाएं।
- मुख्य फसल के बीच में ऋतु के अनुसार हजारा या सरसों की फसल उगाएं।
- जैविक नियंत्रण हेतु ट्राइकोडरमा विरीडी नामक फफूंद से बीजों को 8 ग्राम/किग्रा. की दर से उपचारित कर बोएं।
- नर्सरी में हमेशा पंक्तियों में बुआई करें। इससे पौद स्वस्थ मिलेगी एवं अन्य सस्य क्रियाओं के संचालन में भी आसानी रहेगी।
- रोग की अधिकता में बीज उपचार एवं रोग उपचार के रूप में कार्बोसल्फोन (2 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से) एवं कार्बोफ्यूरॉन 3 जी (2 किग्रा. सक्रिय तत्व/हेक्टेयर की दर से) का भी क्रमशः प्रयोग किया जा सकता है।
- किसी भी नए रोग के लक्षण दिखने पर कृषि विभाग या विश्वविद्यालय ये संपर्क करें।

हताश न होना सफलता का मूल है और यही परम सुख है। उत्साह मनुष्य को कर्मो में प्रेरित करता है और उत्साह ही कर्म को सफल बनाता है।

- वाल्मीकि

राजमा की उन्नत किस्मों का बीज उत्पादन

ज्ञानेन्द्र सिंह, रमेश चन्द, चन्दू सिंह, संजय कुमार, संजीव कुमार शर्मा
विपिन कुमार, राजेश कुमार एवं किरण ठाकुर

बीज उत्पादन इकाई, भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

राजमा (फेजियोलस वल्गेरिस एल.) की उत्पत्ति मध्य अमेरिका तथा दक्षिण मैक्सिको में मानी जाती है। यह किडनी बीन, कोमनबीन, हरीकोटबीन, स्नेप बीन, फ्रेन्च बीन, राजमा आादि के नाम से जानी जाती है। पर्वतीय क्षेत्रों में, दाल एवं हरी सब्जी के रूप में उगाई जाने वाली यह एक प्रमुख आर्थिक फसल बन गई है। फलियों में रेशे के आधार पर दो प्रकार की किस्में पाई जाती हैं। एक प्रकार की किस्म, बिना रेशे वाली या कम रेशेदार होती है और प्रायः हरी सब्जी के लिए प्रयोग की जाती है। दूसरे प्रकार की किस्मों में रेशे अधिक होते है तथा इनका प्रयोग प्रायः दाने (दाल) के लिए किया जाता है। इसमें प्रोटीन तथा अन्य पोषक तत्व पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं। इसमें प्रोटीन 22.9 प्रतिशत, कैल्शियम 260 मिलीग्रा. /100 ग्रा., वसा 1.3 प्रतिशत, फॉस्फोरस 410 मिलीग्रा. /100 ग्राम, कार्बाहाइड्रेट 60.6 प्रतिशत तथा लोहा 5.8 मिलीग्रा./100 ग्रा. पाया जाता है। यह मुख्यतः महाराष्ट्र, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखण्ड, उत्तर प्रदेश, जम्मू एवं कश्मीर तथा उत्तरी पूर्वी राज्यों में लगभग 80-85 हजार हेक्टेयर क्षेत्र में उगायी जाती है। इसकी उन्नतशील किस्मों का बीज उत्पादन करके तथा समय पर किसानों को उन्नत उत्पादन तकनीक के साथ उपलब्ध कराकर इसकी पैदावार एवं गुणवत्ता में वृद्धि की जा सकती है। इस लेख में राजमा के बीज उत्पादन पर विशेष ध्यान दिया गया है, जिसका विवरण निम्न प्रकार है।

भूमि एवं भूमि की तैयारी

राजमा के लिए दोमट या बलुई दोमट भूमि जिसमें पर्याप्त मात्रा में जीवांश पदार्थ हों तथा जलधारण और जल निकास की व्यवस्था अच्छी व उत्तम रहती है। इसके लिए चिकनी, नम भूमि तथा लवणीय भूमि बिलकुल उपयुक्त नहीं रहती। इसकी सर्वोत्तम उपज के लिए भूमि का पी एच मान 6.5-7 के बीच होना चाहिए।

बुआई से पूर्व खेत की 2 बार हैरो तथा 2 बार कल्टीवेटर से पाटे के साथ जुताई करके भूमि को अच्छी प्रकार भुरभुरा बना लेना चाहिए। अच्छी प्रकार से तैयार समतल खेत में सिंचाई और जल निकास की सुविधा को ध्यान में रखकर आवश्यकतानुसार क्यारियां बना लेनी चाहिए।

जलवायु

यह गर्म जलवायु की फसल है। इसकी उत्तम खेती के लिए 15-27 डिग्री सेंटीग्रेट तापमान अनुकूल पाया गया है इसके बीज के अंकुरण के लिए भूमि का तापमान 15 डिग्री सेंटीग्रेट से कम नहीं होना चाहिए। 15 डिग्री सेंटीग्रेट से कम तापमान पर अंकुरण तथा परागण सुचारु रूप से नहीं होता तथा फलियों का विकास भी नहीं हो पाता। 30 डिग्री सेंटीग्रेट से अधिक तापमान पर फूल झड़ने लगते है तथा परागण भी ठीक प्रकार से नहीं होता।

किस्में: इनकी किस्मों को मुख्य रूप से दो भागों में बांटा जा सकता है:

1. बौनी किस्में
2. लंबी बढ़ने वाली किस्में

मुख्य किस्मों का विवरण निम्न प्रकार है :-

कन्टेन्डरः यह अत्यंत प्रमुख और प्रचलित बौनी किस्म है। पर्वतीय क्षेत्रों में यह मक्खन बीन के नाम से लोकप्रिय हो गई है। इसकी फलियां हरे रंग की, थोड़ी मुड़ी हुई/रेशा रहित, मुलायम तथा खाने में अत्यंत स्वादिष्ट होती हैं। इसके दाने का आकार लंबा व चपटा तथा हल्के भूरे रंग का होता है। इसके फूल का रंग पीला होता है। यह मुजैक तथा चूर्णी फफूंद के प्रति कुछ हद तक प्रतिरोधी है।

पूसा पार्वतीः यह एक नई बौनी किस्म है। इसकी फलियां लंबी, चपटी, सीधी तथा रेशे वाली होती हैं। यह पूसा कन्टेन्डर की अपेक्षाकृत कम प्रचालित है। यह मौजेक और चूर्णी फफूंद के प्रतिरोधी किस्म है। यह अगेती बुआई के 45-50 दिन बाद हरी फलियों के रूप में खाने योग्य हो जाती है। इसके फूल का रंग गुलाबी है। इसका बीज भूरे रंग का कन्टेन्डर के मुकाबले छोटा तथा पतला होता है।

प्रीमियर: यह भी बौनी किस्म है। इसके पौधे की लंबाई 50-60 सेमी. होती है। इसकी फलियां हरे रंग की, सीधी, धागे वाली तथा स्वादिष्ट होती हैं।

अरका कोमल: यह आई.आई.एच.आर. बेंगलुरु द्वारा निकाली किस्में है। यह हि.प्र., जम्मू एवं कश्मीर, उत्तराखण्ड, म.प्र., महाराष्ट्र, तमिलनाडु, कर्नाटक तथा केरल के लिए अनुमोदित है। इसके पौधे सीधे बौने, चमकीले हरे रंग के, फलियां हरी चपटी सीधी, यातायात में सुविधाजनक, पकाने में आसान तथा इसकी फलियों की पैदावार 100 क्विंटल व बीज की पैदावार 15 क्विंटल प्रति हेक्टेयर है।

अरका सुविधा: यह आई.आई.एच.आर. बेंगलूरू द्वारा निकाली किस्म है। यह उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों के लिए अनुमोदित है। इसके पौधे सीधे, फली हल्की हरी रेशा रहित होती है। इसकी फली की पैदावार 190 क्विंटल/हेक्टेयर है।

काशी परम: इसके पौधे 70 सेमी. लंबे, पत्तियां गहरी हरी, फलियां गोल, गहरी हरी लंबाई 14.7 सेमी. तथा फलियों की पैदावार 120-140 क्विंटल/हेक्टेयर है। यह उत्तरी पहाड़ी क्षेत्रों तथा म.प्र. के लिए अनुमोदित है तथा बनारस हिन्दू विश्वविद्यालय द्वारा निकाली किस्म है।

पंत अनुपमा: यह पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय द्वारा निकाली किस्म है। यह उत्तरी पहाड़ी क्षेत्र, पंजाब, बिहार तथा झारखण्ड के लिए अनुमोदित है। इसके पौधे बौने, हरे रंग के तथा सीधे होते हैं, इसकी फलियां नरम, गोल तथा रेशा रहित होती है। यह वायरस तथा लीफ स्पोट के लिए मध्यम प्रतिरोधी है। इसकी फलियों की पैदावार 90 क्विंटल/हेक्टेयर तक है।

पंत बीन: यह पंतनगर कृषि विश्वविद्यालय द्वारा निकाली किस्म है। यह उ.प्र. तथा उत्तराखण्ड के लिए अनुमोदित है। इसकी फलियां हरी चपटी, गोल, सीधी तथा अगेति अवस्था में रेशा रहित होती हैं। इसके बीज का रंग गहरा भूरा होता है। बुआई के 60 दिन बाद हरी फलियों की तुड़ाई शुरू हो जाती है। इसके बीज के पकने में 130 दिन लगते हैं। यह बीन कामन मुजैक वायरस के लिए मध्यम प्रतिरोधी है। इसकी फलियों की पैदावार 90 क्विंटल/हेक्टेयर है।

फूले सुयश: यह एम.पी.के.बी. राहुरी द्वारा निकाली किस्म है। यह महाराष्ट्र में उगाने के लिए अनुमोदित है। इसकी फलियां नरम, थोड़ी मुड़ी हुई हरे रंग की होती हैं। यह कीट तथा रोगों के प्रति सहनशील है। यह खरीफ तथा रबी में उगाने के अनुकूल है। इसकी फलियों की पैदावार 168 क्विंटल/हेक्टेयर है।

टी के डी 1: यह टी.ए.एन.यू. कोयम्बटूर द्वारा निकाली किस्म है। यह तमिलनाडु के लिए अनुमोदित है। इसकी फलियों पर रेशा कम, बीज पकने पर सफेद, फलियों तथा बीज की पैदावार क्रमशः 60 व 30 क्विंटल/हेक्टेयर होती है।

वाई सी डी-1: यह टी.ए.एन.यू. कोयम्बटूर द्वारा निकाली किस्म है। यह तमिलनाडु के लिए अनुमोदित है। इसके पौधे मध्यम बौने फली सीधी, चपटी तथा लंबी होती हैं। इसकी फलियों तथा बीज की पैदावार क्रमशः 100 व 60 क्विंटल/हेक्टेयर होती है।

आजाद राजमाश: यह उ.प्र. के लिए अनुमोदित कानपुर कृषि विश्वविद्यालय की किस्म है। इसकी फलियां अत्यधिक आकर्षक तथा रेशा रहित होती हैं। इसकी फलियों की पैदावार 65-70 क्विंटल/हेक्टेयर है।

कन्टकी वंडर : यह देर से पकने वाली तथा लंबी बढ़ने वाली किस्म है। एक गुच्छे में 6-7 फलियां लगती हैं। इसकी फलियां चपटी, मोटी, मुड़ी हुई, रेशे वाली, मुलायम होती हैं तथा बीज हल्के भूरे रंग का होता है। इसके पौधों की औसतन लंबाई 180 सेमी. होती है। इसके बीज का आकार छोटा, गोल चपटा तथा मटमैले रंग का होता है।

पोल बीन ब्लू लेक: यह बाहर से लाई गई एक नई लंबी बढ़ने वाली किस्म है। इसकी फलियां धागे रहित, हरे रंग की, स्वादिष्ट होती हैं। इसके बीज का आकार बहुत छोटा तथा रंग सफेद होता है। इस किस्म में सफेद रंग के फूल आते हैं। इसे भी 'कन्टकी वंडर' की तरह ही उगाना चाहिए।

कनेडियन वंडर: यह सफेद बीज की लंबी बढ़ने वाली किस्म है। इसकी फलियां सीधी, गोल, रेशा रहित, हरे रंग की 10-12 सेमी. लंबी होती है। एक गुच्छे में 4-5 फलियां लगती हैं, इसे भी कंटकी वंडर की तरह ही उगाना चाहिए।

बुश बीन्स गोल्ड वैक्स: यह बहुत कम प्रचालित किस्म है। इसकी फलियां रेशे वाली, सुनहरे रंग की होती हैं। यह कम पैदावार वाली किस्म है। इसके बीज का रंग सफेद काला होता है। इसके पौधे की लंबाई 150-155 सेमी. होती है।

वी.एल.राजमा-125: उत्तराखण्ड के पर्वतीय क्षेत्रों के लिए राजमा की नवीन किस्म है। इस किस्म की मुख्य विशेषता यह है कि यह कम समय में (80-85 दिन) पककर तैयार हो जाती है। यह जड़ विगलन रोग के प्रति सहनशील है। इसके दानों में प्रोटीन की मात्रा 25.74 प्रतिशत है जो कि पूर्ण रूप से पाचनशील है। इसके पौधों की ऊंचाई 35 से 45 सेमी., प्रति पौधा फलियों की संख्या 8 से 10 तथा फली में दानों की संख्या 4-5 होती है। इसका दाना सफेद होता है यह औसतन 9 से 11 क्विंटल/हेक्टेयर पैदावार देती है। यह किस्म जैविक खेती के लिए उपयुक्त है।

सारणी 1: राजमा की अन्य प्रमुख किस्मों का विवरण

किस्म	स्रोत	अनुमोदन का वर्ष	अनुमोदित क्षेत्र	औसतन बीज की पैदावार (क्विंटल प्रति हैं.)	बीज पकने की अवधि (दिनों में)	अन्य विशेषताएं
(मालवीय राजमाश)137 एच यू आर-137	बी एच यू	1991	उत्तरी पूर्वी मैदानी क्षेत्र, उ.प्र., बिहार, पश्चिमी बंगाल	18-22	112-120	बीज का रंग लाल, मध्यम बौनी, सीधी
एच पी आर-35	एच पी के वी	1992	महाराष्ट्र	14-15	73	बैंगनी धारियों के साथ बीज लाल
ए सी पी आर 94040 (वरून)	आई आई पी आर	2002	महाराष्ट्र	14-16	66-68	एन्थ्रेकनोज के प्रति सहनशील
आई पी आर 96-4 (अम्बर)	आई आई पी आर	2002	उत्तरी पूर्वी मैदानी क्षेत्र, उ.प्र., बिहार, पश्चिमी बंगाल	15-16	139	बीज का रंग लाल, लीफ कर्ल तथा बीन कामन मुजैक वायरस प्रतिरोधी
आर एस जे-178	मध्य	2005	राजस्थान	12	110-120	बीमारियों के मध्यम प्रतिरोधी

गुजरात राजमा 1	एस डी यू	2006	गुजरात	20	-	बीन कामन मुजैक वायरस प्रतिरोधी
वी एल बीन-2	वी वी कास अल्मोड़ा	2008	उत्तराखण्ड	14-15	82	जड़ गलन के प्रतिरोधी तथा अन्य बीमारियों के मध्यम प्रतिरोधी
अरका अनूप	आई आई एच आर बेंगलूरु	2012	कर्नाटक	18-20	-	रतुआ तथा बैक्टीरियल ब्लाइट प्रतिरोधी
राजमा-1	एस.के.यू.एस टी कश्मीर	2001	जम्मू एवं कश्मीर	8-10	-	जड़गलन के प्रतिरोधी, बौनी किस्म

खाद और उर्वरक

खाद के रूप में गोबर या कंपोस्ट की सड़ी खाद 200-225 क्विंटल प्रति हेक्टेयर खेत की तैयारी के समय क्यारियों में मिला देना चाहिए। उर्वरकों के रूप में 90-120 किग्रा. नाइट्रोजन, 60-80 किग्रा. फॉस्फोरस और 40 किग्रा. पोटाश प्रति हेक्टेयर आवश्यक रहता है। फॉस्फोरस, पोटाश की पूरी तथा नाइट्रोजन की आधी मात्रा बुआई से पूर्व क्यारियां तैयार करते समय भूमि में अच्छी प्रकार मिला देनी चाहिए। नाइट्रोजन की शेष आधी मात्रा को फली आने से पूर्व पौधों की लाइन के दोनों ओर 8-10 सेमी. की दूरी पर डालकर भूमि में अच्छी प्रकार मिला दें।

बुआई का समय

उत्तरी मैदानी क्षेत्र: इन क्षेत्रों में इसकी बुआई उस समय करनी चाहिए, जब पाले का प्रकोप कम हो। 25 जनवरी से फरवरी के अंत तक तथा 15 अगस्त से 30 सितंबर तक करना लाभप्रद रहता है।

निचले पर्वतीय क्षेत्रों में (1000-1400 मी.): निचले पर्वतीय क्षेत्रों में इसकी बुआई 15 मार्च से अगस्त के अंत तक की जा सकती है। अधिक हरी सब्जी और बीजोत्पादन की दृष्टि से इसकी बुआई का उत्तम समय जून का अंतिम सप्ताह है।

ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में (1000-1400 मी.): ऊंचे पर्वतीय क्षेत्रों में इसकी बुआई अप्रैल के अंत से जुलाई के अंत तक आसानी से की जा सकती है। इसके देर बाद बुआई करने पर शीघ्र पाला पड़ने के कारण फलियां ठीक प्रकार से पक नहीं पाती तथा दानों का आकार भी छोटा रह जाता है। बुआई का उत्तम समय बीजोत्पादन की दृष्टि से जुलाई का महीना है।

बीज की मात्रा एवं बीजोपचार

40-50 किग्रा. बीज बेल वाली किस्मों के लिए तथा 80-100 किग्रा. बीज प्रति हेक्टेयर बौनी किस्मों के लिये पर्याप्त रहता है। बीज को 2.5 ग्राम/किग्रा. की दर से बीज को किसी फफूंदीनाशक जैसे कैप्टान, थीरम या बाविस्टीन से उपचारित करके राइजोबियम के टीके का प्रयोग करना चाहिए।

बुआई की दूरी

2-2.5 सेमी. की गहराई पर लंबी बढ़ने वाली और बौनी किस्मों को क्रमशः 60 व 45 सेमी. की दूरी पर पंक्तियों में बीज की 7.5-10 सेमी. की दूरी पर बुआई करनी चाहिए। राजमा की बुआई जलवायु के अनुसार भिन्न-भिन्न समय पर की जाती है। बुआई खेत में उपयुक्त नमी होने पर अथवा सूखे की स्थिति में बुआई के तुरंत बाद हल्की सिंचाई कर देनी चाहिए।

पृथक्करण दूरी

यह एक स्वपरागणित फसल है, फिर भी एक किस्म से दूसरी किस्म के बीच आधार व प्रमाणित बीज पैदा करने के लिये क्रमशः 10 व 5 मी. की दूरी रखना आवश्यक रहता है। खेत तथा बीज के मानक सारणी 2 में दर्शाए गए हैं।

सिंचाई

मैदानी क्षेत्रों में 12-15 दिनों के अंतर पर आवश्यकतानुसार हल्की सिंचाई करें तथा पर्वतीय क्षेत्रों में बहुत कम सिंचाई की आवश्यकता पड़ती है। सूखे मौसम में 15 दिन के अंतर पर हल्की सिंचाई करें। सूखे मौसम की स्थिति में फूल आने के पूर्व एक सिंचाई करना अत्यंत लाभदायक रहता है। आवश्यकता से अधिक नमी होना अत्यधिक हानिकारक है। अधिक नमी से पौधों की जड़ें सड़ जाती है और पौधा मर जाता है।

निराई-गुड़ाई और खरपतवार नियंत्रण-

अंकुरण के बाद नियमित रूप से 2-3 निराई-गुड़ाई करना बहुत आवश्यक है, ताकि जड़ों को हवा आदि ठीक प्रकार से मिल सके तथा खरपतवार भी न उगने पाए। जिन क्षेत्रों में खरपतवार की अधिक समस्या रहती है, वहां बुआई के तुरंत बाद स्टाम्प (पेन्डिमेथीलीन 3 मिली. प्रति ली. पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करने से खरपतवार नियंत्रित हो जाती है।

निरीक्षण और देख-भाल

पहला निरीक्षण फूल आने के समय करना चाहिए तथा अवांछनीय पौधों को निकाल देना चाहिए। अंतिम निरीक्षण फलियां बनने के बाद, फलियों के रेशे तथा रंग आदि के आधार पर अवांछनीय पौधों को निकाल देना चाहिए।

प्रमुख कीट: राजमा की फसल में निम्न प्रमुख कीट अधिक आक्रमण करते हैं-

बीन थ्रिप्सः यह छोटे तथा भूरे रंग का कीट होता है। इसके आक्रमण से पौधों की पत्तियां मुड़कर गिर जाती हैं। इसके प्रकोप से फलियों का रंग सफेद हो जाता है। इसके नियंत्रण के लिये मैलाथियान 2 मिली. प्रति ली. पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना लाभदायक रहता है।

भृंगः यह कीट भी राजमा की फसल को हानि पहुंचाता है। इसके नियत्रंण के लिये मैलाथियान का छिड़काव करना चाहिए ।

घुनः यह हल्के भूरे रंग की सुण्डी होती है। यह भंडार में आक्रमण करके दानों में छेद कर देती है।

काला एफिडः यह अत्यंत छोटा कीट होता है, जो पत्तियों का रस चूसकर भारी हानि पहुंचाता है। इसके नियंत्रण के लिये डाइमेक्रोन या मेटासिसटाक्स आधा मिली. प्रति ली. पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करने से नियंत्रण हो जाता है।

फली छेदकः यह फलियों में छेद करके अंदर के पदार्थ को खाकर हानि पहुंचाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए कार्बेराइल 50 घुलनशील पाउडर 2 ग्राम/लीटर पानी की दर से घोल बनाकर 15 दिन के अंतर पर दो छिड़काव करना चाहिए।

बीमारियां: राजमा की फसल पर निम्न प्रमुख बीमारियां आक्रमण करती हैं-

चूर्णी फफूंद (पाउड्री मिल्डयू): इसके प्रकोप से पौधों की पत्तियों, तनों तथा फलियों आदि पर सफेद रंग का पाऊडर जमा हो जाता है, जिससे पौधों का विकास रूक जाता है तथा पैदावार कम मिलती है। इसके नियंत्रण के लिए अंकुरण के एक माह बाद से 15 दिन के अंतर पर बाविस्टीन आधा ग्राम/ली. अथवा कैराथेन 2 मिली./ली. पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करने से नियंत्रण हो जाता है।

एन्थ्रेक्नोज: इस बीमारी का प्रकोप उस समय होता है, जब वायुमंडल में अधिक नमी तथा ठंड होती है। इसके प्रकोप से पौधों की पत्तियों पर पीले भूरे रंग के धब्बे बन जाते हैं। यह बीज द्वारा फैलने वाली बीमारी है। इसकी रोकथाम के लिए बीज को उपचारित करके बुआई करें।

रतुआः इसके प्रकोप से पौधे के निचले पत्तों पर गोल उभरे हुए धब्बे बन जाते हैं तथा ये धब्बे धीरे-धीरे भूरे या काले रंग में बदल जाते हैं। इसके नियंत्रण के लिए डाइथेन एम.-45 का 2 ग्राम/ली. पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना लाभप्रद रहता है।

तना झुलसा: यह भी फंफूदी वाली बीमारी है, जो बीज से फैलती है। इसके नियंत्रण के लिए रोग रहित बीज का प्रयोग तथा बीज को सेरेसान से उपचारित करें। खड़ी फसल में इसके नियंत्रण के लिए बाविस्टन 1 ग्राम/ली. पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

विषाणुः इसके प्रकोप में पत्तियां आपस में ही गुच्छी के रूप में बन जाती हैं। यह सफेद मक्खी के द्वारा फैलता है। इसके नियंत्रण के लिए मैलाथियान 2 मिली./ली. पानी की दर से घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

कटाई

राजमा की फलियां जब पीले भूरे रंग की हो जाएं तथा नमी की मात्रा कम हो तो तुड़ाई कर लेनी चाहिए। जब पौधों पर 90 प्रतिशत फलियां हल्के पीले रंग की हो जायें, तो पूरा पौधा ही उखाड़ लेना चाहिए। लंबी बढ़ने वाली किस्मों में फलियां एक साथ नहीं पकती तथा पूरे पौधे के पकने तक नीचे की फलियां पककर गिरने तथा बीज सड़ने का खतरा रहता है, अतः फलियों को नीचे से पकने के क्रम के अनुसार तोड़कर धूप में अच्छी प्रकार से सुखाकर तथा डंडों से कूटकर बीज को साफ करके भंडारित करना चाहिए।

सारणी 2: राजमा के खेत एवं बीज मानक

क्रम संख्या	खेत एवं बीज के मानक	स्तर	
		आधारीय बीज	प्रमाणित बीज
1.	पृथक्करण दूरी	10 मीटर	5 मीटर
2.	अन्य किस्म के पौधे (अधिकतम)	0.10 प्रतिशत	0.20 प्रतिशत
3.	फसल निरीक्षण की संख्या	2 बार	2 बार
4.	बीज ढेर का आकार (अधिकतम)	200 क्विंटल	200 क्विंटल
5.	बीज के नमूने का आकार	1 किग्रा.	1 किग्रा.
6.	शुद्ध बीज (न्यूनतम)	98.0 प्रतिशत	98.0 प्रतिशत
7.	अक्रिय तत्व (अधिकतम)	2.0 प्रतिशत	2.0 प्रतिशत
8.	अन्य फसलों के बीज (अधिकतम)	-	-
9.	खरपतवारों के बीज (अधिकतम)	कोई नहीं	10 प्रति किग्रा.
10.	अन्य पहचानने योग्य किस्मों के बीज (अधिकतम)	-	-
11.	अंकुरण कठोर बीज सहित (न्यूनतम)	75 प्रतिशत	75 प्रतिशत
12.	बीज में नमी (अधिकतम)	9 प्रतिशत	9 प्रतिशत

13.	वायुरोधी पैकिंग में नमी (अधिकतम)	7 प्रतिशत	7 प्रतिशत
14.	आपत्तिजनक खरपतवार के पौधे	-	-
15.	बीजजनित बीमारियों से प्रभावित पौधे (अधिकतम)	0.10 प्रतिशत	0.20 प्रतिशत
16.	आपत्तिजनक खरपतवार के बीज	कोई नहीं	कोई नहीं

किस्म-वी एल 125

वी एल 125 का पौधा

आलस्य मनुष्य का सबसे बड़ा शत्रु है और उद्यम सबसे बड़ा मित्र, जिसके साथ रहने वाला कभी दुखी नहीं होता।

- भर्तृहरि

उर्द की उन्नत किस्मों का बीज उत्पादन

रमेश चन्द, चन्दू सिंह, ज्ञानेन्द्र सिंह, संजय कुमार एवं एस.पी. जीवन कुमार

बीज उत्पादन इकाई

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारत में एक दर्जन से अधिक उगाई जाने वाली दलहनी फसलों में 'उर्द' का स्थान काफी महत्वपूर्ण है। भारत में उर्द को उर्दबीन, ब्लैक लैन्टिल, मास तथा मास कालिया आदि नामों से पुकारा जाता है। उर्द की दो प्रमुख किस्में हैं, एक विगनामुंगों नाईगर जो कम अवधि में पकने वाली, बड़े दाने की तथा काले रंग की किस्म है, दूसरी विगनामुंगों विरिडिस जो लंबी अवधि वाली छोटे दाने की तथा हरे दाने वाली किस्म है। यह स्वयं परागणित फसल है, इसकी फलियां 4 से 6 सेमी. लंबी होती है, जिसमें 4 से 10 बीज होते हैं। इसमें प्रोटीन 24%, कैल्शियम 154 मिली ग्रा./100 ग्रा., वसा 1.4%, फॉस्फोरस 385 मिली ग्रा./100 ग्रा., खनिज 3.2%, लोहा 9.1 मिली ग्रा./100 ग्राम, रेशा 0.9% तथा कार्बोहाइड्रेट 59.6% तथा 10.9% पाए जाते हैं। इसकी फसल 100 से 120 दिन में पककर तैयार हो जाती है। 2014-15 के अनुसार भारत में उर्द का कुल क्षेत्रफल 3.06 मिलियन हेक्टेयर, कुल उत्पादन 1.70 मिलियन टन तथा उत्पादकता 555 किग्रा./हेक्टेयर थी। भारत में मूँग का मुख्य उत्पादन महाराष्ट्र (18.55%), आन्ध्रप्रदेश (16.23%), उत्तर प्रदेश (12.61%), तमिलनाडु (11.0%) राजस्थान (4.68%), उड़ीसा (4.48%), कर्नाटक (4.06%) में होता है। (स्रोत कृषि मंत्रालय भारत सरकार तथा आई.आई.पी.आर. कानपुर)। भारत विश्व में सर्वाधिक उर्द का उत्पादन करने के बाद भी 6-7 मिलियन मीट्रिक टन दालों का आयात भी करता है, क्योंकि हमारी उत्पादकता अन्य विकसित देशों की तुलना में बहुत कम है। उन्नत बीज कृषकों की सहभागिता से उन्नतशील किस्में पैदा करके फसल उत्पादन तकनीक के साथ किसानों को कम कीमत पर उपलब्ध करवाना आवश्यक हैं, ताकि उर्द उत्पादकता के वांछित परिणाम मिल सकें। प्रस्तुत लेख में उर्द की अनेक उन्नतशील किस्मोंा के साथ-साथ उन्नत बीज उत्पादन तकनीक का वर्णन किया गया है।

सारणी 1: उर्द की प्रमुख उन्नतशील किस्मों का विवरण

प्रजाति का नाम	अनुमोदन का वर्ष	अनुमोदित क्षेत्र	औसत उत्पादन (कु./है.)	फसल की अवधि (दिन)	अन्य विशेषताएं
तिरूपति मिनुमू-1 (टी.बी.जी.104)	2017	आन्ध्र प्रदेश	17-18	75-80	येलोमुजैक रोधी, फोटोसेन्सिटिव
एल बी जी 787 (तुलसी)	2016	तमिलनाडु, म. प्र., कर्नाटक, तेलंगाना तथा अंडमान निकोबार	13-14	70-75	येलोमुजैक रोधी, फोटोसेन्सटिव, रबी तथा गर्मी में उगाने के लिए उपयुक्त
पी डी के वी ब्लैक गोल्ड (एके यू.10-1)	2016	महाराष्ट्र	13-14	70-80	एन्थ्रेकनोज तथा रूटरोट के प्रतिरोधी

विश्वास (एन यू एल-7)	2012	महाराष्ट्र, गुजरात, म.प्र., छत्तीसगढ़, उ.प्र., राजस्थान	10.0	69-73	प्रमुख बीमारियों के प्रतिरोधी
वी बी एन 6	2012	तमिलनाडु	9.0	69	येलोमुजैक रोधी
वी बी एन (बी जी) 7 वी बी जी 04-008	2012	उत्तरी पश्चिमी मैदानी क्षेत्र	8.0	63-90	येलोमुजैक रोधी
यू एच-1 (यू एच. 4-06)	2011	हरियाणा	11.0	73	येलोमुजैक रोधी, खरीफ में उपयुक्त
माश 391 (एल यू 391)	2011	आं.प्र. उड़ीसा, कर्नाटक, तमिलनाडु	8.0	71	येलो मुजैक, पाउड्रीमिल्ड्यू तथा एन्थ्रेकनोज प्रतिरोधी, बसंत ऋतु के लिए उपयुक्त
सी.ओ 6 (सी ओ बी जी 653)	2011	आं.प्र. उड़ीसा, कर्नाटक, तमिलनाडु	8-10	65-70	पाउड्रीमिल्ड्यू प्रतिरोधी, बसंत ऋतु के लिए उपयुक्त
एल ए एम मिनिमम 752	2010	आन्ध्र प्रदेश	15.0	75-82	येलो मुजैक तथा उक्ठा प्रतिरोधी
माश 114	2010	पंजाब के सिंचित क्षेत्र	9.0	70-75	येलो मुजैक रोधी
यू पी यू 00-31 (हिमाचल माश)	2010	हिमाचल प्रदेश के कम ऊंचाई वाले पहाड़ी क्षेत्र	14-16	75	येलो मुजैक, एन्थ्रेकनोज प्रतिरोधी,पाउड्रीमिल्ड्यू के प्रति सहनशील, तथा हेयरी कैटर पिलर खरीफ में बुआई के उपयुक्त
माश 479 (के यू जी 479)	2010	उत्तरी मैदानी क्षेत्र	12.0	82	येलो मुजैक, पाउड्रीमिल्ड्यू प्रतिरोधी, बसंत ऋतु के लिए उपयुक्त
के यू 99-21	2009	उत्तरी मैदानी क्षेत्र	10-11	70-75	खरीफ में बुआई के लिए उपयुक्त
आई पी यू 02-43	2009	आंध्र प्रदेश, उड़ीसा, कर्नाटक, आसाम, तमिलनाडु,	9-11	75	येलो मुजैक, पाउड्रीमिल्ड्यू प्रतिरोधी, खरीफ के लिए उपयुक्त
मधरा मिनुमू	2009	महाराष्ट्र, म.प्र., आंध्र प्रदेश	13	75-80	येलो मुजैक प्रतिरोधी, बसंत ऋतु के लिए उपयुक्त
वी बी एन (बी जी) 5	2009	तमिलनाडु	14	60-65	कम अवधि की प्रजाति
प्रसाद	2008	उ.प्र., तमिलनाडु, उड़ीसा,	12-14	60-65	कम अवधि की प्रजाति
पंत उर्द 40	2008	राजस्थान, उत्तराखंड	14-15	70-75	कम अवधि की प्रजाति

भूमि एवं खेत की तैयारी: उर्द के बीज उत्पादन के लिए दोमट या बलुवी दोमट भूमि जिसमें पर्याप्त जीवांश पदार्थ हो तथा जिसका पी एच 6-8 के बीच हो, उत्तम रहती है। खेत की तैयारी के लिए प्रथम दो जुताइयां हैरो तथा एक जुताई कल्टिवेटर से पाटे के साथ करके पलेवा करनी चाहिए ताकि खेत में नमी का पर्याप्त स्तर बना रहे। पलेवा के बाद उचित ओट आने पर एक जुताई हैरो से तथा दो जुताइयां कल्टीवेटर से पाटे के साथ करनी चाहिए।

बुआई का समय: उत्तरी मैदानी क्षेत्रों में उर्द की बुआई सामान्यतः फरवरी के अंतिम सप्ताह से अप्रैल के प्रथम सप्ताह तक इस प्रकार निर्धारित करनी चाहिए, ताकि वर्षा शुरू होने से पूर्व फसल की कटाई की जा सके। उत्तरी मैदानी क्षेत्रों में खरीफ के मौसम में उर्द की जून के अंतिम सप्ताह से जुलाई के प्रथम सप्ताह तक कर देनी चाहिए। उड़ीसा, पश्चिमी बंगाल, आंध्र प्रदेश, कर्नाटक, तमिलनाडु तथा केरल में उर्द की बुआई सिंचित क्षेत्रों में धान की कटाई के बाद रबी के मौसम में अक्टूबर के अंतिम सप्ताह से नवंबर के अंतिम सप्ताह तक करनी चाहिए।

बीज की मात्रा एवं उपचार: मार्च-अप्रैल (गर्मियों) में बुआई हेतु 30-35 किग्रा. तथा जुलाई (खरीफ) में बुआई के लिए 12-15 किग्रा. तथा रबी में 18-20 किग्रा. बीज/ हेक्टेयर पर्याप्त रहता है। बुआई से पूर्व बीज को कीट तथा व्याधियों से बचाने के लिए सर्वप्रथम कवकनाशी जैसे- बाविस्टीन या थीरम 2.5 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से उपचारित करके धूप में सुखाकर लगभग 6 घंटे बाद दीमक के बचाव हेतु 2 मिली. क्लोरोपायरीफॉस/ किग्रा. बीज की दर से उपचारित करने के एक दिन बाद राइजोबियम कल्चर से उपचारित करके बुआई करनी चाहिए।

उर्वरक: उर्द के लिए 15-20 किग्रा. नाइट्रोजन, 45-50 किग्रा. फॉस्फोरस/हेक्टेयर पर्याप्त रहता है, जिनकी पूर्ति के लिए 100 किग्रा. डाई अमोनियम फॉस्फेट/ हेक्टेयर खेत में अंतिम जुताई के समय या सीडड्रिल द्वारा जड़ क्षेत्र में प्रयोग करना चाहिए।

बुआई की विधि: बुआई के लिए पंक्ति से पंक्ति की दूरी खरीफ में 45 सेमी. तथा गर्मी व रबी में 30 सेमी. रखनी चाहिए तथा बीज की गहराई 3-4 सेमी. रखनी चाहिए। अंकुरण के 15 दिन बाद पौधों से पौधों की दूरी 5-8 सेमी. बुआई के समय के अनुसार कर देनी चाहिए।

सिंचाई: ग्रीष्म कालीन उर्द की फसल में सिंचाई की आवश्यक पड़ती हैं। एक सिंचाई बुआई के 25-30 दिन बाद करनी चाहिए तथा दूसरी सिंचाई फूल आने से पूर्व करनी चाहिए और यदि बहुत आवश्यक लगे तो तीसरी सिंचाई भी फली बनने के समय काफी लाभदायक रहती है। फूल आने के समय कभी सिंचाई नहीं करनी चाहिए क्योंकि इससे फूल झड़ने का भय रहता है। उर्द में प्रमुख रूप से मौथा, चौलाई, सांठी, मकरा, बादरा, मकोई, हरहुई, चिलमिली आदि अधिक उगते हैं। खरपतवार नियंत्रण के लिए बुआई के 24 घंटे के अंदर पेन्डीमेथीलीन (स्टाम्प) 3 ली. दवा 500-600 ली. पानी में मिलाकर छिड़काव करना चाहिए। छिड़काव के 20-25 दिन तक खेत में किसी प्रकार की कर्षण क्रियायें न करें, ताकि खरपतवारनाशी की परत न टूटे। खड़ी फसल में प्रथम सिंचाई के बाद एक निराई बुआई के 30-40 दिन बाद खुरपी से अवश्य करनी चाहिए।

अपवांछन (रोगिंग): बीज की आनुवंशिक शुद्धता बनाए रखने के लिए फसल की बढ़वार की अवस्था पर, फूल आने की अवस्था पर तथा फली बनने की अवस्था पर खेत में घूमकर पत्तियों के आकार, रंग, पौधों की ऊंचाई तथा फैलाव, फूल के रंग तथा फली के आकार व रंग के अनुसार अन्य किस्मों के पौधों को तथा रोगग्रस्त पौधों को समय-समय पर खेत से बाहर निकाल देना चाहिए।

पृथक्करण दूरी एवं बीज के मानक: उर्द स्वयं परागणित फसल है। अतः शुद्ध बीज पैदा करने के लिए एक किस्म से दूसरी किस्मों के बीज किसी भी प्रकार के मिश्रण की संभावना से बचने के लिए 5-10 मीटर का अंतर अवश्यक है। बीज की आनुवंशिक तथा भौतिक शुद्धता का ध्यान रखते हुए बीज मानकों का पालन सारणी 2 के अनुसार करना चाहिए।

प्रमुख रोग :

1. **पीला चितरी रोग (येलो मुजैक वायरस):** यह वायरस का रोग है, जो सफेद मक्खी के द्वारा फैलता है। इसके प्रकोप से पत्ते पीले हो जाते हैं तथा उन पर गोल धब्बे बन जाते हैं, पत्तियों का आकार घट जाता है, पत्तियों में दरारें पड़ जाती है तथा उनका आकार भी घट जाता है।
2. **सर्कोस्पोरा पर्ण दाग:** यह फफूंदी जनित रोग है। इसके प्रकोप से पत्तियों पर बैंगनी लाल गोल धब्बे बन जाते है तथा बाद में यह फलियों पर भी फैल जाते हैं इसके प्रकोप से फलियां काली पड़ जाती हैं।
3. **पाउड्री मिल्ड्यू:** इसका प्रकोप उर्द उगाए जाने वाले सभी क्षेत्रों मे होता हैं। यह फंफूदी जनित रोग है। इसके प्रकोप से सर्वप्रथम पत्तियों पर सफेद रंग के चकते बनते हैं। पत्तियों तथा हरे भागों पर सफेद चूर्ण सा जमा हो जाता है।
4. **एन्थ्रेकनोज :** यह भी फफूंदी जनित रोग हैं। इसके प्रकोप से पत्तियों पर गहरे भूरे धब्बे पड़ जाते हैं, बाद में धब्बों का आकार बढ़कर पत्तियों के किनारे तक फैल जाते हैं। बाद में यह रोग फलियों पर भी फैल जाता है तथा फलियों पर काले रंग के धब्बे पड़ जाते हैं।
5. **चारकोल विगलन :** यह भी फफूंदी जनित रोग हैं। इस रोग से सर्वप्रथम पौधों की जड़े गल जाती है तथा तने के निचले भाग पर लाल भूरे व काले धब्बे पड़ जाते हैं।

प्रमुख कीट

1. **हेयरी सूंडी (कम्बली कीट) :** यह उर्द का सबसे प्रमुख कीट है। इस कीट के ऊपर छाल होते हैं। यह पत्तियों के हरे भाग को खाकर भारी हानि पहुंचाते हैं।
2. **थ्रिप्स :** ये कीट पत्तियों, फूलों तथा कलियों को खाकर हानि करते हैं। यह फसल में सर्कोस्पोरा पर्ण दाग रोग को फैलाते है।
3. **सफेद मक्खी :** यह प्रमुख कीट है, जो पौधो की पत्तियों तथा कोमल भाग का रस चूसती हैं। यह येलो मुजैक वायरस को फैलाती है।
4. **जैसिड :** ये बहुत छोटे छोटे कीट हैं जो पत्तियों की निचली सतह पर रहकर पत्तियों का रस चूसकर हानि करते हैं इनके प्रकोप से पत्तियां भूरे रंग की हो जाती है तथा बाद में गिर भी जाती हैं।
5. **दीमक :** यह भी बहुत हानिकारक कीट हैं। इसके असंख्य छोटे-छोटे कीट होते हैं जो पौधों की जड़ों को खाकर भारी हानि करते है। जिसके कारण पौधा सूख जाता है।

रोग एवं कीट प्रबंधन

- जहां दीमक का अधिक प्रकोप होता है, वहाँ दीमक के नियंत्रण के लिए 25 किग्रा. रीजेन्ट प्रति हेक्टेयर बुआई से पूर्व खेत में मिलाएं।
- बुआई के 30-35 दिन बाद मेटासिस्टाक्स या मोनाक्रोटोफास 1 ली. दवा 800-1000 ली. पानी में मिलाकर/हेक्टेयर छिड़काव करें।
- कीट तथा वायरस का प्रकोप दिखाई देने पर दूसरा छिड़काव बुआई के 45-50 दिन बाद डायमिथोएट (रोगर) या क्लोरोपायरोफॉस 1 ली. 800-1000 ली. पानी में मिलाकर/हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिए।
- कीट तथा वायरस का अधिक प्रकोप दिखाई देने पर तीसरा छिड़काव बुआई के 55-60 दिन बाद इन्डोसाकार्प (एवांट) 500 मिली. दवा 800-1000 ली. पानी में मिलाकर/हेक्टेयर छिड़काव करना चाहिए।
- फफूंदी जनक रोगों के प्रकट होने पर उपर्युक्त कीट नाशकों के साथ 2 ग्रा./ली. डाइथेन एम 45 का घोल बनाकर छिड़काव करना चाहिए।

कटाई तथा मड़ाई : उर्द की कटाई फसल के सूखने की स्थिति में जब 90 प्रतिशत फलियाँ पक जाएं, तुरंत कर देनी चाहिए तथा काटने के बाद 4-5 दिन तेज धूप में सुखाकर ट्रैक्टर की दांव चलाकर अथवा थ्रेसर से बीज को अलग करना चाहिए। कटाई तथा थ्रेसिंग करते समय थ्रेसिंग फ्लोर तथा मड़ाई मशीन की अच्छी प्रकार सफाई करनी चाहिए ताकि मिश्रण की संभावना न रहें।

ग्रेड़िग एवं पैकिंग : मड़ाई के बाद बीज को दो दिन धूप में सुखाकर, पंखे से सफाई करके ग्रेडिंग करना चाहिए। ग्रेडिंग करते समय ऊपर की जाली का आकार सामान्यतः 5.0 मिली. तथा नीचे की जाली का आकार 2.80 मिमी. रखना चाहिए। बिक्री के समय सामान्यतः 5 किग्रा. के पैक बनाकर बिक्री करनी चाहिए। बैग के ऊपर सारणी-2 में वर्णित बीज मानको के अनुसार सभी आवश्यक सूचनाएं टेग पर लिखनी चाहिए। प्रजनक, आधार, प्रमाणित तथा सत्यापित बीज के लिए क्रमशः पीला, सफेद, नीला तथा हरे रंग का टेग प्रयोग करना चाहिए।

सारणी 2: उन्नत बीज के मानक

खेत एवं बीज मानक	बीज मानकों का स्तर	
	आधारीय बीज	प्रमाणित बीज
पृथक्करण दूरी	10 मीटर	5 मीटर
अन्य प्रजाति के पौधे	0.10 प्रतिशत	0.20 प्रतिशत
फसल निरीक्षण की संख्या	2 बार	2 बार
बीज ढ़ेर का आकार (अधिकतम)	200 क्विंटल	200 क्विंटल
शुद्ध बीज (न्यूनतम)	98 प्रतिशत	98 प्रतिशत
अक्रिय तत्व (अधिकतम)	2 प्रतिशत	2 प्रतिशत
अन्य फसलों के बीज (अधिकतम)	5 प्रति किग्रा.	10 प्रति किग्रा.
कुल खरपतवारों के बीज (अधिकतम)	5 प्रति किग्रा.	10 प्रति किग्रा.
अन्य प्रजाति के बीज (अधिकतम)	10 प्रति किग्रा.	20 प्रति किग्रा.
अंकुरण कठोर बीज सहित (न्यूनतम)	75 प्रतिशत	75 प्रतिशत
बीज में नमी (अधिकतम)	9 प्रतिशत	9 प्रतिशत
वायुरोधी पैकिंग के दौरान बीज में नमी (अधिकतम)	8 प्रतिशत	8 प्रतिशत
कार्यशील बीज के नमूना (शुद्धता विश्लेषण)	700 ग्रा.	700 ग्रा.
कार्यशील बीज का नमूना (अन्य किस्मों की गणना)	1000 ग्रा.	1000 ग्रा.
बीजजनित बीमारियों से प्रभावित पौधे	0.10 प्रतिशत	0.20 प्रतिशत

उर्द का शुद्ध बीज

उर्द का पौधा

अतिरिक्त कृषि आय के साथ मृदा स्वास्थ्य सुधार में भी सहायक: ग्रीष्मकालीन (जायद) मूँग की खेती

हरि सिंह मीना[1], सुरेन्द्र कुमार मीना[1], मुकेश कुमार मीना[1], बिन्द्र सिंह[2], एवं प्रलोय कुमार भोमिक[3]

[1]पादप कार्यिकी संभाग, [2]मृदा विज्ञान एवं कृषि रसायन संभाग, [3]आनुवंशिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान नई दिल्ली 110012

दलहनी फसलों में मूँग की बहुमुखी भूमिका है। इसमें प्रोटीन अधिक मात्रा में पाया जाता है, जो स्वास्थ्य के लिए अत्यधिक महत्वपूर्ण है। मूँग के दानों में 25% प्रोटीन, 60% कार्बोहाइड्रेट, 13% वसा तथा अल्प मात्रा में विटामिन 'सी' पाया जाता हैं। इसमें विटामिन- बी कॉम्प्लेक्स, कैल्शियम और पौटेशियम भरपूर मात्रा में होता है। मूँग सामान्यतः साबुत छिल्के के साथ, बिना छिल्के के, अंकुरित कच्चा, भिगोकर या उबालकर खाया जा सकता है। मूँग का प्रयोग सलाद, सूप, सब्ज़ी और अन्य स्वादिष्ट व्यंजन बनाने के लिये किया जाता है। मूँग से मिले स्टार्च को निकालकर इससे जैली और पारदर्शी नूडल्स बनाये जाते हैं। मूँग की दाल से दही-बड़े, हलवा, लड्डू, खिचड़ी, नमकीन, कचोड़ी, पकोड़े, चीला, समोसे, सलाद, चाट, सब्ज़ी, खीर, सूप, सेण्डविच, स्टर फ्रॉय, पेन केक, डोसा, स्प्रिंग रोल, मूँग-उड़द, वड़ा आदि बनाए जाते हैं। यह आसानी से पचने की वजह से, बीमार होने पर चिकित्सक मूँग की खिचड़ी या मूँग की दाल खाने की सलाह देते हैं।

मूँग सभी मौसम में उगाई जाने वाली मुख्य दलहनी फसल है। इसे उत्तरी भारत में वर्षा ऋतु (खरीफ) तथा ग्रीष्म ऋतु (जायद) में, जबकि दक्षिणी भारत में इसे रबी के मौसम में उगाते हैं। लेकिन अधिकांश किसानों को ग्रीष्मकालीन (जायद) मूँग की खेती के बारे में पर्याप्त जानकारी नहीं होने के कारण जायद ऋतु में इसकी खेती कम की जाती है।

मूँग की वृद्धि व विकास के लिए शुष्क मौसम तथा उच्च तापक्रम की आवश्यकता होती है, इसलिए उत्तर भारत की ग्रीष्मकालीन जलवायु इसकी खेती के लिए उपयुक्त है। जायद मूँग की फसल 60-70 दिन में पककर तैयार हो जाने के कारण इसकी बुआई रबी फसल की कटाई के बाद खाली पड़े खेतों में करने से अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है तथा खरीफ फसल की बुआई भी बिना किसी देरी के, समय पर की जा सकती है। जायद में खरीफ के मौसम की तुलना में फसलों में रोग व कीटों का प्रकोप कम होता है। उत्तरी इलाकों मे चलने वाली तेज हवाओं से होने वाले वायु अपरदन को कम किया जा सकता है। इसके अलावा मूँग दलहनी फसल होने के कारण, इनकी जड़ों (गाठों) में राइजोबियम जीवाणु पाये जाते हैं, जो वायुमंडलीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण करके मृदा में पौधों के लिए उपलब्ध कराने में सहायक होते हैं। जिससे मृदा की उर्वरकता में वृद्धि होती है।

कैसे करें जायद मूँग की खेती

जलवायु एवं मृदा: जायद मूँग की फसल के लिए उच्च तापक्रम की आवश्यकता होती है। इसकी खेती सभी प्रकार की भूमि में सफलतापूर्वक की जा सकती है, लेकिन समुचित जल निकास तथा पी. एच. मान 7-8 वाली दोमट तथा बलुई दोमट मृदा सबसे उपयुक्त मानी जाती है। कुछ क्षेत्र, जैसे -पेटा कास्त वाला क्षेत्र, जलग्रहण वाले क्षेत्र एवं बलुई दोमट, काली तथा पीली मिट्टी जिसमें जलधारण की क्षमता अधिक होती है, वहां पर जायद मूँग की खेती करना अधिक लाभप्रद होता है।

बीज की मात्रा एवं बीजोपचार: जायद में बीज की मात्रा 10-12 किग्रा./एकड़ लेना चाहिए। 1 ग्राम कार्बेन्डाजिम या 2-3 ग्राम थीरम फफूंदनाशक दवा से प्रति किग्रा. बीज के हिसाब से उपचारित करने से बीज एवं भूमि जन्य बीमारियों से फसल की सुरक्षा होती है। इसके अतिरिक्त बीजों को सर्वप्रथम (5 ग्राम/किग्रा. बीज के हिसाब से)

राइजोबियम कल्चर फिर पी.एस.बी. कल्चर (5-6 ग्राम/किग्रा. बीज के हिसाब से) तथा अंत में जैविक फफूंदनाशी ट्राइकोडर्मा 6-8 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें। बीजों को राईजोबियम से उपचारित करने हेतु आधा लीटर पानी में 125 ग्राम गुड को घोलकर गर्म करें तथा ठंडा होने पर शाकाणु संवर्ध (कल्चर) मिला दें। इस मिश्रण की एक एकड़ में बोये जाने वाले बीजों पर भली-भांति परत चढ़ा दें व छाया में सुखाकर शीघ्र ही बुआई करें।

बुआई का समय एवं विधि: ग्रीष्मकालीन मूँग की बुआई रबी फसलों जैसे अरहर, गन्ना, सरसों, आलू तथा गेहूं की कटाई के बाद 15 मार्च से 15 अप्रैल तक करनी चाहिए। बीज अंकुरण के लिए पर्याप्त नमी बनी रहे इसके लिए बुआई से पहले पलेवा सिंचाई करते हैं। बीज की बुआई में कतार से कतार की दूरी 25 से 30 सेंटीमीटर तथा कूंड में 4 से 5 सेंटीमीटर गहराई पर करनी चाहिए, जिससे की गर्मी में जमाव अच्छा हो सके।

खाद व उर्वरक की मात्रा एवं देने की विधि: उर्वरकों का प्रयोग मृदा परीक्षण के बाद मिट्टी की जरूरत के अनुसार ही करना चाहिए। सामान्यंत: मूँग की फसल के लिए 10 से 15 किग्रा. नाइट्रोजन, 40 किग्रा. फॉस्फोरस, 20 किग्रा. पोटाश और 20 किग्रा. सल्फर/हेक्टेयर के हिसाब से प्रयोग करना चाहिए। इन सभी उर्वरकों की पूरी मात्रा बुआई के समय कूड़ो में बीज से 2 से 3 सेंटीमीटर नीचे देने से अच्छी पैदावार मिलती है।

जायद मूँग की किस्में: जायद में उत्पादन हेतु पी.डी.एम. 11, पी.डी.एम. 139 (सम्राट), पूसा विशाल (विषाणु जनित पीली चित्ती रोग से प्रतिरोधी), आई.पी. एम. 2-3, आई.पी.एम. 205-07, आई.पी.एम. 409-4, एच.यू.एम.-16 तथा टी.एम.वी.-37 प्रजातियां उपयुक्त होती हैं। मूँग की कुछ प्रजातियाँ ऐसी भी हैं जो खरीफ और जायद दोनों में उत्पादन देती हैं जैसे की पंत मूँग 2 (यह पीला मोजैक विषाणु रोग के लिए मध्यम प्रतिरोधी है), नरेन्द्र मूँग 1 (पीला मोजेक प्रतिरोधी), मालवीय ज्योति, सम्राट, मालवीय जाग्रति, यह प्रजातियां दोनों मौसम में उगाई जा सकती हैं। जायद मे कम अवधि मे पकने वाली उन्नत किस्मों की बुआई करनी चाहिए ताकि फली अवस्था पर बारिश के शुरुआत से होने वाले नुकसान को बचाया जा सके तथा सिंचाई की भी कम आवश्यकता पड़े।

सिंचाई: जायद मूँग की फसल में पहली सिंचाई, बुआई के 20 से 25 दिन बाद और बाद में हर 10 से 15 दिन के अंतराल पर सिंचाई करते रहना चाहिए, जिससे अच्छी पैदावार मिल सके।

निराई व गुड़ाई: बुआई के 30 से 35 दिन बाद निराई-गुड़ाई करनी चाहिए, जिससे खरपतवार नष्ट होने के साथ-साथ मृदा में वायु का संचार बढता है जो की मूलग्रंथियों में क्रियाशील जीवाणु द्वारा वायुमंडलीय नाइट्रोजन एकत्रित करने में सहायक होती है। खरपतवार का रासायनिक नियंत्रण जैसे कि पेंडामेथालिन 30 ई.सी. की 3 लीटर अथवा एलाकोलोर 50 ई.सी. 3 लीटर मात्रा को 600 से 700 लीटर पानी में घोलकर बुआई के 2 से 3 दिन के अंदर बीज अंकुरण से पहले प्रति हैक्टर की दर से छिड़काव करना चाहिए।

फसल संरक्षण: मूँग की फसल में यदि मोयला, हरा तैला या फली छेदक का प्रकोप हो तो अज़ाडीरेक्टिन 0.03 प्रतिशत ई.सी. 1.5 लीटर या अज़ाडीरेक्टिन 0.03 प्रतिशत ई.सी. 750 मिलीलीटर 300 मिलीलीटर/हेक्टेयर की दर से पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

1. मूँग में चित्ती जीवाणु रोग का प्रकोप होने पर स्ट्रेप्टोसाइक्लिन 20 ग्राम तथा सवा किग्रा. कॉपर ऑक्सीक्लोराइड का प्रति हेक्टेयर की दर से पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।
2. मूँग में पीत शिरा मोज़ेक रोग होने पर रोगग्रसित पौधों को उखाड़ दें एवं डायमिथोएट 30 ई.सी. एक लीटर दवा को 300 लीटर पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें। आवश्यक हो तो 15 दिन के अंतराल पर छिड़काव दोहराए।
3. छाछ्या रोग की रोकथाम हेतु प्रति हेक्टेयर ढाई किग्रा. घुलनशील गंधक अथवा एक लीटर कैराथियॉन (0.1 प्रतिशत) के घोल का पहला छिड़काव रोग के लक्षण दिखाई देते ही एवं दूसरा छिड़काव 10 दिन के अंतर पर करें।

4. पीलिया रोग के लक्षण दिखाई देते ही 0.1 प्रतिशत गंधक के तेजाब या 0.5 प्रतिशत फेरस सल्फेट का पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें।

फसल कटाई-मड़ाई: जब फसल में अधिकांश फलियां पकने लग जाएं अर्थात काली पड़ने लग जाएं तभी कटाई करनी चाहिए। कुछ क़िस्मों में फलियां एक साथ नहीं पकती हैं, तो उन किस्मों में आवश्यकतानुसार फलियों को हाथों सें तोड़ना चाहिए। फलियों को कटाई या तुड़ाई करने के बाद खलिहान में अच्छी तरह सुखाकर मड़ाई करना चाहिए। इसके पश्चात ओसाई करके बीज और इसका भूसा अलग-अलग कर लेना चाहिए।

उपज: इस प्रकार जायद में उन्नत कृषि तकनीक अपनाकर 10-15 क्विंटल/हैक्टर मूँग की उपज प्राप्त की जा सकती है।

ग्रीष्मकालीन (जायद) मूँग की खेती के लाभ

- जायद के मौसम में मूँग की फसल उगाकर खेत को खाली छोड़ने की बजाय अतिरिक्त लाभ लिया जा सकता है।
- मूँग की फसल के अवशेषों में कार्बन एंव नाइट्रोजन अनुपात कम होने के कारण ये सूक्ष्मजीवों द्वारा कम समय पर आसानी से विघटित कर दी जाती है, जिसके कारण ये मृदा में नाइट्रोजन एवं कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ाने में सहायक होती हैं।
- मूँग की जड़ों में ग्लोमेलिन प्रोटीन पायी जाती है जो कि गोंद की तरह मृदा कणों को स्थिरता प्रदान करती है, जिससे मृदा संरचना में सुधार होता है तथा मृदा जल संचयन में वृद्धि एंव मृदा अपरदन में कमी होती है।
- सामान्यदत: मूँग की फसलों को कम पानी की आवश्यकता होती है। इसके अतिरिक्त, ये फसलें अपनी पत्तियों से भूमि की ऊपरी सतह को ढक लेती हैं जिससे भूमि की सतह से पानी का वाष्पीकरण कम होता है।
- लगातार अनाज वाली फसलों को उगाने से उन पर लगने वाले कीट एंव बीमारियों का प्रकोप अधिक होने लगता है। सामान्यउत: अनाज वाली फसलों पर लगने वाले कीट एंव बीमारियों का प्रकोप दलहनी फसलों पर नहीं होता है क्योंकि कीट एवं व्याधियों के रोगजनकों को जीवनचक्र पूरा करने के लिए उचित माध्यम नहीं मिल पाता है इसलिए इन फसलों को फसल चक्र में शामिल करने से कीट व बीमारियों के निवारण में सहायता मिलती है।

बीज उपचार: पर्यावरण अनुकूल तकनीक

अतुल कुमार एवं देवेन्द्र कुमार यादव

बीज विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारत एक कृषि प्रधान देश है। हमारे यहां छोटे किसानों की संख्या ज्यादा है, जिनके पास छोटे-छोटे खेत हैं और प्रायः खेती ही उनके जीवन-यापन का प्रमुख साधन है। आधुनिक समय में खाद्यान्न की मांग बढ़ती जा रही है तथा आपूर्ति के संसाधन घटते जा रहे हैं। जिसे प्रौद्योगिकी चुनौतीपूर्ण की अपेक्षा ज्यादा जटिल हो गई है। विज्ञान के नवीन उपकरणों, तकनीकों, तरीकों तथा प्रयोगों से किसानों की स्थिति में सुधार हुआ है तथा नवीन तकनीकों का प्रयोग करने से उनकी जीवन शैली में तीव्र बदलाव आए हैं। इसी को ध्यान में रखते हुए किसान, नई-नई तकनीकों का उपयोग करके उत्पादन तथा उत्पादकता को बढ़ा सकते हैं। इन्हीं में से एक तकनीक बीजोपचार है, जिसको सुनियोजित तरीके से अपनाने से खेती की उत्पादकता बढ़ सकती है।

यह एक सस्ती तथा सरल तकनीक है, जिसे करने से किसान भाई बीजजनित एवं मृदाजनित रोगों से अपनी फसल को क्षतिग्रस्त होने से बचा सकते हैं। इस तरीके में बीज को बोने से पहले फफूंदनाशी या जीवाणुनाशी या परजीवियों का उपयोग करके उपचारित करते हैं। हमारे देश में रोगों एवं कीटों का प्रकोप अधिक होता है जिससे उपज को बहुत अधिक क्षति होती है। उन्नत किस्मों के प्रयोग, पर्याप्त उर्वरक देने व सिंचाई के अतिरिक्त यदि पौद संरक्षण के उचित उपाए न किए जाएं, तो फसल की अधिकतम उपज नहीं मिल सकती है।

बीज की गुणवत्ता को बनाए रखने के लिए बीजोपचार करना अति महत्वपूर्ण है, जैसे बच्चे को सही समय पर टीका नहीं लगने पर जीवन भर बहुत सारे रोगों का खतरा बना रहता है, वैसे ही अगर पौधे का टीकाकरण (बीजोपचार) ना किया जाए, तो बहुत सारे रोगों के संक्रमण होने का भय बना रहता है।

बीजोपचार की विधियां

बीजोपचार हेतु निम्नलिखित विधियां अपनाई जा सकती है:

- **जीवाणु बीजोपचार:** इस विधि में सूक्ष्म परजीवीनाशी जैसे *ट्राइकोड्रमा विरिडी, ट्राइकोड्रमा हारजिएनम*, स्यूडोमोनास, फ्लोरेसेंस इत्यादि का उपयोग करके बीज को उपचारित करते हैं।
- **स्लरी बीजोपचार:** यह विधि समय की बचत वाली विधि है। इस विधि से बीज बुआई के लिए जल्दी तैयार हो जाते हैं। इसमें अनुशंसित मात्रा की दवा के साथ थोड़ा पानी मिलाकर लेई बना लेते हैं। इस लेई को बीज में मिलाकर छाया में सुखा लेते हैं सूखे हुए बीजों से यथाशीघ्र बुआई करते हैं। इस विधि द्वारा बीज कम समय में बुआई के लिए जल्दी तैयार हो जाते हैं।
- **सूखा बीजोपचार:** इस विधि में बीज को अनुशंसित मात्रा की दवा के साथ सीड ड्रेसिंग ड्रम में डालकर अच्छी तरह हिलाते हैं, जिससे दवा का कुछ भाग प्रत्येक बीज पर चिपक जाए। सीड ड्रेसिंग ड्रम का उपयोग तब करते हैं, जब बीज की मात्रा ज्यादा होती है। अगर बीज सीमित मात्रा में हो, तो सीड ड्रेसिंग ड्रम के स्थान पर मिट्टी के घड़े का प्रयोग कर सकते हैं। सीड ड्रेसिंग ड्रम या मिट्टी के घड़े में बीज की मात्रा दो तिहाई से ज्यादा नहीं रहनी चाहिए।
- **भीगा बीजोपचार:** इस विधि का उपयोग सब्जियों के बीजों के लिए ज्यादा लाभदायक होता है। इस विधि में अनुशंसित मात्रा की दवा का पानी में घोल बना कर बीज को कुछ समय के लिए उसमें छोड़ देते हैं तथा कुछ समय पश्चात छायादार स्थान में 6-8 घंटे सुखाकर यथाशीघ्र बुआई करते हैं।

- **गर्म जल द्वारा बीजोपचार:** यह विधि जीवाणु एवं विषाणुओं की रोकथाम के लिए ज्यादा लाभदायक होती है। इस विधि में बीज या बीज के रूप में प्रयोग होने वाली पादप सामग्री जैसे कंद को 52-54°C तापमान पर 15 मिनट तक रखते हैं, जिससे रोगजनक नष्ट हो जाते हैं लेकिन बीज अंकुरण पर कोई विपरीत प्रभाव नहीं पड़ता है।
- **सूर्यताप द्वारा बीजोपचार:** यह विधि गेहूं, जौ एवं जई आदि फसलों के बीजों, जिनमें अनावृत कंडवा रोग लगता है, आदि के नियंत्रण के लिए लाभदायक है। इस विधि में बीज को पानी में कुछ समय (3-4 घंटे) के लिए भिगोते हैं और फिर सूर्यताप में 4 घंटे तक रखते हैं। बीज के आंतरिक भाग में रोगजनक का कवकजाल नष्ट हो जाता है। रोगजनक को नष्ट करने के लिए रोगजनक की सुषुप्तावस्था को तोड़ना होता है, जिससे रोगजनक नाजुक अवस्था में आ जाता है, जोकि सूर्य की गर्मी द्वारा नष्ट किया जा सकता है। यह विधि गर्मी के महीने (मई-जून) में कारगर रहती है।
- **राईजोबियम कल्चर से बीजोपचार:** इस विधि में खरीफ की पाँच मुख्य फसलों (अरहर, उड़द, मूँग, सोयाबीन एवं मूँगफली) तथा रबी की तीन दलहनी फसलें (चना, मसूर तथा मटर) में राईजोबियम कल्चर से बीजोपचारित कर सकते हैं। 100 ग्राम कल्चर आधा एकड़ जमीन में बोए जाने वाले बीजों को उपचारित करने के लिए पर्याप्त होता है। इस विधि में 1.5 लीटर पानी में लगभग 100 ग्राम गुड़ डालकर खूब उबाल लेते हैं। ठंडा होने पर एक पैकेट कल्चर डालकर अच्छी तरह मिला लेते हैं। इस कल्चरयुक्त घोल के साथ बीजों को इस तरह मिलाते हैं कि बीजों पर कल्चर की एक परत चढ़ जाए। उपचारित बीजों को छाया में सुखा कर यथाशीघ्र बुआई करते हैं। प्रमुख धान्य एवं दलहनी फसलों के लिए अनुशंसित बीजोपचार विधियों का विवरण सारणी 1 में दिया गया है तथा प्रमुख सब्जियों में अनुशंसित बीजोपचार विधियों का उल्लेख सारणी 2 में किया गया है।

(कम मात्रा में बीज के उपचार का दृश्य, खासकर प्रयोगात्मक उपयोग के लिए)

(अनुपचारित गेहूं का बीज)

(कार्बोक्सिन एवं थीरम 2.5 ग्राम/किग्रा. की दर से)

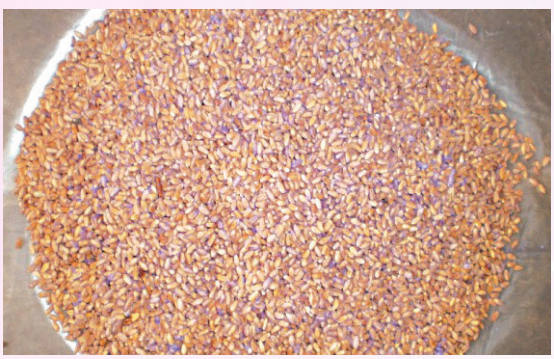

उपचारित गेहूं का बीज

सारणी 1: धान्य व दलहनी फसलों के बीजोपचार हेतु अनुशंसा

क्र.सं.	फसल का नाम	प्रमुख रोग एवं कीट	रसायन/जैवनाशी का नाम	रसायन/जैवनाशी की मात्रा (ग्राम/ किग्रा. बीज)
1.	गेहूं	अनावृत कंड	कार्बोक्सीन 37.5 प्रतिशत + थीरम 37.5 प्रतिशत	2.5
		अन्टनेरिया पत्र लांक्षण, अंगमारी हेल्मिंथेस्पोरियम	कार्बेंडाजिम	2
		दीमक	क्लोरपायरीफॉस 20 ई.सी.	5 मि.ली.
2.	धान	झुलसा/बलास्ट, पत्र लांक्षण भूरी चित्ती रोग, धड़ सड़न	कार्बेंडाजिम/ कैप्टॉन	2 2
		जीवाणु पर्ण अंगमारी	*स्यूणडोमोनास फलोरेसेंस* 0.5% WP	10
		दीमक	क्लोणरपारीफॉस 20 ई.सी.	3 मि.ली.
3.	अरहर, चना, मसूर, मूँग	उकठा रोग	कार्बेंडाजिम / थीरम	2/3
		उकठा एवं झुलसा	*ट्राईकोड्रमा विरिडी* 1% WP	9
		दीमक	क्लो रपारीफॉस 20 ई.सी.	5 मि.ली.
4.	मक्का	हेल्मिंथेस्पोरियम, शीथ ब्लाइट	थीरम / कैप्टॉन	3
5.	मूँगफली	बीज एवं मिट्टी जनित रोग	कार्बेंडाजिम / थीरम	2/3
6.	सरसों	श्वेत किट्ट	कार्बेंडाजिम / थीरम	2/3
7.	अलसी	उकठा रोग	थीरम	3
8.	गन्ना	लाल सड़न रोग	कार्बेंडाजिम / थीरम	2/3
			ट्राईकोड्रमा विरिडी	6

सारणी 2: सब्जियों के बीजोपचार हेतु अनुशंसा

क्र.सं.	फसल का नाम	प्रमुख रोग एवं कीट	रसायन/जैवनाशी का नाम	रसायन/जैवनाशी की मात्रा (ग्राम/ किग्रा. बीज)
1.	गाजर, प्याज, मूली	बीज एवं मिट्टी जनित रोग	कार्बेंडाजिम	2
2.	बैंगन	जीवाणु मुरझा रोग	*स्यूणडोमोनास फ्लोरिसेंस* 0.5% WP	10

3.	शिमला मिर्च	जड़ सूत्रकृमि	*स्यूसडोमोनास फ्लोरिसेंस*	10
4.	मटर	उकठा रोग	कैप्टान/थीरम	3
5.	भिंडी	उकठा रोग	कैप्टान/थीरम	3
6.	गोभी	मृदुरोमिल आसिता	कार्बेंडाजिम	2
		मिट्टी एवं बीज जनित रोग	*ट्राईकोड्रमा विरिडी* 1% WP	4-5
		जड़ सूत्रकृमि	स्यूडोमोनास फ्लोरिसेंस 0.5% WP	10
7.	आलू	मिट्टी एवं कंद जनित रोग	मेंटालैक्सिल + मैंकोजेब	2
8.	टमाटर	उकठा	कार्बेंडाजिम	2
			स्यूबडोमोनास फ्लोरिसेंस 0.5% WP	10
9.	मिर्च	मिट्टी जनित रोग	*ट्राईकोड्रमा विरिडी* 1% WP	4-5
		जैसिड, एफीड, थ्रीप्स	इमिडाक्लोपिड 70 WS	2 मि.ली.

- **पौधा (बिचड़ा) उपचारः** इस विधि द्वारा मुख्यतः धान, टमाटर, बैंगन, गोभी, मिर्च इत्यादि के पौधों को जीवाणु रोगों से बचाया जाता है। इस विधि में रोपाई पहले पौधों की जड़ों को एंटीबायोटिक (स्ट्रेप्टोसाईक्लिन) के घोल में डुबोकर उपचारित करते हैं।

बीजोपचारित करने की विधि

बीज उपचारित करने के लिए सर्वप्रथम एफ.आई.आर. क्रम याद रखना चाहिए। बीज को सर्वप्रथम फफूंदनाशी से उसके बाद कीटनाशी से (2 घंटे बाद) और अंत में राईजोबियम कल्चर से (4 घंटे बाद) उपचारित करें।

बीजोपचार हेतु सावधानियां

- बीज उपचारित करने के लिए निर्धारित मात्रा का ही प्रयोग करें।
- बीजोपचार करने के बाद बीज को छायादार स्थान में ही सुखाएं।
- रसायनों के प्रयोग से पहले उसकी एक्सपायरी तिथि अवश्य जांच लें।
- उपचार के बाद डिब्बों तथा थैलों को मिट्टी के अंदर अवश्य दबा दें तथा अच्छी तरह साबुन से हाथ धो लें।
- रसायनों को बच्चों तथा मवेशियों की पहुंच से दूर रखें।
- रसायनों के प्रयोग के समय न तो कुछ खाएं और न ही धूम्रपान करें।
- दवा को उसके मूल डिब्बे में रखें तथा उसका लेबल खराब न होने दे।
- खाद्य, जल या शराब के डिब्बों में कीटनाशक रसायन को कभी न भरें।

निष्कर्ष

- यह एक सस्ती तथा सरल विधि है।
- कोई भी किसान भाई बड़ी आसानी से इस विधि को अपना सकते हैं।
- रसायनिक पदार्थों का प्रयोग इस विधि में कम से कम होता है।

- बीजोपचार करने के बाद खड़ी फसल में सुरक्षा के अन्य उपायों की कम आवश्यकता पड़ती है, इसलिए यह एक पर्यावरण अनुकूल तकनीक है।
- फसल उत्पादन में इस विधि द्वारा किसान भाइयों को 15-20 प्रतिशत तक लाभ मिलता है।

इन तथ्यों से यह निष्कर्ष निकलता है कि किसानों की खुशहाली में उन्नत बीज का जितना अहम योगदान है, उतना ही अहम योगदान बीजोपचार का भी है। अतः बीजोपचार, बीज उत्पादन में एक महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

बीज उपचार - खुशहाली का आधार।
लागत कम - लाभ हजार।।

सही स्थान पर बोया गया सुकर्म का बीज ही महान फल देता है।
- कथा सरित्सागर

पादप परजीव सूत्रकृमि एवं सूक्ष्म जीवों के पारस्परिक संबंध से फसलों के रोग में तीव्रता

हरेंद्र कुमार शर्मा, पंकज एवं सोनी

सूत्रकृमि विज्ञान संभाग, भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

पादप परजीव सूत्रकृमि करीब 20 प्रतिशत आम सूत्रकृमि की संख्या के आधार पर मिट्टी में रहने वाले प्राणी है। बहुसंख्यक कोशिका वाले प्राणी जगत में सूत्रकृमि सर्वाधिक संख्या में पाए जाते हैं। यदि हम प्राकृतिक पर्यावरण के आधार को देखें, खेती करने योग्य मिट्टी के करीब 1.2X1010 कृमि प्रति हेक्टेयर में उपलब्ध हो सकते हैं। स्वतंत्र रूप से निर्वाह करने वाले कृमि सड़े कार्बनिक खाद पर विकसित रहते हुए पर्यावरण परिप्रेक्षय में हो रहे कार्यों में निरंतर योगदान प्रदान कर, पर्यावरण का संतुलन बनाए रखने में सहायक हैं। पादप परजीव कृमि भोजन करने वाली क्रिया के आधार पर कई प्रकार की विविधता दर्शाते हैं- इनमें जमीन के भीतर रहने वालों व पौधे के ऊपरी भाग जैसे पत्ती, फूल के परजीव हैं, जिससे ये बहुफसली परजीव बनकर अपने आपको विभिन्न वातावरण में अनुकूलता प्रदान करते हैं। सूत्रकृमि के ऊपरी भाग में एक सूई जैसा तंत्र होता है, जिससे वह जड़ों की कोशिकाओं को अंदर तक भेदकर अपने खाद्य पदार्थ को शोषित/पोषित करता है। जिससे जड़ों में घाव व भौतिक स्थिति को क्षति पहुंचती है। जब जड़ों में इस प्रकार की क्षति होती है, तब अन्य सूक्ष्मजीव को जड़ों के तल में प्रवेश करने का अवसर मिलता है, जोकि अन्यथा मिट्टी में ही रह जाते हैं। न्यूनतम संख्या में सूत्रकृमि न कि सूक्ष्म जीवों को जड़ों में प्रवेश के लिए सहायक है, अपितु यह पौधों के रक्षा तंत्र व भौतिक क्रिया को भी प्रभावित करते है। सूत्रकृमि द्वारा पौधों की ऊपरी सतह में क्षति के उपरांत पौधों के कुछ पदार्थों का रिसाव होता है जोकि वहां रह रहे जीवों को प्रभावित करने की क्षमता रखता है। चूंकि सूत्रकृमि पर्यावरण में विभिन्न भूमिका निभा रहे हैं, जिसके कारण यह एक महत्वपूर्ण प्राणी समझे जा सकते हैं। कृषि परिवेश में आमतौर पर सूत्रकृमि द्वारा पौधों की उपज में 12 प्रतिशत की क्षति होती है अपितु यह नुकसान सूत्रकृमि की संख्या पर मुख्यतः एवं पौधों की प्रगति व वातावरण पर भी निर्भर है, जिससे फसल को असफलता प्रदान होती है। पौधों की उपज में नुकसान आमतौर पर गरम ऋतु वाले क्षेत्रों में अधिक देखा गया है। वनस्पति सर्द ऋतु वाले क्षेत्रों में कम देखा गया है। जबकि सर्द ऋतु के कृमि कुछ भिन्न है, वे भी बहुतायत तक नुकसान देय के लिए तत्पर हैं। सब्जियों व दालों में सूत्रकृमि बहुत ही महत्वपूर्ण हैं, परंतु आर्थिक नुकसान वाले फलों जैसे- अमरूद, अनार आदि में प्रमुख हैं। चूंकि ये फसलें कई ऋतु वाली हैं, सूत्रकृमि निरंतर इन पर परजीव रहकर अत्यधिक फसल में क्षति पहुंचाते हैं। मिट्टी के परिवेश में भिन्न प्रकार के प्राणी निर्वाह करते हैं। अतः उनमें पारस्परिक संबंध स्थापित होना स्वाभाविक है जोकि एक प्रतिस्पर्धा को जन्म देता है। इस प्रकार से सूत्रकृमि के प्रबंधन में जटिलता उत्पन्न होती है। ऐसा पाया गया है कि सूत्रकृमि अकेले पैदावार में 15 प्रतिशत की गिरावट के लिए उत्तरदायी है एवं अन्य जीवों के साथ मिलकर यह क्षति बढ़कर 25-30 प्रतिशत की हो जाती है। इसके अलावा सूत्रकृमि फसलों की प्रतिरोधकता में भी कमी का एक कारक होता है। पादप परजीव सूत्रकृमियों में फैलाव व संख्या के आधार पर जड़गांठ, गुर्देनुमा छान्य पुट्टी कृमि आदि प्रमुख हैं।

जड़गांठ कृमि व फफूंद का मिलन: जड़गांठ कृमि व फफूंद का पारस्परिक संबंध पौधों के रोग प्रक्रिया में अति मान्य है। फफूंद, जो मिट्टी में निवास करती है व मिट्टी द्वारा उत्पन्न होने के लिए जानी जाती है, उनमें पौधों को सुखाने वाली व सड़न पैदा करने वाली प्रमुख है। सूत्रकृमि या फफूंद में कौन सा प्राणी हावी होकर फसल के रोग शैली को बदलता है, यह निर्भर करता है कि फसल के लिए कौन प्राथमिकता पाता है। इसके अलावा अजीव

कारक एवं समय भी बीमारी शैली को परिवर्तित करते हैं। ऐसा भी जानते हैं कि सूत्रकृमि फफूंदों के लिए समता व अनुकूलता का वातावरण प्रस्तुत करते हैं। आरंभ में जोकि बाद में सूत्रकृमियों के लिए विनाशकारी सिद्ध होता है, जिसे परिस्थिति में समझौता, संभोक्ता, विरोधी व दोस्ताना जैसा परिभाषित किया गया है। इस प्रकार के जैविक संबंध रोक-टोक प्राकृतिक प्रणाली के अभिन्न अंग हैं और एक तंत्र को संतुलित रखने में अपनी भूमिका निभाते हैं। इसका तात्पर्य है कि किसी भी प्राणी की उत्पत्ति, फैलाव व गुणात्मकता एक सीमा तक होती है, जिसकी एक त्रिकोणी खाद्य सहिंता के तहत नियोजित है। इस प्रकार जीवों में परस्पर संबंध प्रकृति की देन है। इन संबंधों में बदलाव होता है। यदि कोई दूसरा कारक/माध्यम में आता है, जिससे संबंधों में उलझन बन जाती है और घटना क्रम में संशोधन हो जाता है। फफूंद, जोकि फसलों में सड़न उत्पन्न करती है, आमतौर पर शंकाओं/गैर जरूरी जैसे जीव की श्रेणी में आती है जिनकी प्रवृत्ति अभिव्यक्ति में बदलाव का वातावरण नियोजित होता है। एक दूसरे को पहचानने की प्रक्रिया इस प्रकार के संबंध में स्थूल है। पौधों के ऊपर अब यह दिशा निर्देशित है या अपने आप बनता बिगड़ता है, यह कहना मुश्किल होगा। लेकिन इनका आपसी संबंध हाथ व दस्ताने जैसा है। जो आंशिक तौर से दर्शाता है, इस प्रकार का संबंध, इस प्रकार की प्रक्रिया जैविक व कार्बनिक तत्व मिट्टी की भौतिक-रासायनिक गुणों को प्रभावित करते हैं। समयानुसार जीवों में उन्नति पारंपरिक संबंधों का निवारण एक प्रकार से वैज्ञानिकों के लिए चुनौती भी है ।

रोगग्रस्त अमरूद की जड़ें

जड़-गांठ रोग से ग्रस्त अमरुद का पौधा

गेहूं, जौ व राई में भारत के प्रांत पंजाब, हरियाणा, मध्य प्रदेश में खाद्य पुट्टीकृमि एक मुश्किल कीट है। यह कृमि फफूंदों के साथ बीमारी उत्पन्न करने में कमजोर है। लेकिन सूत्रकृमि की संख्या को नियंत्रित करने में फफूंदों का बहुत योगदान है। यद्यपि इस बात से इंकार नहीं किया जा सकता, कि कुछ फफूंद सूत्रकृमि से मिलकर रोग की गति को छेड़कर बीमारी की सांद्रता व घनत्व में परिवर्तन करती हैं।

सूत्रकृमि व जीवाणु की बीमारी का समन्वय: सूत्रकृमि फफूंद की भांति जीवाणुओं से समन्वय स्थापित कर पौध रोग में बदलाव उत्पन्न करते हैं। गेहूं की बाली में दानों के स्थान पर गांठे बनाना सूत्रकृमि का कार्य है, परंतु जीवाणु के साथ यह पूरी बाली को पीले पदार्थ से ग्रसित कर बीमारी व पैदावार में अधिक क्षति सृजन करता है। इसमें मौसम में आर्द्रता व तापमान का योगदान भी है। यह बीमारी राजस्थान व हरियाणा के राज्यों में प्रचालित है। जीवाणु की अधिक गुणात्मकता के कारण, रोग तेजी से बढ़ता है और ज्यादा क्षेत्र में फैलकर ज्यादा नुकसान देने की क्षमता रखता है।

इस प्रकार फफूंद व जीवाणु सूत्रकृमि से मिलकर रोगों की प्रक्रिया को आंशिक रूप से प्रभावित कर फसलों में हो रहे नुकसान को नया रूप प्रदान करते हैं। इस प्रकार से उत्पन्न समस्या में जरूरी है कि किस जीव को नियंत्रित

किया जाए। सर्वप्रथम स्वाभाविक है, सूत्रकृमि को प्रतिबंधित कर दूसरे जीवों को भी नियंत्रित कर पाना संभव हो। इनमें कृषि कार्य विधियों से फसल चक्र, कार्बनिक खाद का उपयोग, गर्मियों में खेत की जुताई, समय पर सिंचाई में परिवर्तन आदि शामिल हैं।

सूत्रकृमि व सूक्ष्म जीव मिलकर एक कुटिल रोग का परिणाम देते हैं एवं रोग से फसल की उपज में हानि आर्थिक दृष्टि से अधिक हो जाती है। इस प्रकार की समस्याओं के निदान हेतु, प्रारंभिक जीव/कीट के नियंत्रण हेतु प्रमुखता प्रदान करें व परंतु दूसरे कीट की संख्या को न्यूनतम बनाए रखने के प्रयास अवश्य हों। यद्यपि सूत्रकृमि की संख्या अधिक होने पर सूत्रकृमि नाशक रसायन जैसे काबोफ्यूरान 1 किग्रा. सक्रिय तत्व का उपयोग खेत के बिजाई के साथ लाइनों में करें तथा बीज उपचार कार्बोफ्यूरान 1 प्रतिशत से करने पर 1 रसायन का प्रयोग फसल के मध्य में और भी कर सकते हैं। सूत्रकृमि की संख्या को नियंत्रित करके फसल अन्य गैर जरूरी परजीवों को भी न्यूनतम किया जा सकता है। अन्य जीवों के नियंत्रण हेतु कुछ फफूंदनाशक का उपयोग अवश्य करें। इस प्रकार रोग को समेकित प्रबंधन प्रदान कर सकते हैं, जिससे लाभ व्यय के अनुपात में भी सुधार होगा।

जब तक आपके पास राष्ट्रभाषा नहीं, आपका कोई राष्ट्र नहीं।

- मुंशी प्रेमचंद

भारतीय भाषाएं नदियां हैं और हिंदी महानदी। हिंदी देश के सबसे बड़े हिस्से में बोली जाती है। हमें इसे राष्ट्रभाषा के रूप में स्वीकार करनी ही चाहिए। मैं दावे के साथ कह सकता हूं कि हिंदी बिना हमारा काम चल नहीं सकता।

- रबिन्द्रनाथ टैगौर

किसान - विकसित तकनीक द्वारा आलू और प्याज का भंडारण

रमेश चंद हरित[1], सुनीता यादव[1], संदीप कुमार[1], ऊषा मीना[2] एवं संदीप कुमार सिंह[3]

[1]-पर्यावरण विज्ञान एवं जलवायु समुत्थानशील कृषि केंद्र,
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012
[2]-जवाहरलाल नेहरू विश्वविद्यालय, नई दिल्ली 110067
[3]-कृषि विज्ञान केंद्र, परवाहा, औरैया, उत्तर प्रदेश

चीन और रूस के बाद भारत 415 लाख टन उत्पादन के साथ आलू का तीसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। भारत के शीर्ष आलू उत्पादक राज्य उत्तर प्रदेश, गुजरात, असम, मध्य प्रदेश, पंजाब और पश्चिम बंगाल हैं। वर्तमान में भारत में उगाए गए आलू के अधिकांश किस्मों को केंद्रीय आलू अनुसंधान संस्थान, कुफरी, शिमला हिमाचल प्रदेश द्वारा विकसित किया गया है। इसलिए उनके नाम के साथ 'कुफरी' उपसर्ग है। कुफरी सिंदूरी, कुफरी चंद्रमुखी, कुफरी ज्योति, कुफरी लवकर, कुफरी बादशाह, कुफरी बहार, कुफरी स्वर्ण, कुफरी अशोक, कुफरी पखराज, कुफरी कंचन आदि आलू की प्रमुख किस्में हैं। इसी तरह 2013-14 में भारत 194 लाख टन प्याज उत्पादन के साथ दुनिया में प्याज का दूसरा सबसे बड़ा उत्पादक देश है। भारत के सबसे बड़ा प्याज उत्पादक राज्य महाराष्ट्र, बिहार, कर्नाटक और गुजरात हैं। प्याज की प्रमुख किस्मों में पूसा व्हाईट फ्लैट, पूसा व्हाइट राउंड, पूसा माधवी, अर्का कल्याण, अर्का निकेतन आदि शामिल हैं। इतने अच्छे उत्पादन के बाद भी, अपर्याप्त भंडारण सुविधा के कारण हमारे किसान भाइयों को अपने उत्पाद को बाजारों में कम कीमत पर बेचना पड़ता है। इसलिए भंडारण की उचित व्यवस्था करना बेहद जरूरी हो जाता है, क्योंकि बाजार की मांग और आवश्यकता के अनुसार इनको कीटों एवं रोगों से बचाव तथा गुणवत्ता हेतु भंडारण के लिए शीत भंडारण जैसी व्यवस्था करना आवश्यक हो जाता है।

बागवानी उत्पाद में आलू को छोड़कर अन्य के भंडारण की कोई उचित व्यवस्था या जगह उपलब्ध नहीं हो पाती है। देश में 23 करोड़ टन जरूरत की तुलना में केवल 3 करोड़ टन क्षमता के शीत भंडारण ही उपलब्ध हैं। महंगी जमीन और उचित प्रशासन नहीं होने के चलते शीत भंडारण क्षेत्र में निजी निवेश नहीं हो पा रहा है। जबकि चालू योजना में भारत सरकार ने कई आकर्षक घोषणाएं भी की हैं, जैसे कोल्ड चेन में 25 फीसदी की सब्सिडी को बढ़ाकर 40 फीसदी कर दिया गया है। फिर भी इसकी सफलता पर संदेह है। केंद्र सरकार ने शीत भंडारण स्थापित करने के लिए एक उच्च स्तरीय समिति का गठन भी किया है। समिति ने 12 लाख टन क्षमता वाले नए शीत भंडारण बनाने और 8 लाख टन क्षमता वाले पुराने शीत भंडारण को आधुनिक बनाने की सिफ़ारिश की है। प्याज की आपूर्ति को सालभर बनाए रखने के लिए डेढ़ लाख टन क्षमता वाले शीत भंडारण कक्ष बनाने का भी सुझाव दिया है। परंतु इन सिफ़ारिशों पर अब तक अमल नहीं हो सका है।

उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में सर्वाधिक शीत भंडारण हैं। लेकिन पुरानी तकनीक पर आधारित होने के कारण इनमें भंडारण की लागत बहुत अधिक आती है। जबकि राज्य सरकारों ने शीत भंडारण के किराए में पिछले तीन साल से संशोधन नहीं किया है। बिजली एवं मजदूर महंगे होने से उत्तर प्रदेश और पश्चिम बंगाल में लगभग सौ कोल्ड स्टोरेज बंद हो चुके हैं। हालांकि, सरकार ने पुराने शीत भंडारण को आधुनिक बनाने के लिए सहायता करने का वादा किया है। इन दोनों राज्यों में भी अधिकतर सिर्फ आलू भंडारण की सुविधाएं उपलब्ध हैं। रिपोर्ट के मुताबिक ढ़ेर सारी योजनाओं के बावजूद इस क्षेत्र में निवेश की हालत बहुत कमजोर चल रही है। बिजली आपूर्ति सुचारु रूप से नहीं होने के कारण परेशानी के साथ-साथ खर्चा भी बढ़ जाता है तथा इसकी लंबी

कटौती होने से उत्पादन के खराब होने की संभावना प्रबल हो जाती है। अगर किसी औद्योगिक क्षेत्र के पानी में नमक अधिक होगा, तो इस कारण से प्लांट के कंडनष्ण जल्दी खराब हो जाते है। जिस आलू-प्याज के उतरते-चढ़ते भावों से राजनीतिक दलों की सत्ता डगमगाने लगती है और सरकार की सांस अटक जाती है उसी उत्पादन को सड़ने से बचाने के लिए किसान संघर्ष कर रहे हैं। इस महंगाई के दौर में किसान के लिए कोल्ड स्टोरेज का किराया वहन करने के साथ-साथ समय पर उसका उत्पादन रखने के लिए जगह उपलब्ध हो पाना भी मुश्किल हो जाता है। कई बार तो सीमांत किसानों के शीतगृह तक माल ले जाने के लिए वाहन मिलना भी बहुत मुश्किल हो जाता है।

बढ़ती पारिवारिक जरूरतों, भौतिक सुविधाओं एवं आधुनिक कृषि के प्रति भारतीय किसान भी जागरूक हो रहे हैं। इस बढ़ती महंगाई के दौर और कृषि क्रियाओं के बढ़ते खर्च की पूर्ति के लिए किसानों को अपने कृषि उत्पादन को सुरक्षित एवं बाजार/मंडियों से अच्छा मुनाफा लेने के लिए किसान सस्ती एवं टिकाऊ स्थानीय तकनीकों का विकास करने पर विचार करने लगे हैं। स्थानीय तकनीकों में एक ओर जहां कम खर्च वहन करना पड़ता है, साथ ही किसानों को कुछ हद तक उत्पादन की ढुलाई और मजदूरी की बचत हो जाती है, क्योंकि इन तकनीकों का निर्माण शीत भंडारण की तुलना में खेत के बहुत नजदीक रहता है। बागवानी उत्पादन में भी आलू-प्याज बहुत संवेदनशील एवं साधारण पर्यावरण पर भंडारण क्षमता कम होने के कारण इनको बचाना बहुत आवश्यक हो जाता है। इन फसलों की कटाई के समय मंडी में उपस्थित बिचौलिए फसल उत्पादन को कम भाव में खरीदने से बचने के लिए स्थानीय किसानों ने इन सब बातों पर गौर करना शुरू कर दिया है तथा बाजार की मांग एवं बढ़ी हुई कीमतों के समय किसान कुछ मुनाफा भी कमा सकता है। शीत भंडारण की तुलना में इसका खर्च भी घटकर बहुत कम हो जाता है। इससे अच्छी उपज के बावजूद कई बार घाटा हो जाता है और उत्पादन का स्टॉक करने पर सड़ जाता है। इसलिए आने वाले समय में हमें आलू और प्याज की तरीकों के द्वारा हम सीमांत किसानों की समस्या का कुछ हद तक निदान कर सकते हैं।

क्या है देसी तकनीक?

आखिरकार किसानों ने इसे सुरक्षित करने के देसी उपाय सोचने के लिए मजबूर होना पड़ा। इसके लिए उन्होंने अपने घर के फर्श पर आलू-प्याज के उत्पादन को फैलाकर रखा, लेकिन फिर भी वह खराब हो गया और इसके सड़ने के कारण फर्श पर दाग भी पड़ जाते हैं। अभी कुछ साल पहले मध्य प्रदेश के इंदौर जिले के सेमलिया चाऊ गाँव के एक युवा किसान, श्री रंजन सिंह ने अपने प्याज के उत्पादन को बचाने के लिए एक स्थानीय तकनीक का विकास किया है, जो काफी हद तक कारगर सिद्ध होने के साथ-साथ किसानों में यह चर्चा का विषय भी है। रंजन सिंह ने हाल ही में कुछ-कुछ दूरी पर ईंटें जमाकर बेस तैयार किया। इसके ऊपर मते लोहे के तार की जाली बिछाई और इस हाल में जाली के ऊपर दो अलग-अलग जगहों पर लोहे की कोठियां जमाई। इन कोठियों के तले काट दिए ताकि हवा आर-पार हो सके। इसके बाद इन कोठियों के अंदर एग्ज़ॉस्ट पंखे लगा दिए गए। फिर इस जाली के ऊपर प्याज का भंडारण कर दिया गया, इस तरह उत्पाद का संपर्क फर्श से भी रहा। अब इन एग्ज़ॉस्ट पंखों के जरिये से हवा पहुंचाई गई। इस तरह प्याज को ऊपर से तो हवा मिलती ही थी और इन पंखों के जरिये से जाली के नीचे से भी हवा मिलने से नीचे का उत्पादन भी खराब नहीं होगा। ठंडे मौसम में तापमान बनाए रखने के लिए एक हाल में दो हैलोजन लैम्प लगाए हैं, जिससे आवश्यक गर्मी बनी रहे। इस तकनीक से प्याज लगभग 5 महीने तक खराब नहीं होती है। इस तकनीक का खर्च 30-40 हजार के बीच में ही आता है। यह युवा किसान इस तकनीक का श्रेय अपने पिता श्री भगवान सिंह इलेक्ट्रिशयन दोस्त श्री दिनेश पटेल और वेल्डर श्री कमल सिंह चावडा को भी देते हैं। अब इसी तर्ज पर अब आलू उत्पादक किसानों ने भी सोचना शुरू कर दिया है।

उत्तर प्रदेश के औरैया जिले के अच्छेल्दा ब्लॉक के कच्छपुरा गाँव के श्री महेश कुमार शाक्य नामक किसान ने भी उपर्युक्त किसान के पद चिन्हों पर चलते हुए अपने

आलू के उत्पादन को बचाने के लिए देसी तकनीक का विकास करने की सफल कोशिश कर रहे हैं। इस तकनीक में किसान किसी छायादार जगह पर ऊंचे स्थान का चुनाव करता है, ताकि उत्पादन के चारों तरफ का पानी इकट्ठा नहीं हो सके, क्योंकि उत्पादन के चारों ओर पानी भरने से नीचे का उत्पादन खराब होने की संभावना बनी रहेगी, जो किसान एवं उत्पादन दोनों के लिए नुकसानदायक है। इसके बाद इस ऊंचे स्थान पर आलू का ढेर लगा दिया जाता है, जिसे धान के पुआल से ढकते हैं। इसको ढकने के लिए पुआल को कुछ इस प्रकार से ढकते हैं कि नीचे (भूमि) के आलू की ओर से शुरू करते हुए और पुआल के ऊपरी (बाली वाले) सिरे के कुछ हिस्से को ऊपर के पुआल के नीचे दबाते हुए आलू के ढेर के ऊपरी हिस्से तक ढ़क देते हैं।

आलू के उत्पादन को भंडारण करने के लिए देसी तकनीक

इस तकनीक से आलू उत्पादन को ढकने से पानी की एक बूंद भी आलू के पास तक नहीं पहुंचती है और इस तकनीक से आलू उत्पादन को बरसात के मौसम तक सुरक्षित कर लिया जाता है। इस सुरक्षित आलू के भंडार को बाजार की मांग और मूल्य वृद्धि के समय पर आवश्यकतानुसार निकाल या बेच कर लाभ कमाया जा सकता है। इस तकनीक से किसान का खर्च भी काफी हद तक घट जाता है, क्योंकि इस तकनीक को अपनाने के लिए किसान के पास अपने खेत में उगाए गए धान की फसल का पुआल/अवशेष का उपयोग भी हो जाता है या फिर वे इसे किसी पड़ोसी किसान से सस्ते दाम पर आसानी से खरीद सकते है। इसके साथ-साथ उत्पादन की ढुलाई और मजदूरी के खर्च में भी कटौती हो जाती है। अगर आलू उत्पादन भंडारण की यह प्रणाली कारगर होने के साथ-साथ प्रचालित हो जाती है तो खेतों में धान की कटाई के बाद बचे पुआल का उपयोग एवं पुआल जलाने की समस्या से कुछ हद तक निजात पाई जा सकती है। परंतु इसके बारे में अभी कुछ भी कह पाना कठिन होगा।

लाभकारी है किन्नू में सघन बाग़वानी

अंजली सोनी, अंजना खोलिया एवं अनिल कुमार दुबे

फल एवं औद्यानिकी प्रौद्योगिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

वर्तमान में विश्व की जनसंख्या 6-7 बिलियन है, जोकि 2050 तक 10 बिलियन हो जाएगी। इस बढ़ती हुई आबादी को कम होती कृषि योग्य भूमि में खाद्य तथा पोषक सुरक्षा देना एक कठिन चुनौती है। बढ़ती जनसंख्या को भरपेट भोजन के लिए धान्य फसलों की मात्रा कम करके अधिक उत्पादन देने वाले फलों का अनुपात बढ़ाना होगा। सामान्यत: फलों का उत्पाद मांग से कम होने के कारण बाजार मूल्य अच्छा होता है। फलों से किसानों की आमदनी बढ़ाने के लिए नए उपाय जैसे सघन बाग़वानी एक अच्छी तकनीक है जिससे न केवल प्रति इकाई उत्पादन अच्छा मिलता है बल्कि उर्वरकों तथा जल की भी समुचित बचत होती है। विभिन्न फल वृक्षों में नींबू वर्गीय फलों की भण्डारण क्षमता अच्छी होने के कारण इनको दूर मंडियों में भेजकर आमदनी और भी बढ़ाई जा सकती है। नींबू वर्गीय फलों में किन्नूं का हमारे देश के उत्तर पश्चिमी भाग में काफी प्रचलन है एवं यह फल इस क्षेत्र के किसानों की सामाजिक तथा आर्थिक दशा सुधारने में काफी सहायक है।

सघन बागवानी एक ऐसा क्षेत्र है, जिसमें किसान अपनी भूमि से अधिक से अधिक आय प्राप्त कर सकते हैं। सघन बागवानी से तात्पर्य है कि एक निश्चित क्षेत्रफल में आधुनिक प्रबंधन के सामंजस्य से अधिक से अधिक पौधों का समावेश करते हुए प्रति इकाई क्षेत्रफल से गुणवत्तायुक्त अधिक उत्पादन प्राप्त करना। इसके लिए कुछ विशेष प्रबंधन जैसे बौने मूलवृंत का प्रयोग, अंत: मूलवृंत का प्रयोग, सही समय पर कटाई-छंटाई, वृद्धि नियामकों का प्रयोग अपनाना प्रमुख है।

किन्नू की सघन बाग़वानी के लिए ध्यान रखने योग्य बातें:

किन्नू की सघन बाग़वानी करते समय मुख्यत: बौने मूलवृंत का प्रयोग, रोपण की दूरी, कटाई-छंटाई तथा सही समय पर खाद एवं उर्वरकों का प्रयोग आदि बातों का ध्यान रखना चाहिए। सघन बागवानी से किन्नू में पुष्प न तथा फलन 3 वर्ष में प्रारंभ हो जाता हैं। इसके अतिरिक्त सिंचाई की विधि, अंतराल का सघन बागवानी में बहुत महत्व है। सघन बागवानी में प्रति इकाई जड़ घनत्व अधिक होने के कारण प्रति पौधा कुल पानी की खपत तथा पोषक तत्वों का उपयोग परंपरागत बागवानी से अधिक होता है। इसलिए जल तथा पोषक तत्वों की अधिक जरूरत पड़ती है। संभव हो तो सघन बागवानी में टपक सिंचाई का प्रयोग करना चाहिए। इस प्रकार किसान प्रति इकाई क्षेत्रफल में अधिकतम पौधों को लगाकर अधिकतम संभव लाभ प्राप्त कर सकता है।

बौने मूलवृंत का चुनाव

नींबू वर्गीय फलों में बौने मूलवृंत वे होते हैं, जो विषाणु, पर्यावरण तथा अन्य प्रभाव से स्वतंत्र रहकर सांकुर साख की ऊंचाई 8 फीट से कम करने की क्षमता रखते हैं। इसके अतिरिक्त बौने मूलवृंत देखने में छोटे होते हैं, उनके अंदर आनुवंशिक बौनापन होता है तथा इनके ऊपर कलिकायन की हुई सांकुर साख में भी बौनेपन के गुणों को भेजती है। अच्छे परिणाम प्राप्त करने के लिए किन्नू को 'फ़्लाइंग ड्रैगन' एवं 'ट्रायर सिट्रन्ज' आदि मूलवृंतों का प्रयोग करना चाहिए। यह मूलवृंत किन्नू सांकुर की वृद्धि को कम करते हैं, जिससे किन्नू को 3x3 मी. या 2x2मी. की दूरी पर लगाया जा सकता है।

अंत: मूलवृंत का प्रयोग

क्षेत्र विशेष तथा किस्म विशेष के लिए अनुमोदित मूलवृंत में अगर अंत: मूलवृंत का प्रयोग करके सांकुर साख की कलिकायन की जाए तो भी नींबू वर्गीय फलवृक्षों का आकार (ऊंचाई) कम की जा सकती है। इसके लिए

सिट्रोप्सिस, इरेमोसिट्रस, क्लाइमोनिया तथा मइक्रो सिट्रस जाति के अंत: मूलवृंत प्रयोग किए जा सकते हैं। यह अंत: मूलवृंत 50-75 प्रतिशत तक वृक्षों का आकार कम कर सकते हैं।

वायराइड का प्रयोग

सिट्रस एक्जोकर्टिस वायराइड का प्रयोग करके किन्नू को बौना रखा जा सकता है। यह भी पाया गया कि ट्राइफोलिएट की बौने विभेदी में वायराइड सी वीडी-111बी तथा सी वीडी-11ए पाया जाता है। इसलिए इन वायराइड का प्रयोग करके पौधों का सघन बागवानी के लिए उपयुक्त बनाया जा सकता है। जो पौधों में सी वीडी-111बी का संक्रमण करके तैयार किए जाते हैं। उन्हें कलम बंधन स्थानांतरण बौनी कलम कहते हैं, जिनमें कलमी पौधों में बौनापन स्थानांतरण करने वाले वायराइड पाए जाते हैं। जीटीडी से संक्रमित पौधों को सघन बागवानी में लगाने से आमदनी जल्दी तथा अधिक होती है। लेकिन पौध रोपण में शुरूआती लागत अधिक आती है।

काट-छांट द्वारा सघन बागवानी

नींबू वर्गीय अधिकतर फसलों की किस्मों में मुख्य तने से 90 सेमी. दूरी पर फूल आते हैं, जबकि अंदर की शाखाएं केवल सहारा देने का काम करती हैं। इसलिए काट-छांट करके फलों के पौधों को 1.8 x 1.8 मीटर की दूरी पर लगाकर फूलों के लिए पूरा क्षेत्रफल प्राप्त किया जा सकता है। शीर्ष की शाखाओं को काटकर, पौधों को छोटा तथा घना बनाया जा सकता है। पौधों में सीधी बढ़ने वाली शाखाओं में कम फल आते हैं। इसलिए इन्हें काट देना चाहिए। जिससे पौधे का फैलाव अधिक हो और उत्पादन क्षमता बढ़े। पौधों की काट-छांट जल्दी करनी चाहिए। एक वर्ष पुरानी शाखाओं को आधी लंबाई तक काटकर निकाल देना चाहिए जिससे पौधा घना हो तथा अधिक उपज दे। पौधों की काट-छांट, फल तुड़ाई के बाद करनी चाहिए। कम बढ़वार वाली किस्मों की काट-छांट द्वारा आसानी से सघन बागवानी में लगाया जा सकता है।

वृद्धि नियामकों का प्रयोग

कई ऐसे वृद्धि नियामक हैं जिनका प्रयोग करके किन्नू के पौधों को बौना करके सघन बागवानी के अनुरूप बनाया जा सकता है। नींबू वर्गीय पौधों का बौना करने के लिए एएमओ (हाइड्रोक्सी कार्वाक्रापल ट्राईमिथाइल अमोनियम क्लोराइड), एन्सीमिडाल, पैक्लोब्यूट्रॉल या साकोन्सल का प्रयोग किया जा सकता है। (सारणी 1)

सारणी 1: किन्नू में प्रयुक्त होने वाली वृद्धि नियामक

वृद्धि नियामक	मात्रा
ए.एम.ओ.-1618	1 मिली/ली.
प्रोकैल्सियम	400 पीपीएम
यूनीकोनेजॉल	1000 पीपीएम
पैक्लोब्यूट्रजॉल	250 पीपीएम

बाग की स्थापना

बाग लगाने के लिए पहले उचित दूरी पर 3 x 3 x 3 फुट आकार के गड्ढे खोद लिए जाते हैं। साधारणतः इन गड्ढों को मिट्टी के साथ 20 से 25 किग्रा. गोबर की खाद और एक किग्रा. सुपर फॉस्फेट मिलाकर भर दिया जाता है। दीमक के प्रकोप से बचने हेतु प्रत्येक गड्ढे में नीम की खली अवश्य डालें।

रोपण दूरी

भारत में किन्नू की सघन बागवानी हेतु तीन मूलवृंत मानकीकृत किए गए हैं। उनके आयोजन के आधार पर रोपण दूरी एवं प्रति हेक्टेयर पौधों की संख्या सारणी 2 में दी गई है।

सारणी 2 : किन्नू हेतु मानकीकृत मूलवृंत एवं रोपण दूरी

क्र.सं.	मूलवृंत	मूलवृंतों के प्रकार	रोपण दूरी (मी.)	प्रति है. पौधों की संख्याक	फलन समय
1.	सोह सरकार	व्यापक	3x3	1,111	जनवरी
2.	करना खट्टा	अर्द्धव्यापक	2.4x2.4	1,736	दिसंबर
3.	ट्रायर सिट्रेंज	बौना	1.8x1.8	3,086	नवंबर

खाद तथा उर्वरक का प्रयोग

सारणी 3 के अनुसार खाद तथा उर्वरकों का प्रयोग करना चाहिए। गोबर की खाद की पूरी मात्रा का प्रयोग दिसंबर--जनवरी में तथा रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग दो बराबर खुराकों में करना चाहिए। पहली खुराक मार्च में और दूसरी जुलाई-अगस्त में देनी चाहिए। उर्वरकों का प्रयोग करते समय यदि पर्याप्त नमी न हो तो बाग में सिंचाई अवश्य करें।

सारणी 3: किन्नू की सघन बागवानी हेतु खाद एवं उर्वरकों की मात्रा

वृक्ष की आयु	मात्रा ग्राम प्रति वृक्ष			
वर्ष	गोबर की खाद (किग्रा.)	नाइट्रोजन	फॉस्फोरस	पोटाश
1	5	100	50	50
2	10	150	100	100
3	15	200	150	200
4	20	250	250	250
5	25	300	300	300

सारणी 4: छठे वर्ष में किन्नू की परंपरागत तथा सघन बाग़वानी में उत्पादन लागत तथा आमदनी/हेक्टेयर

प्रमुख कारक	परंपरागत बाग़वानी	सघन बाग़वानी
रोपण दूरी (मी.)	6 x 6	2 x 2
मूलवृंत	रफ़ लेमन, जाम्भीरी एवं जट्टी खट्टी	ट्रायर सिट्रेंज करना खट्टा सोह सरकार
प्रति हे. पौधों की संख्या	278	2500
कुल बाग स्थापना लागत	27716/-	196590/-
फलन आने तक कुल उत्पादन लागत (चार वर्ष तक)	148604/-	599591/-
उपज तीसरी वर्ष	--	5 टन
उपज चौथी वर्ष	--	9 टन
उपज पाँचवी वर्ष	8 टन	30 टन
पाँचवें वर्ष तक शुद्ध लाभ @ रु. 12000/ टन	(96000-148604) = -52604	(60000+108000+360000-599591) = -71591
छठी वर्ष लागत	59380/-	163072/-
आमदनी	12 टन (144000/-)	30 टन (360000/-)
शुद्ध लाभ	31566	196928/-

पादप सुरक्षा

माहूः इस कीट से शिशु एवं व्यस्क) पेड़ों की पत्तियों और टहनियों से रस चूस लेते हैं, जिस कारण पत्तियां, कलियां और फूल मुरझा जाते हैं। इसके साथ यह कीड़ा एक किस्म के विषाणुओं को भी फैलाता है जिससे नींबू की पैदावार कम होती है। इस कीट की रोकथाम फूल आने से पहले 15 मिली. मेलाथियॉन को 10 लीटर पानी में बने घोल का छिड़काव करके की जा सकती है। इसके अतिरिक्त फोरेट 10जी का प्रयोग मृदा में किया जा सकता है।

पर्ण सुरंगीः यह कीट बाग के पेड़ों के अतिरिक्त नर्सरी के पौधों को भी क्षति पहुंचाता है। इसकी इल्लियां पत्तियों में टेढ़ी-मेढ़ी सुरंग बनाती हैं। यह कीट प्राय नई पत्तियों के निकलते समय आक्रमण करता है। जब पेड़ों में नये फुटाव हो रहे हों तब मोनोक्रोटोफॉस 3.5 मिली प्रति 10 लीटर पानीयास्पीनोसेड 4 मिली 10 लीटरपानी में घोल बनाकर दो छिड़काव 15 दिन के अंतराल पर करें।

फाइटोफ्थोरा सड़नः यह रोग जल भराव होने के कारण अधिक फैलता है। छाल का सड़ना, जड़ों का सड़ना, अत्यधिक गोंद निकलना तथा पौधों का सूखना इस रोग के मुख्य लक्षण हैं। पौधशाला को फाइटोफ्थोरा रहित भूमि में उगाने, पानी का उचित जल निकास, तनों के चारों तरफ 60 सेमी. ऊंचाई तक बोर्डो मिश्रण का लेप लगाने, अवरोधी मूलवृंत (खट्टी नारंगी, क्लियोपोट्रा, रंगपुर लाइम तथा ट्राईफोलिएट ओरेंज) का चुनाव तथा मूलवृंत पर 30 सेमी. ऊंचाई पर कलिकायन करने से इस रोग को फैलने से रोका जा सकता है। अगर रोग फैल गया तो बोर्डो पेस्ट को फैलने से रोकने के लिए (1 मिग्रा. चूना, 1 किग्रा. कॉपर सल्फेट/10 लीटर पानी) से पौधों की 2.3 फिट ऊंचाई तक पुताई वर्ष में दो बार अवश्य करें। रोग का संक्रमण होने पर रिडोमिल गोल्ड, 2.5 ग्रा. प्रति लीटर पानी का घोल बनाकर पेड़ के थालों में भरें तथा इसी घोल का पर्णीय छिड़काव करें।

सघन खेती के लाभ

- सघन खेती में फल वृक्ष का आकार छोटा होने के कारण वृक्ष का कुल उत्पादित क्षेत्र बढ़ जाता है तथा इसके साथ-साथ प्राकृतिक संसाधनों का भी अधिकतम उपयोग होता है जैसे धूप, जमीन, पानी आदि जो कि प्रति क्षेत्र उपज बढ़ाने में सहायता करते हैं।
- सघन खेती में प्रति वृक्ष अधिक उत्पादित क्षेत्र होने के कारण प्रति क्षेत्रफल उत्पादन भी बढ़ जाता हैं, जोकि हमारा मुख्य लक्ष्य है।
- सघन खेती में छोटे वृक्ष होने के कारण अनउत्पादित समय भी घट जाता है जिससे पौधे जल्दी उत्पादन देना शुरू कर देते हैं।
- पौधों का आकार छोटा होने के कारण पौधों की कटाई, छंटाई, तुड़ाई के साथ-साथ छिड़काव आदि करना भी आसान हो जाता है, जिससे कि फल उत्पादन का खर्चा घट जाता है।
- पौधों का आकार छोटे होने के कारण सूर्य की किरणें पौधे की गहराई तक जाती हैं, जिससे अधिकतम प्रकाश संश्लेषण होता है, जोकि फलों की गुणवत्ता को बढ़ाता है।
- छोटे आकार के पौधे होने से खाद तथा पानी का भी अधिकतम उपयोग हो जाता है।

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।

- राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

अंगूरों में गुणवत्ता सुधार हेतु सरलतम विधियां

राम रोशन शर्मा

खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

अंगूर बहुत ही स्वादिष्ट एवं पौष्टिक फल है। यह संसार के उपोष्ण कटिबंधीय फलों में विशेष महत्व रखता है। यह भी एक जल्दी तैयार होने वाला फल है। अंगूर की बागवानी का प्रारंभ प्राचीन सभ्यताओं के विकास के साथ हुआ। ऐसा माना जाता है कि मनुष्य से इसका संबंध गेहूं और धान से भी पुराना है। हमारी धार्मिक पुस्तकों से मिले प्रमाणों से पता चलता है कि मिस्र में अंगूर की बागवानी और उससे शराब बनाने की जानकारी 5,000 से 6,000 वर्ष पहले से उपलब्ध थी। प्रमुख उत्पादक देश अंगूर की बागवानी शराब एवं किशमिश बनाने के लिए करते हैं। हमारे देश में अंगूर की बागवानी दूसरे देशों से कई मायनों में भिन्न है क्योंकि हमारे देश में इसकी बागवानी मुख्यतः उष्ण क्षेत्रों में की जाती है, जहां यह सारा साल हरा-भरा रहता है। हमारे देश में अंगूर का उपयोग भी मुख्यतः ताजे फल के रूप में किया जाता है। यहां पौधों की काट-छांट भी भिन्न है। अतः अंगूर की बागवानी शीतोष्ण देशों से पूर्णतः भिन्न है। हमारे देश में कुछ वर्षों में अंगूर की बागवानी अधिक आय देने वाला कृषि उद्योग सिद्ध हुआ है। इसी कारण हमारे देश में अंगूर की बागवानी के अंतर्गत क्षेत्र में लगातार वृद्धि हो रही है।

अंगूर के पौष्टिक गुण

अंगूर के फलों में मुख्यतः 'ग्लूकोस' शर्करा होती है। ग्लूकोस के अतिरिक्त यह फ्रक्टोस का भी अच्छा स्रोत है। अंगूर के फल खनिज पदार्थों जैसे कैल्शियम, फॉस्फोरस एवं लौह के अच्छे स्रोत हैं। इनमें विटामिन बी1 और बी2 भी पाए जाते हैं (सारणी 1)। इसके फलों का उपयोग कई तरह से किया जाता है। संसार के कुल उत्पादन का लगभग 80 प्रतिशत हिस्सा सुरा (शराब) बनाने में प्रयोग होता है। संसार में फ्रांस, इटली एवं स्पेन आदि देश अंगूर की सुरा बनाने के लिए मशहूर हैं। लगभग 10 प्रतिशत अंगूर, किशमिश एवं रस आदि बनाने में प्रयुक्त किए जाते हैं। हमारे देश में अंगूर मुख्यतः ताजे फल के रूप में प्रयोग किए जाते हैं एवं बहुत कम का उपयोग सुरा या किशमिश बनाने के लिए किया जाता है। हमारे देश में अभी भी अफगानिस्तान से किशमिश का आयात किया जाता है और यदि किशमिश बनाने की किसी देसी विधि का मानकीकरण किया जाए तो हमारा देश काफी विदेशी मुद्रा बचा सकता है।

भारत में अंगूर के प्रमुख उत्पादक प्रदेश

भारत में अंगूर की बागवानी मुख्यतः उष्ण-कटिबंधीय एवं उपोष्ण-कटिबंधीय क्षेत्रों में की जाती है। शायद भारत ही अकेला ऐसा उदाहरण है, जहां अंगूर की व्यावसायिक खेती उष्ण-कटिबंधीय क्षेत्रों में सफलतापूर्वक की जाती है। भारत में कुल उत्पादन एवं क्षेत्रफल का लगभग 90 प्रतिशत हिस्सा महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश एवं तमिलनाडु जैसे चार उष्ण-कटिबंधीय राज्यों से आता है। पिछले कुछ वर्षों में उत्तर भारत में पंजाब, हरियाणा, राजस्थान, पश्चिमी उत्तर प्रदेश आदि राज्यों ने भी अंगूर की बागवानी में काफी तरक्की की है। यही कारण है कि इन राज्यों में भी इसके क्षेत्रफल में आश्चर्यजनक वृद्धि हुई है। आज हम गर्व के साथ कह सकते हैं कि संसार में अंगूर की उत्पादकता (25.1 टन/हे.) में भारत का प्रथम स्थान है।

सारणी 1: अंगूर के फलों का संघटक एवं पोषक मान

क्र.सं.	संघटक	मात्रा (प्रतिशत)
1.	जल	70-80
2.	कार्बोहाईड्रेटस	15-25
	अ. ग्लूकोस	8-13

	ब. फ्रक्टोस	7-12
3.	पैक्टिन	0.01-0.10
4.	अम्ल	0.3-1.5
5.	पोषक तत्व	0.15-0.25
	अ. पोटैशियम	0.02-0.05
	ब. फॉस्फोरस	0.01-0.25
	स. मैग्नीशियम	
6.	टैनिन	0.01-0.10
7.	विटामिन	0.02-0.2

प्रमुख किस्में

विश्व में अंगूर की लगभग 14,000 किस्में हैं। भारत में भी अंगूर की लगभग 1,800 किस्मों का भंडार उपलब्ध है, परंतु व्यावसायिक स्तर पर केवल 2-3 दर्जन किस्में ही उगाई जाती हैं। भारत में उगाई जाने वाली प्रमुख किस्में हैं: अनाव-ए-शाही, बैंगलोर ब्लू, भोकरी, चीमा साहिबी, परलेट, ब्यूटी सीड़लैस, पूसा सीड़लैस, थॉमसन सीड़लैस, तास-ए-गनेश, सोनाका, मणिक चमन, किशमिश बेली, किशमिश चरनी, गोल्ड, अर्ली मस्कट, कार्डिनल, गुलाबी, डिलाईट आदि। हमारे देश के विभिन्न संस्थानों द्वारा भी कई किस्में जैसे अर्कावती, अर्काश्याम, अर्काहंस, अर्का कंचन, पूसा उर्वशी, पूसा नवरंग आदि विकसित की गई हैं, जो धीरे-धीरे बागवानों में लोकप्रिय हो रही हैं।

हालांकि अंगूर की उत्पादकता में हम विश्व में प्रथम पायदान पर हैं, परंतु इस उत्पादकता को कई और गुणा बढ़ाया जा सकता है यदि हम अंगूर को लगने वाले क्रियात्मक विकारों को नियंत्रित कर सकें। ठीक इसी प्रकार भारत में अंगूर के फलों की गुणवत्ता भी उस श्रेणी की नहीं होती जैसी विदेशों में होती है। अतः फलों की गुणवत्ता में सुधार आवश्यक होता है।

फलों की गुणवत्ता में सुधार के उपाय

ताजा उपयोग के लिए अंगूर के गुच्छे मध्यम आकार, दानों से परिपूर्ण, बीजरहित, अच्छी सुगंध, रंग, स्वाद व बनावट के होने चाहिए। ये सब बातें किस्म विशेष, जलवायु, पौधे के स्वास्थ्य, पादप सुरक्षा एवं देखभाल पर निर्भर करती है। परंतु ऐसे कई सरल उपाय हैं, जिनसे अंगूर की उपज एवं गुणवत्ता में सुधार ला सकते हैं। इन मुख्य उपायों का संक्षिप्त विवरण निम्नलिखित है:

प्रूनिंग (काट-छांट)

फसल निर्धारण के लिए प्रूनिंग (काट-छांट) सर्वाधिक सस्ती एवं सरल तकनीक है। काट-छांट का फलों के आकार, भार, रंग एवं रासायनिक संरचना पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। फलों के गुण, फल देने वाली शाखा (केन) तथा इन शाखाओं पर फल देने वाली कलियों पर बहुत कुछ निर्भर करता है। अतः काट-छांट समय पर, साधक प्रणाली के अनुसार एवं किस्म विशेष को ध्यान में रखकर करनी चाहिए।

विरलन

यदि बेल पर गुच्छे अधिक लदे हों तो फल की गुणवत्ता प्रभावित होती है तथा फल भी देरी से पकते हैं। अतः यह बेहतर होता है कि बेलों से कुछ गुच्छों की छंटाई की जाए। साधारणतः पंडाल विधि द्वारा साधित बेलों पर 60 से 70 गुच्छे एवं शीर्ष विधि द्वारा साधित बेलों पर 12 से 15 गुच्छे ही छोड़े जाने चाहिए। अतः बेल में अधिक फल लगने पर कुछ गुच्छों को काट देना चाहिए। यदि संभव हो तो गुच्छों की विरलन के साथ उनमें लगे दानों की विरलन भी कर लेनी चाहिए।

गर्डलिंग (वयलन)

इस तकनीक में बेल के किसी भाग (शाखा, तना, लता, उपशाखा आदि) से लगभग 0.5 सेमी. चौड़ाई की छाल गोलाई में पूरी (छल्ले के रूप में) उतार ली जाती है। ऐसा करने से पत्तियों द्वारा खाद्य पदार्थ, फलों को अधिक मात्रा में उपलब्ध होते हैं, जिससे फलों के आकार, भार, रंग एवं गुणवत्ता में वृद्धि हो जाती है। प्रयोगों से सिद्ध हो चुका है कि जिस भाग से यह छाल निकाली जाती है, वह भाग एक माह के भीतर पुनः भर जाता है। अतः लगातार कई वर्षों तक गर्डलिंग करने से बेल के स्वास्थ्य पर कोई प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है। छाल कब एवं किस हिस्से से उतारी जाए, यह सब बागवान के

उद्देश्य पर निर्भर करता है। उदाहरणार्थ अधिक फलों को प्राप्त करने के लिए फूल खिलने से एक सप्ताह पहले, फलों के आकार में वृद्धि के लिए, फल लगने के तुरंत बाद एवं फल पकने की अवधि घटाने और फलों में अच्छे रंग हेतु, फलों के पकने के शुरू होने से एक सप्ताह पहले ही छाल उतारनी चाहिए।

वृद्धि नियामकों का प्रयोग

वृद्धि नियामकों के छिड़काव का फल के भार एवं गुणों पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। यह पाया गया है कि बीजरहित किस्मों में जिब्रेलिक अम्ल के प्रयोग से फलों का आकार दोगुना हो जाता है। वैसे जिब्रेलिक अम्ल का छिड़काव किस्म-विशेष को ध्यान में रखते हुए करना चाहिए। पूसा सीड़लैस किस्म में पूरे फूल खिलने पर 45 पी.पी.एम., ब्यूटी सीड़लैस में आधे फूल खिलने पर 45 पी.पी.एम., परलेट में आधे फूल खिलने पर 30 पी. पी.एम. जिब्रेलिक अम्ल का प्रयोग करना चाहिए। जिब्रेलिक अम्ल के प्रयोग से गुच्छे ढ़ीले एवं आकर्षक हो जाते हैं तथा गुच्छों में लगे फल लंबे एवं उनकी गुणवत्ता में आश्चर्यजनक वृद्धि होती है। इन्डोल एसिटिक अम्ल (20 पी.पी.एम.) एवं प्लेनोफिक्स (20 पी.पी.एम.) के छिड़काव भी फलों के आकार एवं उनकी गुणवत्ता में बढ़ोत्तरी करते हैं। 'शॉट बेरी' (छोटे फल) की समस्या के समाधान हेतु फूल खिलने के 5-6 दिन बाद 50 पी.पी. एम. जिब्रेलिक अम्ल के घोल से गुच्छों के उपचार की सिफारिश की गई है। इसी प्रकार साइटोकाइनिन के छिड़काव से फलों के रंग, आकार एवं गुणवत्ता पर अनुकूल प्रभाव पड़ता है। शोध कार्यों में यह पाया गया है कि फलों को जल्दी पकाने एवं उनके गुणों में सुधार के लिए इथरिल (500 पी.पी.एम.) का प्रयोग सर्वोचित है। यदि इसका प्रयोग फलों के रंग परिवर्तन के समय किया जाए, तो फलों का रंग चमकीला एवं आकर्षक हो जाता है एवं फल समय से पकते हैं।

इज़राईली तकनीक का उपयोग

परलेट किस्म से अच्छी फलत एवं बढ़िया गुणवत्ता के लिए उत्तरी भारत में इज़राईली तकनीक काफी लोकप्रिय हुई है। इस तकनीक में प्रत्येक गुच्छे में शुरू में केवल 120 दाने रखे जाने की सिफारिश की गई है। जब दाने 5 मिमी. आकार के हो जाएं, तो तने की गर्डलिंग (तने से छल्ला निकालना) की जाती है व उसी समय पौधों पर 30 पी.पी.एम जिब्रेलिक अम्ल का छिड़काव किया जाता है। ऐसा करने से कुल फलत में वृद्धि के साथ फलों की गुणवत्ता में आश्चर्यजनक सुधार होता है एवं अंगूर जल्दी पकते हैं। यह तकनीक अन्य किस्मों के लिए भी उपयुक्त है, जिनके गुच्छे दृढ़ता से सटे हुए होते हैं।

जो पुरुषार्थ नहीं करते उन्हें धन, मित्र, ऐश्वर्य, सुख, स्वास्थ्य, शांति और संतोष प्राप्त नहीं होते।

- वेदव्यास

गुलाब में रोग एवं कीट प्रबंधन

नमिता, एम.के. सिंह एवं सपना पंवर

पुष्प विज्ञान एवं भूदृश्य निर्माण संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

गुलाब एक कर्तित पुष्प है, जिसका विश्व में व्यापक रूप से व्यापार किया जाता है। कर्तित पुष्पों की मांग, भारत सहित सारे विश्व में 11-12 प्रतिशत वार्षिक दर से बढ़ रही है। गुलाब को "फूलों की रानी" के नाम से भी जाना जाता है। हमारे देश में गुलाब का उत्पादन महाराष्ट्र, कर्नाटक, आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु, राजस्थान, हरियाणा तथा पश्चिम बंगाल आदि राज्यों में किया जा रहा है। गुलाब का प्रयोग मुख्य रूप से धार्मिक स्थलों, विभिन्न त्योहारों, शादी-विवाह के मंडपों आदि के सौन्दर्यीकरण व गुलदस्ते बनाने में किया जाता है। इसके अलावा गुलाब को इत्र, गुलाब जल तथा गुलकंद बनाने के लिए भी प्रयोग किया जाता है। गुलाब की उपलब्धता में वृद्धि के साथ-साथ कीटों और रोगों के प्रकोप में भी बढ़ोत्तरी हुई है। गुलाब में लगने वाले प्रमुख रोग व कीट तथा उनके प्रबंधन का विवरण निम्नलिखित है:

अ. प्रमुख रोग एवं उनका प्रबंधन

चूर्णिल आसिता (पाउडरी मिल्डयू)

यह रोग '*स्फैरोथेका पन्नोसा*' नामक कवक से होता है। गर्म एवं शुष्क मौसम तथा ठंडी रातें इस रोग के लिए अनुकूल होती हैं। खेतों में 15.5^0 सेल्सियस का रात्रि तापमान और 90 से 99 प्रतिशत की सापेक्षिक आर्द्रता, कॉनिडिया के उत्पादन व उसके अंकुरण को बढ़ाती है, जिससे रोग का प्रकोप बढ़ जाता है। इसका प्रकोप पौधों के सभी बाहरी भागों पर होता है। नई कोमल पत्तियां ऐंठ जाती हैं तथा उनकी उपरी सतह पर फफोले पड़ जाते हैं, जो सफेद चूर्ण से ढ़के होते हैं। पत्तियों, पुष्प वृंत तथा पुष्प कलिकाओं पर भूरे-सफेद चूर्णित धब्बे दिखाई पड़ते हैं और यह कवक धीरे-धीरे पूरे पौधे पर सफेद चूर्ण के रूप में फैल जाती है। संक्रमित पत्तियां कुरूप हो जाती हैं। रोगग्रस्त कलियां खिल नहीं पाती हैं। पौधा झुलसा हुआ दिखाई देता है। रोग का प्रकोप अधिक होने पर पत्तियों की वृद्धि एवं प्रकाश संश्लेषण की क्रिया में कमी आने लगती है। कर्तित पुष्पों का बाजारी भाव कम हो जाता है।

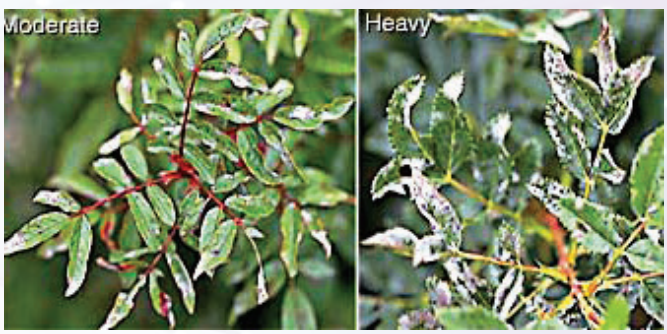

चूर्णिल आसिता प्रभावित गुलाब

प्रबंधन

- गुलाब की रोग-रोधी किस्में लगाएं।
- रोग ग्रसित शाखाओं व टहनियों को काटकर जला दें।
- खेत में गिरी हुई पत्तियों को एकत्रित कर नष्ट कर दें।
- खेत में नाइट्रोजनयुक्त उर्वरकों को कम मात्रा में दें।
- जैविक नियंत्रण में जैसे *एम्पिलोमाइसीज क्विसकबालिस* तथा *स्युडोजाइमा फ्रलोकुलोजा* जैवकारक के व्यापारिक सूत्रण का छिड़काव करें।
- रोग से बचाव के लिए घुलनशील गंधक (2 ग्राम/लीटर) या कैराथेन (1 मि.ली./लीटर) या बैनलेट (1 मि.ली./ लीटर) या बाविस्टिन (2 ग्राम/लीटर) के घोल का 2 से 3 छिड़काव प्रत्येक 10-15 दिन के अंतराल पर करें।

काली चित्ती (ब्लैक स्पॉट)

यह गुलाब का विश्वव्यापी रोग है। यह रोग '*डिप्लोकार्पन रोजी*' नामक कवक से होता है। यह रोग बरसात या अधिक आर्द्रता एवं ठंड के मौसम में अधिक फैलता है। पत्तियों के उपरी सतह पर 2-15 मि.मी. व्यास की वृताकार काली चित्तियां पड़ जाती हैं। ये चित्तियां गोल या बेडौल होकर एक साथ जुड़ती जाती हैं, जिससे पत्तियों के किनारे मुड़ जाते हैं। बाद में पत्तियां पीली होकर गिर जाती हैं, तना तथा शाखाएं सूख जाती हैं।

गुलाब में काली चित्ती के लक्षण

प्रबंधन

- पौधों पर अधिक समय तक लगातार सिंचाई न करें।
- भूमि की सतह के पास की पत्तियों की नियमित रूप से काट-छांट करें।
- पौधों को अधिक सघनता पर न लगाएं और पौधों में अच्छा वायु संचार होने दें।
- रोग-रोधी किस्में लगाएं।
- रोग ग्रसित पत्तियों व टहनियों को एकत्रित करके जला दें तथा खेत की सफाई पर ध्यान दें।
- रोग से बचाव के लिए क्लोरोथैलोनिल (2 ग्राम/लीटर) या फर्बाम (2 ग्राम/लीटर) या बैनलेट (1 मि.ली./लीटर) के घोल का छिड़काव करें।

उक्ठा (डाई बैक)

यह रोग '*डिप्लोडिया रोजेरम* या *कॉलेटोट्रिकम ग्लिओस्पोराइडिस*' नामक कवक से होता है। इस रोग के आक्रमण से पौधे ऊपर से नीचे की ओर सूखने लगते हैं। रोग मुख्य रूप से काटी-छांटी गई शाखाओं की उपरी सतह से शुरू होता है। शाखाएं भूरे-काले रंग की हो जाती हैं। बाद में रोग शाखा से मुख्य तना तथा तने से जड़ में फैलता है। गंभीर प्रकोप होने पर पौधा मर जाता है। रोग नए पौधों की अपेक्षा पुराने पौधों पर जल्दी और अधिक होता है। कवक के बीजाणु प्रभावित भागों पर गोल, गहरे रंग के धब्बे बनाते हैं। इनके आक्रमण से छाल पर गहरे भूरे रंग के बाहरी क्षतचिन्ह बन जाते हैं। प्रायः तने की छाल पर पाए जाने वाले क्षतचिन्ह उक्ठा या डाईबैक में बदल जाते हैं। इस रोग से फूलों के उत्पादन में भारी गिरावट होती है।

डाई बैक के लक्षण

प्रबंधन

- रोगग्रस्त शाखाएं, सूखी टहनियों और मुरझाए हुए फूलों के डंठलों को काटकर जला दें।
- कटाई-छंटाई के बाद शाखाओं पर 4 भाग कॉपर कार्बोनेट, 4 भाग रेड लैड और 5 भाग अलसी के तेल का अच्छी तरह से मिश्रण बनाकर उसका लेप करें।
- कटाई-छंटाई के 10 दिन तक खाद-उर्वरक न दें।
- रोग-रोधी किस्में लगाएं।
- कार्बेन्डाजिम या क्लोरोथैलोनिल का 2 ग्राम/लीटर घोल से मृदा का उपचार करें।

ग्रे-मोल्ड (बोट्राईटिस झुलसा)

यह रोग "*बोट्राईटिस सिनेरिया*" नामक कवक से होता है। पत्तियों पर जल सोक्त धब्बे बन जाते है, जो तेजी

से फैलते हैं। यह रोग कलियों की पंखुड़ियों के भीतरी भाग पर पाया जाता है। अनुकूल वातावरण में यह रोग बड़ी तेजी से फैलता है, जिसके परिणामस्वरूप पुष्प पूरी तरह से मुरझा जाता है।

ग्रे-मोल्ड ग्रसित गुलाब की पत्तियां

प्रबंधन

- रोगग्रसित पौधे के भागों जैसे पत्तियां, शाखाएं व कलियों को एकत्रित कर जला दें।
- खेत में वृद्धि-नियामकों जैसे जिब्रेलिक अम्ल, पैक्लोबुट्राजॉल तथा मिथाइल जैस्मोनेट का उपयोग करें।
- जैवकारक जैसे *ग्लाइओक्लेडियम रोजियम* या *ट्राइकोडर्मा हर्जियेनम* का व्यावसायिक सूत्रण का प्रयोग करें।
- रोग से बचाव के लिए बाविस्टिन (2 ग्राम/लीटर) या बैनलेट (1.5 मि.ली./लीटर) के घोल का छिड़काव करें।

क्राउन-गाल

यह रोग '*एग्रोबैक्टीरियम ट्यूमिफेसियन*' नामक जीवाणु से होता है। यह गुलाब की नर्सरी का प्रमुख रोग है। भूमि की सतह के पास तने के क्राउन वाले स्थान पर फूलगोभी जैसी संरचनाएं बन जाती हैं। ये गाल जड़ों पर व तनों पर कटाई के समय बने घाव पर बनते हैं। प्रत्येक वर्ष इस रोग से 20-25 प्रतिशत नर्सरी समाप्त हो जाती है। इस रोग से फूलों का उत्पादन घट जाता है।

क्राउन-गाल के लक्षण

प्रबंधन

- रोगरहित पौधों का चुनाव करें।
- प्रमाणित नर्सरी से रोगरहित रोपण सामग्री का प्रयोग करें।
- खेत को साफ-सुथरा रखें।
- *एग्रोबैक्टीरियम एग्रोबैक्टर* का व्यापारिक सूत्रण के घोल का छिड़काव करें।

ब. प्रमुख कीट एवं उनका प्रबंधन

रेड स्केल

पौधे के तने पर लाल-भूरे रंग के कीट दिखाई देते हैं, जोकि गतिहीन होते हैं। यह कीट तनों से रस चूस कर पौधे को कमजोर करके सुखा देते हैं। मादा कीट आकार में कुछ बड़ी व गोलाकार होती है, जबकि नर छोटे व लंबे होते हैं। मादा एक ही स्थान पर रहती है। नर के बसंत में पंख निकलते हैं, और वह मादा की तलाश में इधर-उधर घूमता रहता है। यह कीट जुलाई-सितंबर में अधिक क्रियाशील रहता है।

लाल खपरा (रेड स्केल)

प्रबंधन

- खेत में सफाई बनाए रखें तथा ग्रसित पौधे के भागों को नष्ट कर दें।
- डाइमेथोएट (2 ग्राम/लीटर) का छिड़काव करें।

चेंपा / माहू

यह कीट छोटे, गोल, हरे, गहरे हरे या काले रंग के होते हैं, जो पौधे के कोमल भाग, शीर्ष, कलियों तथा फूलों पर गुच्छों में चिपके रहते हैं और पौधों का रस चूसते रहते हैं जिसके कारण पत्तियां सिकुड़ जाती हैं और पुष्प क्षतिग्रस्तह हो जाते हैं। यह कीट ज्यादातर जनवरी-फरवरी में लगता है।

चेंपा का प्रकोप

प्रबंधन

- नीम तेल का 10 मि.ली. प्रति लीटर के घोल का छिड़काव करें।
- मृदा में नीम की खली का प्रयोग करें।
- मैलाथियॉन (1 मि.ली./ लीटर) या डाइमेथोएट (2 मि.ली./लीटर) या मोनोक्रोटोपफॉस (1.5 मि.ली./ लीटर) के घोल का छिड़काव प्रति 10-15 दिन के अंतराल पर करें।

लाल मकड़ी माइट (रैड स्पाइडर माइट)

दो चित्तियों वाला स्पाइडर माइट (*टेट्रानिकस अरटिसी*) बहुत ही छोटा या लगभग बिंदु के समान लाल रंग का होता है तथा पत्तियों के नीचे वाले भाग पर रहता है। यह पत्तियों तथा पौधों के कोमल भागों से रस चूसता है। ये कीट नई शाखाओं में मकड़ी जाल बनाते हैं एवं कलिकाओं तथा फूलों से रस चूसते हैं जिससे वे रंगहीन हो जाते हैं एवं सिकुड़ तथा सूख जाते हैं। पुष्पों का आकार बिगड़ जाता है। यह अधिकतर हरित गृह का कीट है।

लाल मकड़ी माइट

प्रबंधन

- कीटग्रसित पौधे के भागों को काट कर नष्ट कर दें।
- कीट की संख्या मध्यम स्तर पर हो उस समय परभक्षी माइट (*एम्बिसियस टेट्रानिकाइवोरस*) को 20 प्रति पौधे की दर से छोड़ना चाहिए।
- शाम के समय *वर्टिसिलियम लीकेली* सूत्रण का 5 ग्राम/लीटर की दर से छिड़काव करें।
- डाइकोफोल (2.5 मि.ली./लीटर) या घुलनशील सल्फर (3 ग्राम/लीटर) या वरटीमैक (2 मि.ली./लीटर) या औमाइट (2 मि.ली./लीटर) का छिड़काव करें।

थ्रिप्स

यह कीट नवंबर-दिसंबर तथा जुलाई-अगस्त में अत्यंत सक्रिय रहता है। शिशु और वयस्क दोनों ही कोमल पत्तियों, बढ़ती कलिकाओं और फूलों से रस चूस लेते हैं। भूरी धारी, मुड़ी हुई पत्तियां, कलिकाओं के बाह्य दल तथा पंखुड़ियों पर झुलसन तथा जले किनारों वाले अनियमित आकार वाले फूल इसके मुख्य लक्षण हैं। यह पौधों की कार्यिकी संबंधित प्रक्रियाओं और पुष्पन को प्रभावित करता है।

प्रबंधन

- *पोंगामिया ग्लेबरा* या *जेट्रोफा कार्कस* तेल का 10 मि.ली./लीटर या *केलोट्रोपिस जिगान्टेड* या

पेडीलेंथस थिथिमेल्वायडिस की पत्तियों के अर्क को 100 ग्राम/लीटर के हिसाब से पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

- मोनोक्रोटोफॉस (2 मि.ली./लीटर) या डाइमेथोएट (30 ई.सी. 2 मिली/लीटर) का 10-15 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।

चैफर भृंग

वर्षा के समय पौधों की पत्तियों में छेद हो जाना, उनके कट-फट जाने तथा कभी-कभी तो ये पौधों को बिल्कुल ही पत्तीहीन कर देते हैं। यह दिन में दिखाई नहीं पड़ता है और चैफर भृंग रात के समय ही निकलता है और 10-14 मि.मी. लंबा व भूरे रंग का होता है। ये कीट अपने अंडे भूमि में देते हैं, जिनमें से काफी बड़े आकार का सफेद लार्वा निकलता है। यह पौधों की जड़ों को हानि पहुंचाता है तथा वयस्क पत्तियों को खाता है।

चैफर बीटल

प्रबंधन

- क्यारियों की निराई-गुड़ाई करके सूण्डी (लार्वा) को नष्ट कर दें।
- मृदा को कीटनाशक से उपचारित करें।
- कीट ग्रसित पौधों पर मेलाथियॉन (2 मि.ली./लीटर) या डाईक्लोरवास (1-1.5 मि.ली./लीटर) के घोल का छिड़काव करें।
- पौधों को रात में थैलों से ढक दें तथा दिन में थैला उतार दें।

बाधाएं व्यक्ति की परीक्षा होती हैं। उनसे उत्साह बढ़ना चाहिए, मंद नहीं पड़ना चाहिए।

- यशपाल

ऑर्किड्स और लिली में बोट्राईटिस पर्ण झुलसा रोग एवं उसका प्रबंधन

तुसार कांत बाग एवं राम चरण मथुरिया

पादप रोग विज्ञान संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

पिछले कुछ वर्षों में, सिक्किम और दार्जिलिंग की पहाड़ियों में उच्च गुणवत्ता वाली व्यापारिक फूलों की खेती में कई गुना वृद्धि हुई है। ऑर्किड, लिलियम, कार्नेशन और जरबेरा की संरक्षित खेती में अधिकतम वृद्धि के लिए राज्य और केंद्रीय सरकार की सहायता से बड़ी संख्या में अच्छी तरह से योजनाबद्ध पॉली हाउस बनाए गए। मिरिक, नामची और गंगटोक की पहाड़ियों में ऑर्किड (सिंबिडियम और डेंडरोबियम) की खेती की जा रही है। एशियाई और ओरिएंटल दोनों लिलियम दार्जिलिंग, मिरिक, कालीम्पोंग, गंगटोक और पकीओंग में भी बढ़ रही है। इन सभी फूलों वाली फसलों पर बोट्राईटिस मोल्ड रोग लगता है। ऑर्किड में आमतौर से ग्रे मोल्ड कवक *बोट्राईटिस सिनेरिया* ग्रसित करता है, जबकि लिली (विशेष रूप से एशियाई लिली) को नम और आर्द्र मौसम में ज्यादातर *बोट्राईटिस इलिप्टिका* ग्रसित करता है। यदि उचित सावधानी न अपनाई जाए, तो यह वायुजनित कवक अनुकूल स्थिति में फूल उत्पादन में काफी क्षति पहुंचा सकता है। फूल उत्पादकों और फूल प्रेमियों को ऑर्किड एवं लिली में हवा से उत्पन्न रोग का प्रबंधन करने के लिए पर्याप्त देखभाल की आवश्यकता होती है।

ग्रे मोल्ड (*बोट्राईटिस सिनेरिया*)

ऑर्किड्स का यह अत्यधिक विनाशकारी रोग है, क्योंकि पौधों के फूल पंखुड़ियों और पकने वाले फल और सब्जियां संक्रमण के लिए बहुत अधिक संवेदनशील होती हैं। रोग का अधिक प्रभाव होने पर युवा पत्तियां और तने के ऊतक भी संक्रमित हो जाते हैं, जिससे पौधों को भारी क्षति हो सकती है।

बोट्राईटिस पंखुड़ी झुलसा

यह आर्किड फूलों का सबसे आम रोग है। यह रोग सर्वप्रथम विशेष रूप से पुराने फूलों की पंखुड़ियों पर कई छोटे काले धब्बे के रूप में दिखाई देते हैं। कभी-कभी रोगग्रस्त फूलों की पंखुड़ियों पर छोटे-छोटे छिद्र भी दिखते हैं। रोगग्रस्त पुष्प अस्वस्थ एवं काले धब्बेदार होने के कारण उनकी बाज़ारिक कीमत कम हो जाती है। सिम्बिडियम तथा इसकी संकर जातियों, फेलिनोप्सिस, आइरिड्स, *केलेंथी ट्रिपलिकता* और कतलिया संकर जातियों पर बोट्राईटिस पंखुड़ी पर्ण झुलसा का प्रकोप अकसर पाया जाता है।

बोट्राईटिस पर्ण झुलसा (पत्ती)

नए युवा पत्ते के उभरने के समय शीर्ष पत्ती पर *बोट्राईटिस साइनेरिया* कवक द्वारा इस रोग का प्रकोप दिखाई देता है। शुरुआती चरण में रोग प्रभावित पत्ती का भाग काले सड़ांध में परिवर्तित हो जाता है, जो बाद में रोग प्रभावित पत्ती पर कवक जाल दिखाई देता है।

इस प्रकार के लक्षण राष्ट्रीय ऑर्किड शोध केंद्र, पाक्योड के ऑर्किड हाउस में *थूनिया बेंसोनिया* और *थूनिया मार्शलियाना* पर दर्ज किए गए हैं। बोट्राईटिस लीफ ब्लाइट भी *एरिया जावनिका, फालेनोप्सिस* जाति और कैटलिया संकर पर भी पाए गए हैं। यह रोग पत्ती के आधार पर पानी को भिगोने वाले घाव के रूप में शुरू होता है, जो धीरे-धीरे नरम धब्बे के रूप में ऊपर की ओर बढ़ता है। रोग ग्राही पौधों पर यह रोग जनवरी-फरवरी के दौरान दिखाई देता है जब तापमान कम (7-21 डिग्री सेल्सियस) हो जाता है। कैटलिया हाइब्रिड पर, यह रोग एक छोटे काले धब्बे के रूप में पत्तों पर दिखाई देता है, जो ऊपर और नीचे के भाग में फैल जाता है, जो भूरे रंग के रंगीन कवकीय विकास के साथ बड़े पत्ते को प्रभावित करता है। बोट्राईटिस आमतौर पर स्वस्थ हरे ऊतकों के अतिरिक्त नई पत्तियों, चोट लगी पत्तियां, मृत ऊतक, मृत

पंखुड़ी या पत्ती पर आक्रमण करता हैं। अतः इस रोग में कवक पहले खाद्य आधार को उपनिवेशित करता है और फिर स्वस्थ ऊतकों को ग्रसित करता है ।

पत्ता शीथ और स्यूडोबल्ब सड़ांध

इस प्रकार का लक्षण और क्षति कभी-कभी होती है और डव ऑर्किड (*पक्टेलिस सुसनी*) में पाए जाते हैं। यह रोग युवा पत्ता, शीथ और स्यूडोबुलब सड़ांध का कारण बनती है। धीरे-धीरे यह रोग पूरे युवा पत्ते की शीथ को प्रभावित करती है, जिससे पूरे पौधे की सूख कर मौत हो जाती है। सड़े हुए स्यूडोबल्ब पर स्लेटी रंग की कवक के भारी वृद्धि के कारण कोनीडियोफोर्स की सतह स्पोरस को देखा जा सकता है।

सारणी 1: राष्ट्रीय ऑर्किड अनुसंधान केंद्र, सिक्किम में ग्रे मोल्ड (बोट्राईटिस साइनेरिया) से पाए जाने वाले विभिन्न प्रकार के संक्रमण

क्र.सं.	ऑर्किड	पौधे का संक्रमित भाग	लक्षण
1.	ताइना जाति	पत्ती	पत्ती युवा और निविदा शीर्ष पत्ती झुलसा
2.	सिम्ब्रिडियम जाति	पुष्प	पुष्प दल गिरना
3.	कलांथे ट्रिप्लीकेटा	पुष्प	पुष्पों अंगमारी एवं सूखना
4.	थुनिआ बेंसोनिया और थुनिआ मार्शलिआना	अनपेक्षित शीर्ष पत्ती	प्रारंभिक चरण में पत्ती के शीर्ष भाग पर काले रंग की सड़ांध और बाद में फूलों की पंखुड़ियों के शीर्ष अनपेक्षित पुष्प दलों में सड़ांध।
5.	फलानोप्सिस हाइब्रिड	पुष्प	पुष्प दलों का झड़ना
6.	फलानोप्सिस जाति	पत्ती	पर्ण मृदु विलगन और पर्ण अंगमारी
7.	एरिया जावनिका	पत्ती	
8.	कैटलिया हाइब्रिड	पत्ती	काला पर्ण झुलसा और पर्ण अंगमारी
9.	डव ऑर्किड (पेक्टेलिस सुसनी)	स्यूडोबलव और लीफ शीथ	नए स्यूडोबाल्वस का मृदु विलगन नरम सड़ांध (पर्ण अंगमारी) और बाद में लीफ शीथ पर्ण अंगमारी।

एशियाई लिली में कवक पत्ते और का फूल संक्रमण

विकास के शुरुआती चरण में युवा पत्तियां *बोट्राईटिस इलिप्टिका* नामक कवक से संक्रमित होती हैं, लेकिन फूल नमी में उच्च आर्द्रता और पॉली हाउस में गर्म मौसम बंद होने पर क्षति बहुत गंभीर होती है। पत्तियों पर जल सिक्तन अंडाकार से दीर्घवृत्तीय और भूरे काले रंग के धब्बे बनते हैं। इस रोग के अधिक प्रकोप पर पौधों की पत्तियां ऊपर से नीचे तक गिर जाती हैं। कभी-कभी कई धब्बे बन जाते हैं, जो अंगमारी का उग्र रूप धारण कर लेते हैं। प्रारंभिक अवस्था में फूलों की पंखुडियां एवं कलियां रोगग्रस्त होती हैं। गंभीर रूप से संक्रमित रोगी पुष्पों की कलियां खिल नहीं पाती और अधखिली कलियां बदसूरत पुष्प में बदल जाती हैं तथा खाली फूलों की डंठल और पुमंग और जायांग को छोड़कर सभी पंखुडियां गिर जाती हैं।

कवक वृद्धि व प्रसार हेतु अनुकूल दशाएं

बोट्राईटिस साइनेरिया कवक तापमान की एक विस्तृत श्रृंखला में सक्रिय कारक है। हालांकि, विकास के लिए उचित तापमान सीमा 21-25 डिग्री सेल्सियस है। मध्यम तापमान और उच्च सापेक्ष आर्द्रता (92-93%) पर यह

कवक अत्यधिक विनाशकारी हो जाता है। ग्रे मोल्ड के बीजाणु (स्पोर) के अंकुरण के लिए उच्च सापेक्ष आर्द्रता एक आवश्यक घटक है। पौधे के ऊतकों के विकास के लिए नमी की भी आवश्यकता होती है और इसलिए युवा, निविदा और रसीले पौधों के हिस्सों में रोग का फैलाव तेजी से होता है। हालांकि, शुष्क मौसम, कवक के विकास पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। ऑर्किड पर आमतौर पर यह रोग फरवरी-मई के दौरान सिक्किम स्थितियों के तहत होता है, जब तापमान अनुकूल होता है और वर्षा के बाद आर्द्रता अधिक होती है।

समेकित प्रबंधन

कृषि संबंधी प्रबंधन: ग्रे मोल्ड कवक वायुजनक होने के कारण इसके बीजाणु (स्पोर) कई चक्रों में अत्यधिक उत्पादित होते हैं, जो हवा से एक पौधे से दूसरे पौधे तक पहुंचते हैं। रोग के बीजाणु सड़ी-गली पत्तियों एवं पुष्पों में निवास करते हैं। अतः पुराने रोगग्रस्त फूलों को सावधानीपूर्वक पौधों से अलग कर देना चाहिए, ताकि वे दूसरे पौधों को रोगी न बना सकें। पुराने रोगग्रस्त पौधों की स्पाइक को भी सावधानी से अलग कर देना चाहिए, क्योंकि यह स्पोर्स का एक स्रोत है। कभी-कभी पुराने, रोगग्रस्त फूल, स्वस्थ पत्तियों पर गिर जाते हैं, जिससे स्वस्थ पत्तियों पर रोग का प्रभाव हो जाता है। अतः समय-समय पर पुराने फूलों एवं पत्तियों को हाथ से अलग करने से भी इस रोग के प्रभाव को कम किया जा सकता है।

चूंकि कवक की वृद्धि और संक्रमण के लिए सापेक्ष आर्द्रता (मुक्त नमी) आवश्यक है, अत: उत्पादकों को अतिसंवेदनशील पौधों के हिस्सों पर अधिक पानी के जमाव से बचने के लिए बहुत ध्यान देना चाहिए। पुष्प खिलने के दौरान अत्यधिक पानी को निकाल देना चाहिए। यदि सिंचाई की कोई अन्य वैकल्पिक विधि नहीं है, तो उत्पादकों को सलाह दी जाती है कि वे इसे दिन में जल्दी लागू करें ताकि पत्ते दिन में सूख सकें। गर्मी या कृत्रिम हवा का उपयोग पॉलीहाउस के अंदर 92 प्रतिशत से कम सापेक्ष आर्द्रता को कम करने में भी सहायता कर सकता है। हवा की उचित व्यवस्था (वेंटिलेशन) सुनिश्चित करने के लिए, पौधों की उचित दूरी और पत्ती के गीलेपन को कम करने से भी रोग की तीव्रता को कम करने में भी सहायता मिल सकती है।

रासायनिक नियंत्रण: बोट्राईटिस कवक को नियंत्रित करने के लिए कई प्रभावी रासायन हैं, लेकिन सभी उपयोग के लिए उपयुक्त नहीं हैं, क्योंकि कई रसायन ऑर्किड और लिलियम के फूलों के लिए हानिकारक होते हैं। ऑर्किड और लिली दोनों में ग्रे मोल्ड के प्रबंधन हेतु बाविस्टिन @ एक ग्राम प्रति लीटर या इंडोफिल एम 45 @ 2 ग्राम प्रति लीटर पानी के साथ 7-10 दिन के अंतराल पर छिड़काव प्रभावी होते हैं। इसके अतिरिक्तं, टॉपसिन एम @ 2 ग्राम प्रति लीटर या बेंलेट 1 ग्राम/लीटर पानी के साथ 7-10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करके इस रोग को नियंत्रित किया जा सकता है।

फ़लाएनोसिस फूल पर बॉट्राइटिस धब्बा

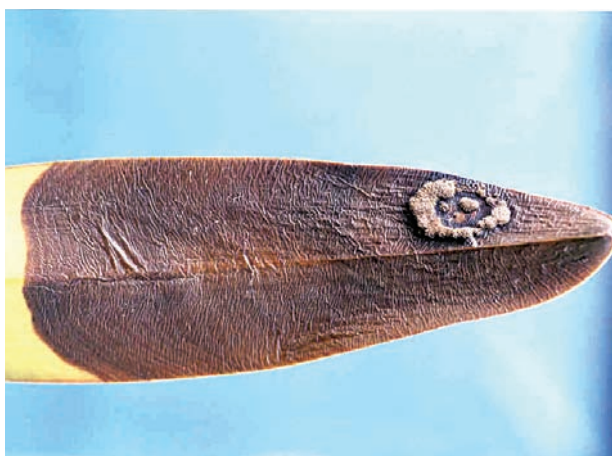

कतलिया हाइब्रिड का पर्ण झुलसा रोग

पेक्टैलिस सुसनो का बॉट्राइटिस स्युडो बल्ब मृदु विगलन रोग

टाइना जाति का पर्ण अंगमारी रोग

एशियाटिक लिली में *बॉट्राईटिस एलिप्टिका* द्वारा पर्ण संक्रमण

एशियाटिक लिली में *बॉट्राइटिस एलिप्टिका* द्वारा कली संक्रमण

एशियाटिक लिली में कली पर बॉट्राईटिस का संक्रमण

त्योहार साल की गति के पड़ाव हैं, जहां भिन्न-भिन्न मनोरंजन हैं, भिन्न-भिन्न आनंद हैं, भिन्न-भिन्न क्रीडास्थल हैं

- बरुआ

पादप वृद्धि एवं विकास में पोषक तत्वों का योगदान

एम.एस.राठी, संगीता पॉल, एस.एन. भौमिक एवं के. अन्नपूर्णा

सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

जिस प्रकार मनुष्य, पशु एवं पक्षियों को शारीरिक विकास एवं वृद्धि के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है, उसी प्रकार पौधों को भी उनके विकास एवं वृद्धि के लिए पोषक तत्वों की आवश्यकता होती है । पोषक तत्व पौधों की जड़ों द्वारा ग्रहण किए जाते हैं। पादप विश्लेषण से यह ज्ञात हुआ है कि उसमें लगभग 60 तत्व पाए जाते हैं। पौधों में इन तत्वों की उपस्थिति से यह निष्कर्ष नहीं निकलता कि इन तत्वों कि उपस्थिति पौधों की बढ़वार के लिए अति आवश्यक है। पौधों में इन तत्वों की आवश्यकता की जानकारी के लिए उस पोषक तत्व का निम्न कसौटी पर परखना आवश्यक है, अर्थात आवश्यक पोषक तत्व वह है -

1. उस पोषक तत्व की कमी से होने वाले लक्षणों को किसी अन्य पोषक तत्व को देकर दूर नहीं किया जा सकता।
2. वह पोषक तत्व पौधों के पोषण एवं उपापचय में सीधे भागीदार होता है।
3. उस पोषक तत्व की कमी के कारण पौधा अपना जीवन चक्र पूरा नहीं कर सकता।

पौधों में पाए जाने वाले लगभग 60 पोषक तत्वों में से केवल 16 तत्व ही ऐसे हैं जो उपर्युक्त तीनों आवश्यक दशाओं की आपूर्ति करते हैं। इसलिए इनकी उपस्थिति पौधों के लिए अति आवश्यक है। पौधों का लगभग 95 प्रतिशत भाग कार्बन, हाइड्रोजन, ऑक्सीजन एवं नाइट्रोजन का बना होता है। पौधों में लगभग 1 प्रतिशत भाग खनिज तत्वों का होता है। पौधों में पोषक तत्वों की आवश्यकतानुसार उनको तीन श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है:

(क) कार्बन, हाइड्रोजन एवं ऑक्सीजन: इन पोषक तत्वों को वृहत पोषक तत्व भी कहा जाता है। इन पोषक तत्वों को पौधे कार्बन डाई आक्साईड एवं पानी के रूप में ग्रहण करते हैं। सूर्य से प्राप्त प्रकाश एवं पत्तियों में उपस्थित पर्णहरित की सहायता से पौधे प्रकाश संश्लेषण की क्रिया द्वारा इन तत्वों को साधारण कार्बोहाइड्रेट में बदल देते हैं। बाद में चयापचय क्रियाओं द्वारा इस सरल कार्बोहाइड्रेट का स्टार्च, सेलुलोज, वसा एवं प्रोटीन आदि पदार्थों में प्रयोग होता है। इस प्रकार ये पोषक तत्व पौधों की शारीरिक संरचना के लिए अति आवश्यक हैं।

(ख) मुख्य पोषक तत्व: इन पोषक तत्वों को प्राथमिक पोषक तत्व भी कहा जाता है। नाइट्रोजन, फॉस्फोरस तथा पोटैशियम मुख्य पोषक तत्व हैं। इन तत्वों की पौधों को अधिक मात्रा में आवश्यकता होती है, इसीलिए ये मुख्य पोषक तत्व कहलाते हैं। ये निम्नलिखित हैं:

नाइट्रोजन: इस पोषक तत्व को पौधे अधिकतर नाइट्रेट और अमोनिया के रूप में ग्रहण करते हैं। नाइट्रोजन से प्रोटीन एवं पर्णहरित का निर्माण होता है। प्रोटीन जीवद्रव्य का अभिन्न अंग है। पौधे के समुचित विकास एवं वृद्धि के लिए पर्णहरित की उचित मात्रा का होना आवश्यक है। नाइट्रोजन द्वारा पौधे को गहरा हरा रंग प्राप्त होता है जो पौधे की ओजस्वी वृद्धि में सहायक होता है। फलों में रस एवं गूदे की मात्रा बढ़ती है। अधिक नाइट्रोजन की मात्रा का पौधों पर हानिकारक प्रभाव भी पड़ता है। इसकी अधिकता में फसल देर से पकती है। अनाज की फसल गिर जाती है। इसकी अधिकता से फसलों में रोगों एवं हानिकारक कीटों का प्रकोप भी बढ़ जाता है।

नाइट्रोजन की कमी के लक्षण: इसकी कमी मे पौधों की वृद्धि रुक जाती है। पत्तियां पीली पड़ जाती है एवं उपज कम हो जाती है।

फॉस्फोरस: इस पोषक तत्व को पौधे मुख्य रूप से डाईहाइड्रोजन फॉस्फेट अथवा हाइड्रोजन फॉस्फेट के रूप

में लेते हैं। फॉस्फोरस पौधों की कोशिकाओं में स्थित केंद्रक में पाए जाने वाले गुणसूत्रों के निर्माण का आवश्यक घटक है, जिससे नई कोशिकाओं का निर्माण होता है। बीजों एवं आहार का संग्रह करने वाले अन्य भागों में मांड का संग्रहण करने के लिए भी फॉस्फोरस का उचित मात्रा में उपलब्ध होना आवश्यक है। इसके उचित प्रयोग से जड़ों का विकास होता है। फसल जल्दी पकती है। कुछ रोगों के प्रति पौधों में रोगप्रतिरोधक क्षमता उत्पन्न करता है। पौधों मे फूल एवं फल लगने में मदद करता है। फॉस्फोरस के प्रयोग से दाना मोटा एवं चमकीला हो जाता है जिससे उसकी गुणवत्ता एवं उपज में भी वृद्धि होती है। फॉस्फोरस पौधों द्वारा आवश्यकता से अधिक नाइट्रोजन के प्रयोग को नियंत्रित करता है तथा पौधों को गिरने से रोकता है। यह दलहनी फसलों में जड़ ग्रंथियों के निर्माण में मदद करता है, जिससे नाइट्रोजन स्थिरीकरण बढ़ जाता है।

फॉस्फोरस की कमी के लक्षण: पौधों में फॉस्फोरस की कमी होने पर जड़ों का विकास बहुत कम होता है। पौधे बहुत छोटे रह जाते हैं व फसल देर से पकती है। फलों एवं बीजों का निर्माण ठीक से नहीं हो पता है। पौधों के तने कमजोर हो जाते हैं। पौधों में फॉस्फोरस की कमी होने से नई कोशिकाओं के निर्माण की दर कम हो जाती हैं साथ ही साथ घुलनशील शर्करा पत्तियों में काफी मात्रा में जमा हो जाती है।

पोटैशियम: पौधों द्वारा इस तत्व को पोटैशियम धनात्मक आयन (K^+) के रूप में ग्रहण किया जाता है। पौधों की जैविक प्रक्रियाओं को सुचारु रूप से चलाने के लिए इस तत्व की आवश्यकता होती है, तथा पौधों द्वारा इस तत्व को भूमि से काफी मात्रा में शोषित किया जाता है।

पोटाश की कमी के लक्षण: पौधों में इस तत्व की कमी से श्वसन क्रिया की दर बढ़ जाती है तथा प्रकाश संश्लेषण की दर कम हो जाती है। ऊतकों में पानी की कमी हो जाती है व पत्तियों के किनारे झुलस जाते है। पत्तियों में क्लोरोफिल बनना कम हो जाता है एवं पौधों में घुलनशील नाइट्रोजन की अधिकता हो जाती है जिससे पोटैशियम की कमी वाला चारा पशुओं के लिए हानिकारक होता है।

(ग) गौण पोषक तत्व: पौधों को इन पोषक तत्वों की मात्रा मुख्य पोषक तत्वों की अपेक्षा कम होती है। गौण तत्व निम्नलिखित हैः

कैल्शियम: इस पोषक तत्व को पौधे कैल्शियम धनात्मक आयन के रूप में लेते हैं। कैल्शियम, कैल्शियम पेक्टेट के रूप में कोशिका भित्ति के बीच लेमिला के निर्माण के लिए आवश्यक है। इसकी उपस्थिति में जड़ों द्वारा नाइट्रोजन के अवशोषण में वृद्धि तथा प्रोटीन का निर्माण अधिक होता है। उपापचय की क्रियाओं में पौधे की कोशिकाओं में बने ऑक्जेलिक अम्ल के प्रभाव को दूर करता है। पौधे की जड़ों एवं अग्रभाग के समुचित विकास के लिए कैल्शियम की समुचित मात्रा का मिलना आवश्यक है।

कैल्शियम की कमी के लक्षण: कैल्शियम का संचार पुराने अंगों से नए अंगों की ओर सुगमता से न होने के कारण कैल्शियम की कमी का प्रभाव सबसे पहले अग्रस्थ कलिकाओं पर होता है तथा उनका विकास रूक जाता है। इसकी कमी से पौधों के तने कमजोर, पत्तियां छोटी तथा किनारे मुड़ जाते है। कैल्शियम की कमी से जड़ों की वृद्धि कम तथा दलहनी फसलों में जड़ों पर ग्रंथियों की संख्या भी कम हो जाती है।

मैग्नीशियम: पौधे इस पोषक तत्व को मैग्नीशियम धनात्मक आयन के रूप में लेते हैं। यह पौधे के पर्णहरित की रचना का अनिवार्य तत्व है। पौधे के अंदर अनेकों एंज़ाईमी क्रियाओं के सुचारु रूप से होने के लिए मैग्नीशियम आवश्यक है। यह वसा के निर्माण तथा मांड के स्थानांतरण में सहायक है।

मैग्नीशियम की कमी के लक्षण: मैग्नीशियम का परिवहन पौधों के पुराने अंगों से नए अंगों की ओर सरलता से हो जाता है। इसलिए इसकी कमी के लक्षण सर्वप्रथम पौधे की निचली पत्तियों पर दिखाई देते हैं। पत्तियों की शिराओं के मध्यवर्ती अंगों का हरा रंग समाप्त हो जाता हैं लेकिन शिराएँ हरी बनी रहती हैं।

गंधक: पौधे गंधक को सल्फेट आयन के रूप में अवशोषित करते हैं । यह एमिनो अम्ल के निर्माण का अनिवार्य तत्व है। इसलिए यह बहुत से प्रोटीन एवं रासायनिक द्रव्यों के

निर्माण में काम आता है। थायमिन एवं बायोटिन एमिनो अम्ल जो पौधों की वृद्धि को नियंत्रित करते हैं, उनमे भी गंधक होता है। सरसों एवं अन्य तेलीय पौधों में इसके द्वारा तेल का प्रतिशत बढ़ जाता है।

गंधक की कमी के लक्षण: गंधक की कमी से नई पत्तियों का रंग हल्के हरे से पीला हो जाता है।

(घ) सूक्ष्म पोषक तत्व: पौधों को इन पोषक तत्वों की सूक्ष्म मात्रा की ही आवश्यकता होती है। लौह, मैंगनीज़, तांबा, बोरॉन, जस्ता, मालिब्डीनम एवं क्लोरीन आदि सूक्ष्म पोषक तत्व हैं। यह पौधे द्वारा निर्मित जैविक पदार्थों के भाग नहीं होते परंतु पौधों की वृद्धि के लिए सूक्ष्म तत्व भी उतने ही आवश्यक हैं जितने की मुख्य पोषक तत्व।

पौधे सूक्ष्म पोषक तत्वों को प्राय निम्न रूपों में अवशोषित करते हैं। लौह को फेरस आयन तथा चिलेट्स के रूप में लेते हैं। लौह पर्णहरित का अंश नहीं है लेकिन इसकी कमी से पौधे पीले पड़ जाते हैं, क्योंकि लौह, पौधे में पर्णहरित के विकास में सहायक है। पौधों में इस तत्व का चालन पुराने अंगों से नए अंगों की और सुगमता से नहीं हो पाता, अत: इसकी कमी के लक्षण नई पत्तियों पर पहले दिखाई देते हैं।

मैंगनीज़ को पौधे मैगनस आयन एवं चिलेट्स के रूप में ग्रहण करते हैं। यह पौधों में एस्कार्बिक अम्ल के संश्लेषण में उत्प्रेरक का कार्य करता है। इसकी कमी से पौधों में ग्लूटामिक एवं एस्पार्टिक जैसे एमिनो अम्लों का संचयन नहीं हो पाता है। मैंगनीज का संचालन पुराने अंगो की ओर कम होता है। इसलिए इस तत्व की कमी के लक्षण नई पत्तियों पर पहले दिखाई देते हैं।

तांबे को पौधे कॉपर आयन एवं चिलेट्स के रूप में लेते हैं। यह पौधों में एमिनो अम्ल एवं प्रोटीन के साथ मिलकर बहुत से यौगिकों का निर्माण करता है। यह क्लोरोफिल निर्माण के समय लौह के उपयोग में सहायता करता है।

इसके अतिरिक्त अन्य सूक्ष्म पोषक तत्वों जैसे जस्ता, बोरॉन, मालिब्डीनम एवं क्लोरीन आदि का भी पादप वृद्धि में महत्वपूर्ण योगदान है। जस्ता पौधों में वृद्धि नियामकों के निर्माण में सहायता करता है। कुछ पौधों में यह प्रजनन में भी सहायता करता है। बोरॉन का कैल्शियम के उपापचय में मुख्य योगदान है। यह नाइट्रोजन के अवशोषण में सहायता करता है। परागण एवं फल अथवा बीजों के निर्माण में सहायता करता है तथा कार्बोहाइड्रेट के चयापचय को नियंत्रित करता है।

मालिब्डीनम, पौधों में नाइट्रेट रिडक्टेज़ एंजाइम का मुख्य स्रोत है। पौधों में यह लौह के अवशोषण एवं संचरण में सहायक है। क्लोरीन द्वारा पौधों में रोगरोधी क्षमता विकसित होती है। बहुत सी फसलों जैसे प्याज एवं कपास आदि की पैदावार भी बढ़ती है।

प्रकृति, समय और धैर्य ये तीन हर दर्द की दवा हैं।

- अज्ञात

गुणवत्तायुक्त तेल एवं खली वाली भारतीय सरसों की किस्में

यशपाल, सुजाता वासुदेव, नवीन सिंह, नविन्द्र सैनी, राजेन्द्र सिंह, महेन्द्र सिंह यादव, मुकेश ढिल्लों, भगवान दास, मिथलेश नारायण, राजेश कुमार एवं देवेन्द्र कुमार यादव

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारत में सोयाबीन के बाद राया सरसों खाद्य तेल का सबसे महत्वपूर्ण स्रोत है। खाद्य तेल में उपस्थित विभिन्न वसीय अम्लों का अनुपात एवं उनकी मात्रा सेवन के लिए उपयुक्तता निर्धारित करते हैं। सरसों तेल में ईरूसिक अम्ल एवं तेल रहित खली में ग्लूकोसिनोलेट्स पोषण संबंधी अवांछनीय कारक है। भारतीय वैज्ञानिकों ने अंतरराष्ट्रीय स्तर पर स्वीकार्य कैनोला गुणवत्ता वाली सरसों की किस्मों का विकास किया है जिनके तेल में ईरूसिक अम्ल की मात्रा 2 प्रतिशत से कम एवं तेल रहित खली में ग्लूकोसिनोलेट्स की मात्रा 30 माइक्रोमोल्स प्रति ग्राम से कम है। कैनोला तेल के आयात पर खर्च रोकने एवं गुणवत्ता तेल की बढ़ती हुई मांग को पूरा करने के लिए अनुसंधान, प्रसार एवं नीति में अनेको बदलावों की आवश्यकता है।

राया सरसों: देश की एक महत्वपूर्ण तिलहन फसल

सोयाबीन एवं ताड़ के बाद राया सरसों का विश्व में खाद्य तेलों के मामले में तीसरा महत्वपूर्ण स्थान है। भारत में सोयाबीन के बाद 24 प्रतिशत हिस्सेदारी के साथ राया सरसों दूसरा सबसे ज्यादा प्रयोग में लाया जाने वाला खाद्य तेल है। एशिया महाद्वीप के कुल राया सरसों के उत्पादन में भारत की 24 प्रतिशत हिस्सेदारी है। राया सरसों ब्रासिका जाति से संबंधित है जो ऐसी कई फसलों का समूह है जिनका प्रयोग सब्जियों के रूप में (फूल गोभी, बंद गोभी व ब्रोकली), मसालों के रूप में (काली राई) एवं उनके बीजों से निकाले गए खाद्य तेलों के रूप में (राई/लाहा/राया/भारतीय सरसों, तोरिया, भूरी सरसों, पीली सरसों) गोभी सरसों एवं करण राई किया जाता है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने पिछले 60 वर्षों में राया सरसों के अनुसंधान में उल्लेखनीय योगदान किया है। संस्थान द्वारा अब तक कुल 31 किस्में विकसित की गई हैं जिसमे 2 पीली सरसों, 2 भूरी सरसों, 3 करण राई एवं 24 भारतीय सरसों की किस्में शामिल हैं। राया सरसों की 16 किस्में अभी भी बीज उत्पादन श्रृंखला में शामिल हैं एवं राया के कुल प्रजनक बीज में पूसा संस्थान द्वारा विकसित किस्मों की 40 से 50 प्रतिशत तक मांग है।

गुणवत्तायुक्त तेलः अच्छे स्वास्थ्य के लिए एक लाभकारी विकल्प

तेल की गुणवत्ता के मानक बहुत जटिल हैं जोकि विभिन्न कारकों जैसे कि तेल की पौष्टिकता, उपभोक्ता की पसंद, औद्योगिक उपयुक्तता, बाजार की स्वीकार्यता, भंडारण की अवधि आदि पर निर्भर करते हैं। तेल एवं खली में उपस्थित वसीय अम्लों का स्वरूप, प्रोटीन एवं आवश्यक एमिनो अम्ल की मात्रा, तेल एवं खली की पोषण गुणवत्ता को निर्धारित करते हैं। अवांछनीय आहार का सेवन एवं शारीरिक कसरत की कमी के कारण जीवन शैली से जुड़ी बीमारियां सामान्य होती जा रही हैं। विश्व स्वास्थ्य संगठन के अनुसार, वर्ष 2015 के दौरान 17.7 मिलीयन लोग विश्व भर में हृदय से जुड़ी बीमारियों जैसे दिल का दौरा, स्ट्रोक एवं परिधीय संवहनी रोग के वजह से मारे गए। सेवन की गई वसा की मात्रा एवं गुणवत्ता, हृदय की कार्यशैली को बहुत प्रभावित करती है। कोलेस्ट्रॉल, संतृप्त एवं ट्रांस-वसा हृदय धमनियों की बीमारियों से संबंधित है। संपन्नता, समृद्धि एवं निरंतर प्रगति के चलते लोगों में स्वास्थ्य के प्रति जागरूकता आई है। नीचे दी गई सारणी-1 में विभिन्न तेलों में वसा अम्लों की संरचना दी गई है।

सारणी-1 प्रमुख तेल बीजों में वसा अम्लों की संरचना

फसल / तेल	वसा अम्ल (प्रतिशत)					
	संतृप्त	ओलिक	लिनोलिक	लिनोलेनिक	इकोसेनोइक	ईरूसिक
परंपरागत सरसों	7	12	14	9	8	45-55
0/00 भारतीय सरसों	7	45-50	29	14	3	2
0/00 गोभी सरसों	7	57-62	21	11	2	2
घी	65	32	2	ढ1	-	-
सोयाबीन	15	23	54	8	-	-
मूँगफली	19	48	32	-	-	-
तिल	14	40	41	आंशिक	-	-
सूरजमुखी	12	17	70	आंशिक	1	-
कुसुम	10	14	75	-	1	-
ओलिव	13	76	10	0.5	-	-
चावल की भूसी	25.1	38	34.4	2.2	-	-
नारियल	91	7	2	-	-	-
ताड़	51	38	10	1	-	-
मक्का	13	29	57	1	-	-
बिनौला	27	18	54	आंशिक	-	-

सरसों तेल में ईरूसिक अम्ल एवं ग्लूकोसिनोलेटस

विभिन्न तेलों में वसीय अम्लों की संरचनाओं में विविधताओं के चलते कोई भी तेल संपूर्ण नहीं है फिर भी उक्त सारणी दर्शाती है कि है कि अन्य तेलों के मुकाबले सरसों का तेल संपूर्णता के नजदीक है। भारतीय सरसों में ईरूसिक अम्ल, एक 22-कार्बनयुक्त एकल असंतृप्त वसीय अम्ल प्रमुखता से पाया जाता है एवं यह कुल वसीय अम्लों का 45 से 55 प्रतिशत भाग बनाता है। ईरूसिक अम्ल की उपस्थिति सरसों के तेल में पौष्टिकता रोधी मानी जाती है। ईरूसिक अम्ल बच्चों एवं जानवरों में लिपिडोसिस व मायोकार्डियल फाइब्रोसिस पैदा करता है। सरसों के तेल में उच्च ईरूसिक अम्ल की मात्रा उपापचित नहीं होती और रक्त में कोलेस्ट्रॉल की मात्रा को बढ़ावा देती है एवं परीधीय संवहनी तंत्र के कार्य को बाधित करती है। सरसों की खली जानवरों के लिए पोषण आहार का उत्तम माध्यम है क्योंकि इसमें 40 प्रतिशत उच्च गुणवत्ता वाली प्रोटीन एवं संतुलित ऐमिनों अम्लों की मात्रा पाई जाती है। परंतु इसका उपयोग जानवरों के लिए खासकर जुगाली न करने वाले जानवरों जैसे कि सुअर एवं मुर्गियों के लिए उपयुक्त नहीं है क्योंकि इसमें गंधक-बहुल ग्लुकोसिनोलेट पाया जाता है जोकि पचने के समय विषैला एवं गलगंडकारी तत्व पैदा करता है। इसके साथ-साथ यह खली में कड़वाहट बढ़ने की वजह से खली

के स्वाद में भी कमी लाता है। ग्लुकोसिनोलेट्स की उच्च मात्रा जिगर व गुर्दे को नुकसान पहुचानें के साथ-साथ थाईराइड के आकार, संरचना एवं कार्य को बाधित करती है।

एकल शून्य (0) व दोहरा शून्य (कैनोला गुणवत्ता) (00) वाली भारतीय सरसों की किस्में

भारतीय सरसों की परम्परागत किस्मों में ग्लुकोसिनोलेट्स (100 से 200 माइक्रामोल्स प्रतिग्राम) एवं ईरूसिक अम्ल (45-55 प्रतिशत) अधिक मात्रा में पाए जाते हैं जो पोषण की दृष्टि से अवांछनीय तत्व माने जाते हैं। भारतीय सरसों की किस्में जिनके तेल में ईरूसिक अम्ल 2 प्रतिशत से कम अथवा तेल रहित खली में ग्लुकोसिनोलेट्स की मात्रा 30 माइक्रामोल्स प्रतिग्राम से कम हो उन्हें "एकल शून्य" (सिंगल जीरो) किस्में कहा जाता है। सरसों की किस्में जिनमें ईरूसिक अम्ल की मात्रा 2 प्रतिशत से कम एवं तेल रहित खली में ग्लूकोसिनोलेटस की मात्रा 30 माइक्रामोल्स प्रतिग्राम से कम हों तो उन्हें "डबल जीरो" अथवा कैनोला गुणवत्ता वाली किस्में कहा जाता है और अंतरराष्ट्रीय बाजार में इन्हें अच्छा मुल्य प्राप्त होता है। भारतीय सरसों प्रजनन कार्यक्रम में गुणवत्ता मानकों को समायोजित कर गुणवत्ता वाली किस्में विकसित करने के लिए पुनः दिशा निर्धारण का गई है। हमारे देश में तेल की गुणवत्ता सुधार के लिए वर्ष 1997 में भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के तत्वावधान में नेटवर्क परियोजना शुरू की गई जिसमें वैज्ञानिक पौध प्रजनन द्वारा अवांछित तत्वों को हटाकर तेल की गुणवत्ता को बढ़ाने का प्रयास करते रहे है। राष्ट्रीय सरसों अनुसंधान कार्यक्रम में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने राया सरसों के आनुवंशिक वर्धन में सर्वोपरि एवं अग्रणी होने के अनेक उदाहरण प्रस्तुत किए हैं। भा.कृ.अनु.सं. द्वारा देश की पहली एकल शून्य किस्म "पूसा करिश्मा" वर्ष 2005 में विकसित की गई तथा इसके पश्चात 5 अन्य एकल शून्य किस्में नामतः पूसा सरसों 21, पूसा सरसों 22, पूसा सरसों 24, पूसा सरसों 29 एवं पूसा सरसों 30 विकसित की गई। इसी क्रम में पूसा संस्थान, नई दिल्ली सार्वजनिक क्षेत्र में देश का पहला संस्थान है जिसने कम ईरूसिक अम्ल एवं ग्लुकोसिनोलेट्स वाली (कनौला गुणवत्ता) भारतीय सरसों की किस्म पूसा डबल जीरो सरसों 31 (पी. डी.जेड.एम. 31) का विकास किया है ।

इन किस्मों का उच्च गुणवत्तायुक्त बीज पूसा संस्थान के अतिरिक्त राष्ट्रीय बीज निगम एवं राज्य बीज निगमों द्वारा भरपूर मात्रा में पैदा किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त समझौते के तहत इन किस्मों के बीज उत्पादन एवं विपणन का लाईसेंस दिनकर बीज, अहमदाबाद को दिया गया है तथा पतंजली संस्थान, हरिद्वार से भी समझौता किया जा रहा है। गुणवत्ता सचेत समाज एवं उपभोक्ता वरीयता को दखते हुए आशा की जाती है कि उच्च गुणवत्ता वाली पूसा सरसों की किस्में बाजार में 300-500 रुपये/क्विंटल का अतिरिक्त मुनाफा किसानों को देगी जो किसानों आय बढानें के प्रयास में सहायक सिद्ध होगी। इस प्रकार से सरसों की गुणवत्ता वाली किस्में न केवल भारतीय किसानों के लिए एक वरदान है अपितू उपभोक्ताओं के लिए भी एक स्वास्थ्यवर्धक उत्पाद है। आनुवंशिकी संभाग-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित इन किस्मों की महत्वपूर्ण विशेषताएं नीचे दी गई हैं।

पूसा करिश्मा

हमारे देश में सार्वजनिक क्षेत्र की गुणवत्तायुक्त तेल (एकल शून्य) वाली इस प्रथम किस्म का अनुमोदन राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली के लिए वर्ष 2005 में किया गया। इसकी औसत पैदावार 2200 किग्रा./है. तथा उत्पादन क्षमता 3402 किग्रा./है. तक है। इसके दाने छोटे (3.37 ग्रा./1000 दाने) आकार के आकर्षक पीले रंग के हैं जिनमें तेल की औसत मात्रा 38 प्रतिशत है। इस किस्म की पकने की अवधि 148 दिन हैं।

पूसा सरसों-21

कम इरूसिक अम्ल वाली इस किस्म का अनुमोदन पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, राजस्थान, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, व जम्मू-कश्मीर के मैदानी क्षेत्र, मध्य प्रदेश तथा छत्तीसगढ़ के लिए 2007 में किया गया। इसकी औसत पैदावार उत्तर-पश्चिमी मैदानी क्षेत्र में 2110 किग्रा./है. तथा मध्य क्षेत्र में 1860 कि.ग्रा/है. तथा उत्पादन क्षमता 2735 किग्रा./है. तक है। इसके दाने छोटे (4.3 ग्रा./1000 दाने) आकार के हैं जिनमें तेल की औसत मात्रा 35.6 प्रतिशत है। यह किस्म उत्तर पश्चिमी मैदानी क्षेत्र में 142 दिनो में तथा मध्य क्षेत्र में 133 दिनों में पकती है।

पूसा सरसों-22

कम इरूसिक अम्ल वाली इस किस्म का अनुमोदन राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र के लिए 2008 में किया गया। इसकी औसत पैदावार 2070 किग्रा./है. तथा उत्पादन क्षमता 2750 किग्रा./है. तक है। इसके 1000 दानों का औसत वजन 3.6 ग्राम है इनमें तेल की मात्रा 36.0 प्रतिशत होती है। इसकी पकने की अवधि 142 दिन है।

पूसा सरसों-24

कम इरूसिक अम्ल वाली इस किस्म का अनुमोदन राजस्थान, पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, जम्मू-कश्मीर के मैदानी क्षेत्र व पश्चिमी उत्तर प्रदेश के लिए 2008 में किया गया। इसकी औसत पैदावार 2025 किग्रा./है. तथा उत्पादन क्षमता 2904 किग्रा./है. तक है। इसके दाने छोटे (4.0 ग्रा./1000 दाने) आकार के हैं जिनमें तेल की औसत मात्रा 36.55 प्रतिशत है। इस किस्म की पकने की औसत अवधि 140 दिन है।

पूसा सरसों-29

कम इरूसिक अम्ल वाली इस किस्म का अनुमोदन दिल्ली, हरियाणा, जम्मू, पंजाब एवं उत्तरी राजस्थान के लिए 2013 में किया गया। इसकी औसत पैदावार 2169 किग्रा./है. तथा उत्पादन क्षमता 3005 किग्रा./है. तक है। इसके 1000 दानों का वजन 4.0 ग्रा. है जिनमें तेल की मात्रा 37.2 प्रतिशत है। इस किस्म की पकने की औसत अवधि 143 दिन है।

पूसा सरसों-30

कम इरूसिक अम्ल व मोटे दाने वाली इस किस्म का अनुमोदन उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, मध्य प्रदेश एवं पूर्वी राजस्थान के लिए 2013 में किया गया। इस किस्म की

औसत पैदावार 1824 किग्रा./है. तथा उत्पादन क्षमता 3778 किग्रा./है. तक हैं। सरसों की कम इरूसिक अम्ल किस्मों में मोटे दाने वाली (5.38 ग्राम/1000 दाने) यह प्रथम किस्म है जिसके दानों में तेल की मात्रा 37.7 प्रतिशत है। यह किस्म 137 दिनों में पक कर तैयार हो जाती है।

पूसा डबल जीरो सरसों-31

देश की प्रथम कैनौला गुणवत्ता (दोहरा शून्य) वाली भारतीय सरसों की इस किस्म का अनुमोदन वर्ष 2017

में पंजाब, हरियाणा, दिल्ली, जम्मू एवं उत्तरी राजस्थान के सिंचित क्षेत्रों में समय से बुआई के लिए किया गया है। इसकी औसत पैदावार 2334 किग्रा./है. तथा उत्पादन क्षमता 2766 किग्रा./है. तक है। इसके दाने पीले रंग एवं मध्यम आकार के (1000 दानों का वजन 3.68 ग्रा.) है जिनमें तेल की औसत मात्रा 40.6 प्रतिशत है। इस किस्म के पकने की अवधि 142 दिन है।

फल के आने से वृक्ष झुक जाते हैं, वर्षा के समय बादल झुक जाते हैं, संपत्ति के समय सज्जन भी नम्र होते हैं। परोपकारियों का स्वभाव ही ऐसा है।

- तुलसीदास

शीतोष्ण फलों की पौधशाला चयन की विधि

के.के. प्रमाणिक, ए.के. शुक्ला, संतोष वाटपाडे एवं सुनील कुमार गर्ग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थाान, क्षेत्रीय केंद्र, शिमला, (हिमाचल प्रदेश)

हिमाचल प्रदेश के प्रमुख फलों में सेब के अतिरिक्त आड़ू, नाशपाती, बादाम, कीवी, खुबानी चैरी, नेक्टेरिन, प्रून और प्लम का 35 प्रतिशत से ज्यादा क्षेत्रफल है। यह एक ऐसा व्यवसाय है, जिससे उत्पादनकर्ता, उपभोक्ता और अन्य व्यक्ति लाभ उठा सकते हैं। बागवान को आर्थिक लाभ, उपभोक्ता और उत्पादक को पोषक तत्व और अन्य व्यक्तियों को इसके उत्पादन से लेकर निपटारे तक के सभी कार्यों से संबंधित व्यवसाय मिल जाते हैं।

बहुवर्षीय फसलों के बाग लगाने के समय की गई गलती बाद में नहीं सुधारी जा सकती है। इसलिए पौधे तैयार करना एक ऐसी कला है, जिसे वैज्ञानिक तरीके से तैयार करने के लिए तकनीकी जानकारी का होना अति-आवश्यक है। सफल बागवान का यह उद्देश्य होना चाहिए कि वह किस प्रकार अधिक से अधिक उत्पादन करें। उत्पाद लागत कम हो तथा उत्पादन अधिक हो इसके लिए पौधा भी उच्च स्तर का होना आवश्यक है। एक निम्न कोटि के पौधे या पेड़ पर उत्पादक यदि पूरा परिश्रम और अधिक धन भी लगा लें तो उस पौधे या पेड़ से उच्च स्तर का उत्पादन प्राप्त नहीं कर सकता। अत: यह कार्य केवल कुशल पौधशाला उत्पादक द्वारा ही संभव है।

पौधशाला का दृश्य

पौधशाला उत्पादन कार्य में बीज या पौधे के अन्य भाग द्वारा नए पौधे तैयार किए जाते हैं। तैयार किए गए पौधों को उचित अवस्था तथा दशा में बागवान तक पंहुचाना भी इसी कार्य का अभिन्न अंग है। इसलिए एक सफल पौधशाला उत्पादक को अच्छे और वांछित गुणों वाले पौधे ही तैयार करने चाहिए। इसलिए शीतोष्ण फलों के उत्पादन में मूलवृंतों का अपना ही महत्व है और सही मूलवृंत का चुनाव और प्रयोग आवश्यक है। शीतोष्ण फलों को उगाने के लिए दो तरह के मूलवृंत प्रयोग किए जाते हैं। बीजू मूलवृंत और क्लोनल मूलवृंत। पौधशाला उत्पादन के लिए निम्न बातों पर ध्यान देना अति आवश्यक है:

भूमि का उपयोग

पौधशाला उत्पादन के लिए भूमि अति आवश्यक है। उत्पादक के पास यदि कम क्षेत्र है, तो वह इस क्षेत्र में बीज बोकर पौधे तैयार कर सकने में सक्षम है। भूमि लगभग हरित आवरण से ढकी होने के कारण उसका भू-क्षरण से बचाव होता है और मृदा के गुणों को संजोए रखती है। लगातार खेती करने या भूमि को उपयोग में लाने से वह बंजर नहीं होती है। ऊंची नीची धरातल वाली भूमि पर छोटी क्यारियां या खेत बनाकर उसका उपयोग हो जाता है।

श्रम का उपयोग और रोजगार उपलब्धि

पौधशाला उत्पादन एक ऐसा कार्य है जिसमें सालभर कोई न कोई कार्य चलता रहता है लेकिन बगीचे में श्रमिकों को वर्ष भर कार्य उपलब्ध नहीं होता है। पौधशाला उद्योग में श्रम का उपयोग अधिक होता है। लगभग प्रतिदिन कोई न कोई काम करना ही होता है। उत्पादक को स्वयं तथा उसके पास के अन्य श्रमिकों को कार्य मिलता है। घासफूस निकालना, गुड़ाई करना, सिंचाई करना, पौधे उखाड़ना, उखड़े पौधों को बांधना ऐसे कई कार्य हैं, जिन पर श्रम की आवश्यकता लगातार रहती है।

पौधशाला क्षेत्र पर किए जाने वाले कार्य तथा क्षेत्र की तैयारी, मिट्टी की खुदाई, निराई, गुड़ाई, मिट्टी चढ़ाना, सिंचाई करना, खाद और उर्वरकों का मिश्रण, कलम या चश्मा बांधना, पौधे उखाड़ना, पौधे को सड़क तक पहुंचाना, ढुलाई आदि श्रमिकों पर ही निर्भर हैं। एक सफल फल व पौध उत्पादक अनेक श्रमिकों को रोजगार उपलब्ध करवाता है।

पौधों की उपलब्धता

पौधे स्वयं या अपनी ही देख-रेख में तैयार किए जाएं तो उनकी शुद्धता का भरोसा रहता है। जातीय गुणों का परिक्षण व निरीक्षण स्वयं ही करते रहना चाहिए। शुद्ध बीज या पेड़ का अन्य भाग एकत्रित करने के उपरांत उसे अपने सामने ही मृदा में रोपित करने के उपरांत निकालने वाले पौधे विश्वस्त होते हैं। अन्य स्रोतों से खरीदें गए या मंगवाए गए पौधे की पूर्ण शुद्धता प्रमाणित नहीं की जा सकती है। जब पौधे स्वयं के लिए तैयार किए जाएं तो इन के गुणों पर पूरा ध्यान रखा जाता है। अपनी मांग से अधिक उत्पादित पौधों को बेच दिया जाता है। इसलिए गुणवत्ताग को बनाए रखने का कार्य रहता है। अपनी ही पौधशाला पर पौधे सरलता से उपलब्ध होते हैं, क्योंकि इन्हें कहीं और से नहीं लाना पड़ता है। अपनी इच्छा अनुसार ही इनकी संख्या तैयार की जा सकती है। पौधों की खरीद के लिए अग्रिम व्यवस्था का प्रबंध करने की आवश्यकता नहीं होती और न ही अग्रिम धनराशि जमा कराने का झझंट रहता है। अपनी पौधशाला से सरल व समय पर ही पौधों की उपलब्धि हो जाती है।

कीट और रोग प्रबंधन

पौधशाला में पौधे कीट और रोग मुक्त होने चाहिए। कीट और रोगमुक्त पौधे की पहचान अलग ही होती है और उसकी मांग भी बढ़ जाती है। पौधशाला के विभिन्न कार्य स्वयं की देख-रेख में होने के कारण उत्पादक अपने पौधों पर यथोचित कीट व रोग नियंत्रण उपाए करते हैं। पहले तो बीज का उपचार किया जाता है तथा यदि भूमि में किसी कीट या रोग के अंश हों तो उसे उपचारित कर लिया जाता है। बाद में पौधे पर होने वाले कीड़ों व रोगों के प्रकोप को रोका जाता है। इस प्रकार पौधशाला में तैयार किए गए पौधे प्राय: कीट और रोगमुक्त होते हैं। स्वस्थ और निरोग पौधे ज्यादा प्रतिरोधक होते हैं। उनमें कीड़ों और रोगों से सामना करने की क्षमता अधिक होती है। दुर्बल पौधे पर ये शीघ्र तथा सुगमता से आक्रमण करते हैं। इसलिए केवल स्वस्थ पौधे ही लगाने चाहिए।

अन्य उद्योगों को बढ़ावा

आजकल बागवानी के साथ अन्य उद्योगों को बढ़ाना आत्म विश्वास पैदा करता है एवं पौधशाला उद्योग से संबंधित अन्य उद्योगों को भी बढ़ावा मिल जाता है। अन्य उद्योगों में बीज एकत्रित करना तथा इसका क्रय और विक्रय, खेती में प्रयोग सामग्री तथा औजार, यंत्र, खाद और उर्वरक, सिंचाई में प्रयुक्त सामग्री (औषधियां और छिड़काव यंत्र) प्लास्टिक की थैलियां आदि। इन्हें उत्पादन करने तथा वितरण करने के कार्य में बहुत व्यक्ति लगते हैं। इसके अतिरिक्त पौधों को अन्य स्थानों पर ले जाने के लिए यातायात और संसाधन का प्रबंध करने में व्यक्ति लगे हैं।

पौध तैयार करने के लिए आवश्यकताएं

स्वस्थ और सहनशील पौध तैयार करना बहुत जरूरी है। प्रकृति ने पेड़-पौधों के सम्बर्धन के लिए कोई न कोई साधन दिया है, जिसे हम मिट्टी में जल और तापक्रम उचित मात्रा में प्रदान करें तो वह नन्हें पौधे में परिवर्तित हो जाता है। बीज से पौधा तैयार करना बहुत ही आसान कार्य है और इसे पौध या पौधशाला उगाना कहा जाता है। अच्छी फसल के लिए सबसे महत्वपूर्ण है कि उचित गुणवत्ता के पौधे तैयार किये जाएं जिसके लिए कई प्रकार के छोटे-छोटे कार्य तथा सावधानियां प्रयोग में लानी पड़ती हैं। इसके लिए मिट्टी, क्षेत्र की तैयारी, सिंचाई खाद, पोषक, कर्तन, पौध संरक्षण, पौध व्यवस्था, पौध को

उखाड़ना और उसे सुरक्षित अवस्था में रोपित किए जाने वाले स्थान पर पहुंचाना जैसे कार्य उचित विधि से सम्पन्न करने की आवश्यकता है। इसलिए यह मात्र एक क्रिया ही नहीं अपितु एक कला भी है। पौध तैयार करने के लिए निम्नलिखित मूलभूत आवश्यकताएं होती हैं:

उचित भूमि या स्थल : पौधशाला और फल उत्पादन के लिए भूमिका बहुत महत्व है। भूमि की जांच पहले किया जाना बहुत जरूरी है। स्थल का चुनाव करते समय जलवायु, वर्षा, ताप और सूर्य के प्रकाश का ध्यान रखना पड़ता है। इसके अतिरिक्त स्थल का वनों से दूर होना आवश्यक है। वन पास होने पर वन्य प्राणियों का विचरण पौधशाला में रहता है। जल निकास पर भी विशेष ध्यान देने की आवश्यकता है, क्योंकि अधिक मात्रा में पौधे को दिया गया जल पौधे के लिए लाभदायक न होकर हानिकारक होता है। जड़ों के आसपास की मिट्टी में वायु का स्वातंन नहीं हो पाता है। कुछ भूमिगत क्रियाएं नहीं हो पाती हैं अत: जड़ें गल जाती हैं। मुख्य तना कालर रॉट से प्रभावित हो जाता है। मृदा अम्लीय हो जाती है। इससे पौधों की वृद्धि प्रतिबंधित हो जाती है। अधिक वर्षा होने पर आर्द्रता अधिक होती है, जिससे तापक्रम कम होता है। ऐसे वातावरण में फफूंद बहुत सरलता से सम्वर्धित होती है तथा कम वर्षा या वर्षा के आस-पास के अभाव में पौधे सूख जाते हैं। साधारणत: 25 डिग्री सेल्सियस तापमान के आस-पास बीज का अंकुरण शीघ्र और स्वस्थ होता है। इसके अलावा और कुछ विषय पर ध्यान देना चाहिए जैसे कि सिंचाई के लिए पानी की उपलब्धता, दोमट मिट्टी वाले स्थान का चयन, चट्टानी क्षेत्र न हो, फलीदार फसलों के साथ रोटेशन, सड़क के साथ जुड़े होना इत्यादि।

पौधों के प्रवर्धन के लिए बीज या अन्य स्त्रोत : शीतोष्ण फलों का पौधशाला प्रवर्धन दो तरीके से किया जाता है: अ) बीज़ विधि और ब) वानस्पतिक विधि। बीज ही पौधशाला का मुख्य आधार होता है। जैसा बीज होगा, वैसा ही पौधा होगा। अत: यह आवश्यक है कि बीज स्वस्थ, निरोग तथा उन्नत जाति के और प्रर्याप्त उपज देने वाले हों। वनस्पति शास्त्र के अनुसार फल के कई प्रकार हैं। शीतोष्ण फलों में भी कुछ फलों में एक से अधिक बीज होते हैं जैसे सेब और नाशपाती। कुछ शीतोष्ण फल जैसे आड़ू, बादाम, खुबानी, चेरी, नेक्टेरिन, प्रून और प्लम हैं, जिनमें एक फल में एक ही बीज होता है। उदाहरण के तौर पर गोल्डन डिलिशियश, क्रेब सेब (*मेलस बकाटा* शिलोंग) सेब के मूलवृंत के लिए, नाशपाती के मूलवृंत के लिए जंगली नाशपाती (कैंथ, जिरैंथ आदि), गुठलीदार फल के लिए प्रूनस प्रजाति, कीवी के मूलवृंत के लिए जंगली कीवी तथा अखरोट के मूलवृंत के लिए काठू अखरोट बहुत उपयोगी सिद्ध होते हैं। बीज एकत्रित करने के लिए स्वच्छ पानी में भिगों दें जिससे तीन चार दिन बाद गूदा पृथक हो जाता है। पानी हर रोज बदल दें ताकि वहां पर फफूंद आदि के फैलने का भय न रहे। गूदे को हाथ से मल दें और विशेष ध्यान रखें कि बीज गूदा रहित होना चाहिए। शीतोष्ण फल बीजों को सुप्तावस्था से बाहर निकालने से लिए विशेष प्रकार से उपचारित किया जाता है। इस क्रिया को स्तरीकरण कहते हैं। यह दो प्रकार से संभव है:-

(क) प्रयोगशाला में :

सुप्तावस्था से बाहर निकालने के लिए बीज को रेत के साथ पॉलीथीन की थैलियों में थोड़ा पानी ड़ालकर बंदकर दिया जाता है और इन्हें रेफ्रिजरेटर 4 डिग्री सेल्सियस तापमान में रखा जाता है। बीज पूर्णतः रेत से ढके होने चाहिए तथा रेत साफ और बारीक तथा फफूंद रहित होनी चाहिए। बीज और रेत को मिलाकर थैली का 2/3 भाग भरें। बीज और रेत का मिश्रण बनाते समय इतना जल डालें की उसकी बूंदे बाहर न दिखाई दें। थैली का मुंह बंद कर दें और रेफ्रिजरेटर में रखकर बंद दें। स्तरण अवधि बीज की जाति पर निर्भर करती है। सामान्यत: 60 दिन के लिए बीजों को ठंडी अवस्था में रखा जाता है। रेफ्रिजरेटर से निकालने के बाद थैली को सामान्य तापक्रम पर कुछ घंटे तक रखें और फिर खोल कर रेत और बीज को पृथक कर लें। बीज की बुआई तुरंत करें।

(ख) खेत में

शीतोष्ण फलों के बीजों को सुप्तावस्था से बाहर निकालने के लिए जिन स्थानों में ठंड और अच्छी मात्रा में बर्फ पड़ती है। वहां बीज सीधे पौधशाला में ही बोए जा

सकते हैं। किसी सुरक्षित स्थान पर पौधशाला में 30 सेंटीमीटर गहरी और इतनी ही चौड़ी खाई या नाली खोदें। मिट्टी बलुई दोमट या दोमट ही उचित है। साफ और धुली हुई रेत की 2 सेंटीमीटर मोटी तह लगाएं। इस तह के ऊपर 3 सेंटीमीटर मोटी रेत की तह लगाएं। इस प्रकार बीज की तह रेत की दोनों तहों के बीच रहती है। इस तह पर थोड़ा-सा जल छिड़काव करें। सबसे ऊपर रेत वाली तह पर मिट्टी की तह लगाएं। इस प्रकार यह नाली भरी जाती है और नाली की लंबाई बीज की मात्रा पर निर्भर करती है। खेत में बीजों को चूहों तथा कीड़ों से बचाना आवश्यक है। बीजों को शीत ऋतु के आरंभ में ही इन नालियों में रख दिया जाता है। बाद में वर्षा या बर्फ पड़ती है, जिससे बीजों को पर्याप्त मात्रा में नमी उपलब्ध हो जाती है। शीत ऋतु की समाप्ति पर अथवा बर्फ पिघलने पर बीजों को रेतसहित बाहर निकाल दिया जाता है और इन्हें बुआई के लिए प्रयोग में लाया जाता है। पौध रोपण के बाद प्राय: सिंचाई की जाती है। पोषक तत्वों की मांग की पूर्ति से पहले भूमि का रासायनिक विशलेषण करवाना आवश्यक है। फिर विशलेषण के अधार पर पोषक तत्वों जैसे गोबर की खाद, कंपोस्ट, हरी खाद, हड्डी की खाद तथा जैविक खादों की मात्रा का निर्धारण करें। इस पोषक तत्वों का प्रयोग बिखेरकर, स्टारटर सोल्यूशन सिस्टम, नाली बनाकर घेरें में, घोल सिंचाई द्वारा तथा मिट्टी में मिलाकर किया जा सकता है।

खरपतवार नियंत्रण: पौधशाला में खरपतवार एक गंभीर समस्या है। अत: उन पर नियंत्रण हर स्तर पर होना जरूरी है। थोड़ी-सी असावधानी से खरपतवारों के पौधे मुख्य पौधों के साथ ही उग जाते हैं। अनावश्यक पौधों को उखाड़ने की प्रक्रिया को रोगिंग कहा जाता है। रोगिंग यथासंभव शीघ्र ही करनी चाहिए, क्योंकि ये मुख्य पौधों को वातावरण, सिंचाई, स्थान, पोषक तत्व तथा अन्य आवश्यकताओं को कम कर देते हैं। यह कार्य प्राय: हाथ द्वारा ही किया जाता है।

निराई, गुड़ाई एवं सिंचाई: पौधे को पानी, तापमान और वायु का संतुलन चाहिए। किसी एक का कम या ज्यादा होने से पौध उत्पादन के ऊपर प्रतिकूल पड़ता है। खरपतवारों को खेत से पृथक करने की क्रिया को निराई कहते हैं। यह रोगिंग से मिलती जुलती क्रिया है। इससे खरपतवारों को जड़ सहित उखाड़ना चाहिए। खरपतवारों के पौधों को उन पर फूल आने से पूर्व ही उखाड़ देना चाहिए। अन्यथा उनके बीज भूमि में गिरकर अगली ऋतु में अंकुरित हो सकते हैं। उखाड़े गए पौधों को खाद बनाने के लिए एक गढ्ढें में दबा दें। इससे जैविक खाद तैयार हो जाएगी। इस क्रिया का उद्देश्य भूमि के रंध्रकूपों में वायु सवांतन बढ़ाना है। सिंचाई के बाद तथा कणों के बैठ जाने के कारण रंध्रकूपों में वायु की मात्रा कम हो जाती है। गुड़ाई करने के लिए खुरपा, खिलना, फावड़े आदि का प्रयोग किया जा सकता है। गुड़ाई, निराई और रोगिंग एक साथ किए जा सकते हैं। इससे श्रम, समय और धन की बचत हो सकती है। पौधशाला उत्पादन के लिए उचित सिंचाई व्यवस्था अति आवश्यक है।

क्यारियां बनाना : क्यारियां बनाकर पौधशाला उगाना पहाड़ी क्षेत्रों में बहुत जरूरी है। पौधों की जड़ में सूर्य की रोशनी नहीं पहुंचना चाहिए। इसलिए पौधों की जड़ों के पास प्रचुर मात्रा में मिट्टी का होना वांछनीय है। छोटी क्यारियों में खुरपे या खिलने से मिट्टी चढ़ा दें। मिट्टी सावधानी से चढ़ाएं। रेतीली भूमि में ऐसा करना कठिन होता है, क्योंकि रेत के कण स्वयं ही बैठ जाते हैं। वहां रेत के कणों के साथ दोमट मिट्टी और गोबर की खाद मिलाएं।

ओलावृष्टि से बचाव : पहाड़ी क्षेत्रों में ओलावृष्टि एक बहुत बड़ी समस्या है। छोटे पौधों को ओलावृष्टि से बचाव के लिए पूर्ण प्रयत्न करने चाहिए। प्रारंभिक अवस्था में ये मृदावरण (मृदा + गोबर की खाद) से ढकें होने के कारण ओले के प्रभाव से बच जाते हैं और इसके बाद उन पर नाइलोन की ओलारोधक जालियां लगाई जाती हैं। यह जालियां ऊंचाई पर लगानी चाहिए ताकि इनके नीचे बैठकर श्रमिक कार्य कर सकें। जाली के सुराख ओले के माप से छोटे होने चाहिए। जाली लगाने का प्रमुख प्रयोजन ओले के नीचे पहुंचने की शक्ति को कम करना है, जिससे

उसकी गतिमंद हो जाती है और इस प्रकार ओले का प्रतिकूल प्रभाव नहीं पड़ता है।

पाले से बचाव : उत्तरी भारत में पाले से निपटना एक बहुत बड़ा काम है। पाला पौधों के विकास के लिए हानिकरक होता है। इसकी रोकथाम न होने पर कभी-कभी बड़े पौधे भी मर जाते हैं। पौधे के अंदर का रस ठंड के कारण जम जाता है। जमे पदार्थ के पौधों की छाल व पत्तियां फट जाती हैं और रस बाहर निकलना शुरू हो जाता है। इसलिए पौधों को पाले से बचाना आवश्यक है। पाला पड़ने के संभवित समय से पूर्व क्यारी में हल्की-सी सिंचाई कर देनी चाहिए। इससे जड़ों के पास का वातावरण अधिक प्रभावित नहीं होता है। और लघु स्तर पर घास या अन्य पदार्थ जलाकर वातावरण का तापमान भी थोड़ा अधिक रखा जा सकता है।

पुष्प की सुगंध वायु के विपरीत कभी नहीं जाती लेकिन मानव के सदगुण की महक सब ओर फैल जाती है।

- गौतम बुद्ध

विविधा....

कृषि भौतिकी संभाग - एक परिचय

अनन्ता वशिष्ठ एवं पी. कृष्णन

कृषि भौतिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली में सन् 1948 को 'कृषि में भौतिकी' के नाम से एक लघु इकाई के रूप में कृषि भौतिकी संभाग की नींव पड़ी। तत्पश्चात् सन् 1962 में चार उप-विषयों: मृदा भौतिकी, पादप जैव भौतिकी, पर्यावरण भौतिकी तथा कृषि-मौसम विज्ञान के साथ इस संभाग की स्थापना हुई और आज भी ये विषय इस संभाग के प्रमुख स्तंभ बने हुए हैं। वर्ष 1969-70 के दौरान भारत में पहली बार केरल के नारियल रोपण क्षेत्र में जड़-मुरझान बीमारी को ढूंढने हेतु सुदूर संवेदन इन्फ्रारेड संवेदी फिल्मों का उपयोग किया गया तथा इस पर पहली बार नियमित स्नातकोत्तर पाठयक्रम की शुरुआत की गई। शीत/ग्रीष्मकालीन स्कूल और सुदूर संवेदन में विशिष्ट प्रशिक्षण कार्यक्रम और कृषि संसाधन प्रबंध में इनका उपयोग संभाग की प्रमुख गतिविधियां रही हैं।

यह कहना कोई अतिश्योक्ति नहीं होगा कि संभाग द्वारा देश में पहली बार सुदूर संवेदन युक्तियों का कृषि के लिए उपयोग प्रारंभ किया गया। तीन दशकों तक इस संभाग ने "मृदा संरचना के मापन, मूल्यांकन तथा सुधार" पर भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद की अखिल भारतीय समन्वित परियोजना का नेतृत्व प्रदान किया। इसके साथ ही संभाग में बारानी खेती वाले क्षेत्रों के लिए विशिष्ट कृषि क्रियाओं तथा कृषि-मौसम विज्ञान के क्षेत्र में बहुत सी सरल युक्तियों/तकनीकियों का विकास भी हुआ। वर्ष 1994 से यह संभाग साप्ताहिक मध्यम श्रेणी मौसम आधारित कृषि परामर्श बुलेटिन के माध्यम से राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र, दिल्ली एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसान समुदाय के बीच प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के कार्य में भी सक्रिय है। अपनी स्थापना के समय से ही संभाग की बहुत-सी अंतरसंभागीय, अंतरसंस्थान तथा अंतरराष्ट्रीय अनुसंधान परियोजनाओं में भागीदारी रही है।

संभाग का मिशन

संभाग में कृषि-मौसम विज्ञान, पादप जैव भौतिकी, मृदा भौतिकी तथा सुदूर संवेदन एवं वैश्विक सूचना प्रणाली में नीतिगत अनुसंधान, स्नातकोत्तर शिक्षा, प्रशिक्षण प्रदान करते हुए एवं किसानों को प्रौद्योगिकी हस्तांतरण के माध्यम से कृषि संसाधनों के पर्यावरणीय अनुकूल और टिकाऊ दोहन के लिए मृदा-पादप-वातावरण परिवेश नीतियों का अध्ययन किया जाता है।

अनुसंधान के वर्तमान आयाम

- जुताई से प्रेरित मृदा के गुणों में परिवर्तन तथा इसका फसलों की बढ़वार एवं उपज के साथ संबंध।
- विभिन्न निवेशों द्वारा उगाई जाने वाली फसलों की बढ़वार एवं पैदावार के संबंध में फसल-मौसम पारस्परिकता का मात्रात्मक निर्धारण।
- फसलों के विभिन्न चरणों के संदर्भ में कीट तथा मौसम में संबंध और इसका भविष्य में अनुमान लगाने वाले मॉडल का विकास।

- सुदूर संवेदन, वैश्विक सूचना प्रणाली, सिमुलेशन मॉडल और रिलेशनल डेटाबेस परतों का उपयोग करके गंगा के मैदानी क्षेत्रों में फसलों की उत्पादकता का चित्रण।
- मध्यम मौसम पूर्वानुमान के उपयोग द्वारा कृषि संबंधी कार्यों हेतु दिल्ली एवं पश्चिमी उत्तर प्रदेश के किसानों को वास्तविक समय के आधार पर कृषि.परामर्श सेवाएं प्रदान करना।
- मिट्टी और फसल प्रक्रियाओं को समझने और कृषि उत्पादन के अनुमानों के लिए गतिशील सिमुलेशन मॉडल का विकास।
- सुदूर संवेदी, वैश्विक सूचना प्रणाली तथा अनुरूपण मॉडलों के उपयोग द्वारा फसल बढ़वार की निगरानी और पूर्व चेतावनी प्रणाली की रूप-रेखा बनाना।
- संसाधन प्रबंध एवं टिकाऊ कृषि उत्पादकता के लिए क्षेत्रीय ऊर्जा एवं जल संतुलन संबंधी आकलन।

संभाग की प्रमुख अनुसंधान उपलब्धियां

संभाग का मुख्य उद्देश्य मृदा, पौधों व वातावरण के उन भौतिक पहलुओं का अध्ययन करना व उन्हें समझना है, जो कृषि उत्पादकता बढ़ाने के लिए प्रासंगिक हैं। संभाग के अनुसंधान कार्यक्रमों को मृदा भौतिकी, कृषि मौसम विज्ञान, कृषि में सुदूर संवेदन व वैश्विक सूचना प्रणाली का अनुप्रयोग तथा पादप जैव भौतिकी जैसे क्षेत्रों में बांटा गया है। इनकी प्रमुख उपलब्धियां इस प्रकार हैं:

मृदा के भौतिक वातावरण के प्रबंधन तथा संरक्षण कृषि के द्वारा मृदा के भौतिक वातावरण में सुधार के लिए प्रौद्योगिकियां

- उप-सतहों पर कठोर संरचना वाली मिट्टियों की बाधा कम करने के लिए चीजलिंग प्रौद्योगिकी का विकास किया गया है। चीजलिंग से जड़ों की वृद्धि को बढ़ावा मिलता है, बारिश एवं सिंचित जल का अंतःस्पंदन बढ़ता है। जिसके परिणामस्वरूप मिट्टी की सतहों में जल भंडारण की वृद्धि होती है। इससे जल ठहराव वाली मिट्टियों के जड़-क्षेत्र में वायु के मिश्रण में सुधार होता है।

मक्का की फसल उत्पादकता पर चीजलिंग के प्रयोग से सुधार

- गेहूं एवं मक्का की फसल उत्पादकता पर चीजलिंग के प्रयोग से सुधार हुआ तथा गेहूं और मक्का उत्पादन क्रमशः 23 एवं 41 प्रतिशत बढ़ा।
- मक्का-गेहूं प्रणाली में संरक्षण कृषि तकनीकी में गेहूं की फसल में "पारंपरिक टिलेज" व "जीरो टिलेज" के प्रयोग से, अनाज उपज और बायोमास उपज में कोई महत्वपूर्ण अंतर नहीं देखा गया। मृदा एकत्रीकरण में, पारंपरिक टिलेज के मुकाबले फसल अवशेषों के साथ जीरो टिलेज में, काफी सुधार हुआ।
- पलवारों के उपयोग से मिट्टी में पानी भंडारण क्षमता अधिक बढती है। खरीफ मौसम के दौरान गेहूं के अवशेषों की पलवार (मलचिंग) मिट्टी में पानी भंडारण क्षमता को बिना पलवार से अधिक बढ़ाता है। फसल अवशेषों की पलवार से मृदा के भौतिक गुणों, जैसे की न्यूनतम सीमित पानी रेंज (एल.एल.डब्लू.आर) और सकल मृदा स्थायित्व में बिना पलवार की तुलना मे सुधार होता है।
- संरक्षण कृषि के अंतर्गत कपास की फसल में जड़ों द्वारा पानी को लेने को हाइड्रस-2 डी मॉडल द्वारा सिम्युलेट करके अवशेषों के प्रतिधारण के

साथ कपास के क्यारी रोपण का कार्य गंगा के मैदानी क्षेत्रों में अपनाने का सुझाव दिया गया।

- लपोरिया गाँव, राजस्थान में भूमि और जल संसाधनों के बारे में किसान के ज्ञान के साथ भू-सूचना तकनीक को एकीकृत किया गया। गाँव के स्थानिक ज्ञान का उपयोग करके भागीदारी वैश्विक सूचना प्रणाली मानचित्रण के माध्यम से एक संसाधन मानचित्र तैयार किया गया।
- समग्र पैमाने पर, कार्बनिक पदार्थ का प्रभाव समग्र शक्ति और स्थिरता पर पाया गया और ऐसा कोई प्रभाव थोक मिट्टी, मैक्रो-और मैक्रोस्कोप मिट्टी भौतिक व्यवहार संकेत अंतर में दर्ज नहीं किया गया।
- संरक्षण कृषि पद्धतियां उपनिवेश संघनन को कम करती हैं। कॉन पैनिट्रोमीटर रीडिंग से सत्यापित होता है कि संरक्षण कृषि अभ्यास के तहत चावल-गेहूं प्रणाली में उपमृदा संघनन में कमी आती है।

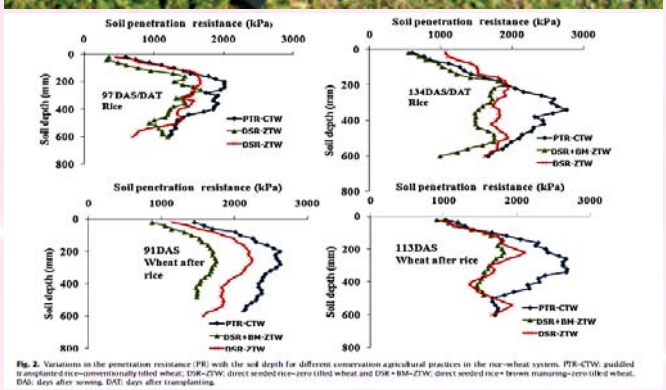

कॉन पैनिट्रोमीटर से संरक्षण कृषि अभ्यास में उपमृदा संघनन की जांच

- संरक्षण कृषि तकनीकियों से जड़ विकास में सुधार होता है। कृषि तकनीकियों के संरक्षण के तहत, जड़ की गहराई पारंपरिक जुताई तकनीकियों की तुलना में अधिक थी। शून्य जुताई के साथ फसल अवशेषों की अवधारण ने, अवशेषों को हटाने की तुलना में, जड़ लंबाई घनत्व में काफी सुधार किया।

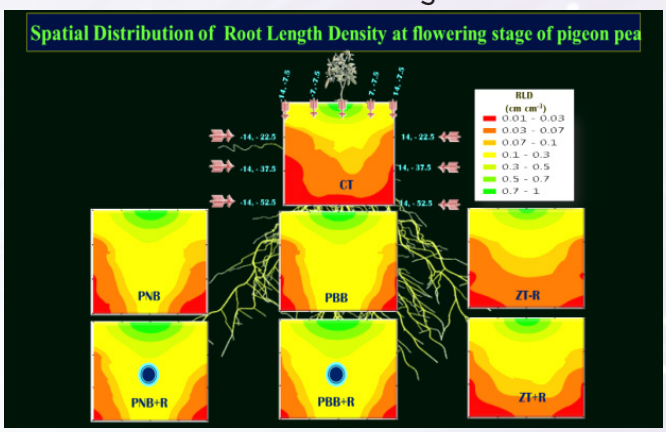

संरक्षण कृषि तकनीकियों से जड़ विकास में सुधार

- धान की भूसी का 8 टन/हेक्टेयर की दर पर अनुप्रयोग करने से मृदा समुच्चय और इसके कार्बन भंडारण में सुधार हुआ, मृदा तापमान अनुकूल रहा तथा साथ ही उन्नत जड़ बढ़वार से मक्का तथा गेहूं की अनुकूलतम पैदावार प्राप्त हुई।
- मौसम, फसल एवं मृदा प्राचलों (पैरामीटरों) का उपयोग करते हुए विकिरण संतुलन संघटकों, फसल की वास्तविक एवं सक्षम वाष्पन-वाष्पोत्सर्जन क्षमता की गणना करने के लिए 'एक परत वाले मृदा जल संतुलन मॉडल' का विकास किया गया।

कृषि मौसम विज्ञान अनुसंधान एवं प्रौद्योगिकियां

- 'तापीय प्रतिक्रिया चक्र' का विकास, जिनके द्वारा पत्तीन क्षेत्रफल सूचकांक एवं बायोमास उत्पादन का डिग्री दिवसों के साथ संबंध जानकर जैविक एवं किफायती पैदावार का पूर्वानुमान किया गया।
- बढ़े हुए डिग्री दिवसों (मृदा तापमान पर आधारित) से गेहूं के घटना विज्ञान के अनुमान में कोई उल्लेखनीय सुधार नहीं हुआ। हालांकि मृदा

तापमान, गेहूं की बढ़वार स्थितियों का अनुमान लगाने में सहायक है ।

- आम में 'चूर्णिल आसिता' प्रगति का अनुमान लगाने के लिए एक मॉडल का विकास और जड़ क्षेत्र में मृदा नमी का अनुमान लगाने के लिए मौसम आधारित दो मॉडलों नामत: 'कैम्प्वेल-डियाज' और 'एस.पी.ए.डब्ल्यू.' के प्रदर्शन का मूल्यांकन किया गया।
- सरसों में कीटों और बीमारियों के लिए भू-कीट निर्णय समर्थन प्रणाली का विकास किया गया। यह गतिशील कीट और रोग निर्णय समर्थन प्रणाली है। इसमें प्रचालित मौसम की स्थिति के साथ चेतावनी और प्रबंधन के विकल्प बदलते हैं। इसमें एकीकृत कीट प्रबंधन सिद्धांतों के अनुसार कीट प्रबंधन होता है- जहरीले रसायनों का कम उपयोग। इसमें समय की बचत होती है, क्योंकि इसमें लगभग सब कुछ स्वचालित है।

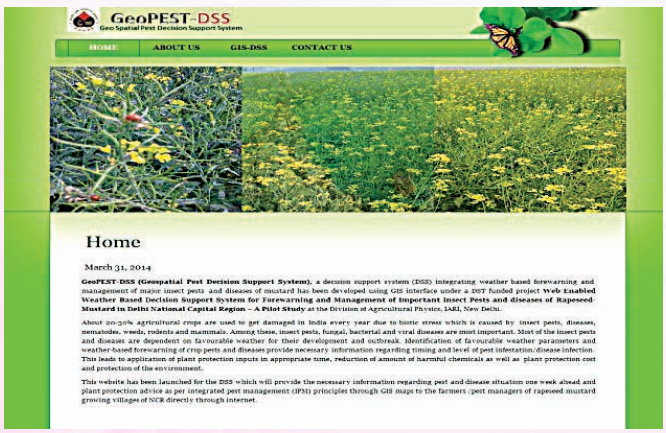

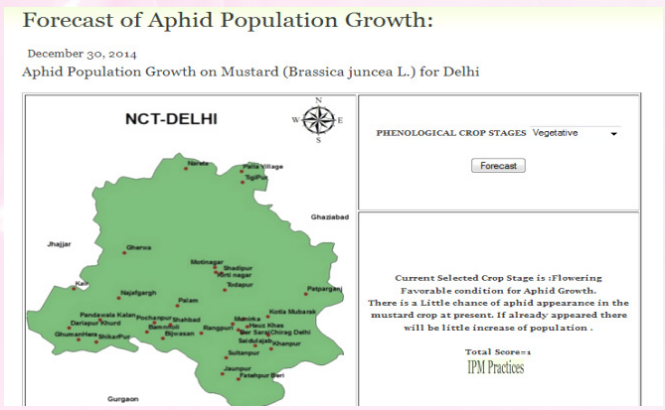

सरसों में कीटों और बीमारियों के लिए भू-कीट निर्णय समर्थन प्रणाली

- गेहूं की वृद्धि और उपज पर कम सौर विकिरण का प्रभाव होता है। अवशोषित प्रकाश संश्लेषक, कम सौर विकिरण उपचार की तुलना में 30% अधिक पाया गया। विकिरण स्तर में कमी के साथ बायोमास संचय के संबंध में विकिरण उपयोग दक्षता में काफी वृद्धि हुई। लेकिन उपज के संबंध में विकिरण उपयोग दक्षता, जाली के अंदर (कम सौर विकिरण में), काफी कम पायी गई।

गेहूं की वृद्धि और उपज पर कम सौर विकिरण का प्रभाव

- शाखाओं की छंटाई (डि-ब्रांचिंग) तकनीकी से सरसों की फसल में कीटों और बीमारियों में कमी तथा उपज में बढ़ोतरी होती है। सरसों की निचली शाखाओं की बुआई के 40-45 दिन के बाद छंटाई करने से धूप जमीन की सतह तक पहुंच जाती है। जिससे फसल में उचित तापमान बना रहता है। हवा का बहाव आसानी से होता है साथ ही फसल में उचित आर्द्रता बनी रहती है। इससे सरसों में सफेद रतुआ बीमारी आने की संभावना कम हो जाती है। डि-ब्रांचिंग करने से मृदा के तापमान, विकिरण उपयोग क्षमता, जल उपयोग क्षमता, पत्ती क्षेत्रफल सूचकांक, बायोमास, बीज में तेल की मात्रा तथा पैदावार में बढ़ोतरी होती है।

शाखाओं की बिना छंटाई की हुई सरसों की फसल

- विभिन्न मौसमीय परिस्थितियों में फसल वाष्पोत्सर्जन का आकलन किया गया। फसल में पानी की आवश्यकता का सही आकलन एकल फसल एंकाक दृष्टिकोण की तुलना में दोहरी फसल गुणांक दृष्टिकोण से करना ज्यादा उपयुक्त होता है।
- बदलती जलवायु के तहत फसल सुरक्षा के लिए रंगीन छायादार जाल, फसल के संरक्षण के लिए एक नया, बहुवैकल्पिक तथा अधिक फायदा प्रदान करने वाली तकनीकी है। यह प्रकाश की तीव्रता तथा विकिरण को बदलकर सूक्ष्म वातावरण को प्रभावित करता है, जिससे उपज पर असर पड़ता है। प्रयोग किये गये सभी रंगीन छायादार जालों में से सबसे अधिक फायदे हरे उसके बाद लाल, काले व सफेद में पाये गये।

पिछले सप्ताह तथा अगले पाँच दिनों के मौसम को ध्यान में रखते हुए फसल की अवस्था तथा मौसम के अनुसार फसल को होने वाले नुकसान को ध्यान में रखते हुए संस्थान के विभिन्न विशेषज्ञों की सलाह लेकर हर मंगलवार तथा शुक्रवार को मौसम आधारित बुलेटिन बनाते हैं। इस बुलेटिन में अगले पाँच दिनों के मौसम का पुर्वानुमान, पिछले सप्ताह के मौसम तथा इसके सामान्य से अंतर की जानकारी, उगाई गई फसलों के नाम तथा चरण, फसलों में मौसम आधारित प्रबंधन, फसलों में विभिन्न प्रकार के कृषि कार्य, बुआई, बीज की मात्रा व समय, निराई-गुड़ाई, कीटों व बीमारियों का प्रबंधन, फसल की कटाई का उपयुक्त समय, भंडारण में उत्पादन का रख-रखाव, सब्जियों, फलों व फूलों को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने का उचित समय इत्यादि होता है। किसानों को यह सब जानकारियां हर मंगलवार व शुक्रवार को एस.एम.एस., ई-मेल व टेलीफोन के माध्यम से दी जाती है। साथ ही इसे संस्थान के वेब पेज (www.iari.res.in) भारत मौसम विभाग के वेब पेज (www.imdagrimet.gov.in) तथा किसान पोर्टल (farmer.gov.in) पर भी दर्शाया जाता है। साथ ही हिंदी अखबारों के माध्यम से भी प्रकाशित किया जाता है। मौसम आधारित कृषि बुलेटिन को कृषि विज्ञान केंद्र, शिकोहपुर, उजवा, इफको कृषि तकनीकी केंद्र, गैर सरकारी संगठन, आत्मा, ई-चौपाल, कृषि दर्शन, ऑल इंडिया रेडियो, डी डी किसान आदि को ई-मेल के माध्यम से दिया जाता है।

किसानों को विभिन्न माध्यमों द्वारा मौसम आधारित कृषि सलाह की जानकारी

बदलती जलवायु के तहत फसल सुरक्षा के लिए रंगीन छायादार जाल एक नई, बहुवैकल्पिक तकनीकी

फसल प्रबंधन के लिए जैव भौतिकी प्रौद्योगिकियां :

- फसल की स्थिति सूचकांक सी.एस.आई. (फसल की स्थिति सूचकांक) को बीस जैव भौतिकी, शारीरिक, जैव रासायनिक तनाव सूचक का उपयोग करके अजैविक तनाव की स्थिति को चिह्नित करने के लिए गैर रेखीय चिह्नित तकनीकी और भारित विधि का उपयोग करके विकसित किया गया।
- सूखे और गीले संदर्भों का उपयोग करके थर्मल छवि विश्लेषण के मूल पर प्राप्त फसल तनाव सूचकांक अच्छी तरह से नमी और तापमान तनाव के तहत उगाई जाने वाली फसलों के रंध्र चालकता तथा चंदवा तापमान अंतर के साथ अच्छी तरह से संबंधित हैं।
- मक्का के पत्तों में परीक्षण किए गए 36 विभिन्न क्लोरोफिल प्रतिदीप्ति मापदंडों में से, नाइट्रोजन तनाव को चिह्नित करने के लिए Fv / Fm और Flo / RC सबसे अच्छे पैरामीटर के रूप में देखे गए।

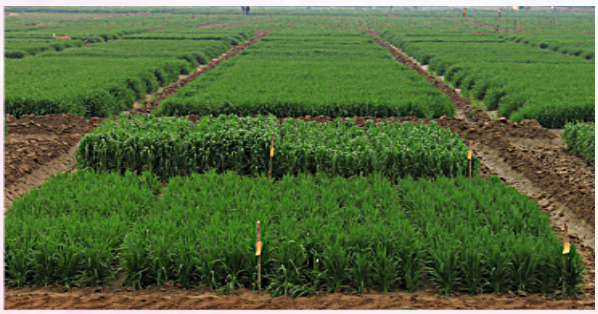

गेहूं में सूखा सहनशीलता के लिए नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद आधारित जांच

- गेहूं में सूखा सहनशीलता के लिए नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद आधारित जांच। सूखे के प्रति सहनशील गेहूं की प्रजातियों की जांच की चुनौती नाभिकीय चुंबकीय अनुनाद (एन एम आर) स्पेक्ट्रोमेट्री द्वारा पूरी की जा सकती है। पौधे में 8वीं पत्ती अवस्था में अनुदैर्ध्य विश्रामकाल (एन एम आर-टी-1) सूखा सहनशीलता को चिह्नित करने में श्रेष्ठ पाया गया। पत्ती में पानी की स्थिति के अन्य मापदंडों जैसे आर.डब्यूनित .सी, पत्ती-पानी की क्षमता, परसरणी क्षमता और नमी की मात्रा के साथ विश्राम काल (टी-1) के महत्वपूर्ण सहसंबंध देखे गए हैं। एन.एम.आर. -अनुदैर्ध्य विश्रामकाल मापन को चिह्नित करके गेहूं की अज्ञात प्रजातियों में सूखा सहनशीलता के साथ गेहूं की प्रजातियों को सहनशील या अतिसंवेदनशील के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है।
- जल शोषण आइसोथर्म के विश्लेषण से बीजों का चुम्बकीय उपचार करने पर, अनुपचारित बीजों की तुलना में, 'वीक बाईंडिंग साईटस' में बढ़ोतरी पायी गयी।
- गेहूं एवं धान के बीजों में शुष्क सहिष्णुता की जांच के लिए शैथिल्य (हिस्टेरिसिस) विधि का प्रयोग किया गया।
- कपास के एक्स-रे अपवर्तन से हर्मेन क्रिस्टेलाइन ओरिएंटेशन घटक की पहचान की गयी जो कपास के रेशे की शक्ति के गुणनिर्धारण का सर्वश्रेष्ठ सूचकांक है और उच्च प्रौद्योगिकीयुक्त कपास के लिए प्रजनन कार्यक्रम में उपयोग किया जा सकता है ।
- इलैक्ट्रॉन माइक्रोस्कोपी की सहायता से बड़ी संख्या में पौधों एवं कीटों के विषाणुओं तथा अन्य सूक्ष्मक-जगत का पृथक्कीकरण, पहचान व उनका गुण निर्धारण किया गया।

कृषि में सुदूर संवेदन एवं भौगोलिक संसूचना तंत्र का प्रयोग

- 2000-01 के बीच पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश के जिलों में धान और गेहूं के क्षेत्र में

परिवर्तन से पता चला है कि उत्तर प्रदेश और पंजाब में धान के क्षेत्र में 7.6 और 3.6% की कमी आई है, जबकि हरियाणा में धान का क्षेत्रफल 14.1% बढ़ा है।

- गेहूं, सोयाबीन, मक्का व सरसों जैसी फसलों और मिट्टी की एनोट्रॉपिसिटी का अध्ययन बी.आर. डी.एफ. द्वारा स्वदेसी रूप से विकसित गोनियोमीटर के माध्यम से सेंसर और प्रकाश के संसाधन की सर्वश्रेष्ठ सापेक्ष स्थिति की पहचान करने के लिए किया गया ।
- यू.ए.वी. आधारित सेंसर तकनीक, एक व्यवहार्य विकल्प है जो दूरस्थ संवेदी प्लेटफार्मों पर ऑन-सीजन फ़ार्म में फसल की वृद्धि की स्थिति की निगरानी के लिए स्थानिक-सामयिक पैमाने या स्थान विशिष्ट प्रबंधन विकल्पों में लाया जा सकता हैं।
- पूरे भारत में फसल स्थिति की निगरानी के लिए भा.कृ.अनु.संस्थान के उपग्रह ग्राउंड स्टेशन पर प्राप्त छवियों का उपयोग करके, एक डिसिजन सर्पोट सिस्ट्म लागू किया गया जिससे पूरे भारत में लगभग वास्तविक समय में फसल ग्रोथ की निगरानी की जा सकती है। वर्तमान और ऐतिहासिक उपग्रह चित्रों का उपयोग करके, फसल स्वास्थ्य संकेतकों जैसे हरियाली, फसल तापमान तनाव और फसल नमी तनाव आदि की हर एक पखवाड़े के अंतराल पर गणना की जाती है । ये सूचकांक 1 से 5 किमी ग्रिड आकार के ग्रैनुलर स्केल पर बुआई में कमी, देरी से बुआई और फसल विकास में कमी के बारे में जानकारी देते हैं। केंद्र और राज्य में नीति निर्माताओं तथा अन्य हितधारकों के प्रयोग के लिए सभी चित्र जीयोपोर्टल (http://creams.iari.res.in:8080/geoexplorer/composer/) पर उपलब्ध हैं। यह किसानों के लिए कृषि सलाह सेवाओं को बेहतर बनाने में भी मदद करता है।
- सूखा निगरानी के लिए सुदूर संवेदन आधारित समग्र सूखा सूचकांक का उपयोग सूखे की गंभीरता को मापने के लिए किया जाता है जिससे सूखे की शुरूआत प्रगति व समाप्ति की वास्तविक पहचान की जाती है।

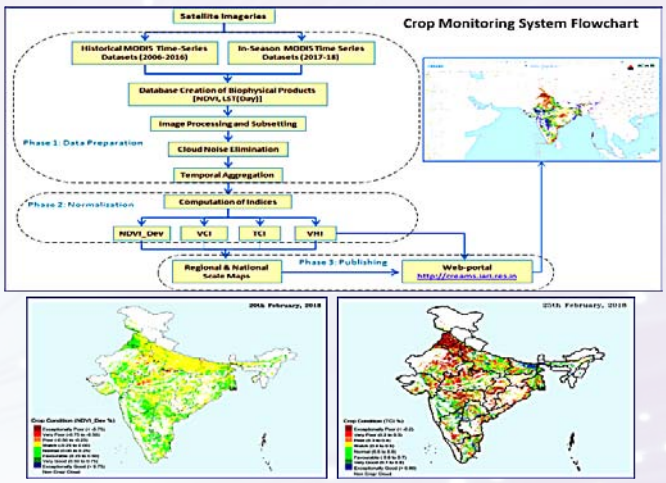

पूरे भारत में फसल स्थिति की निगरानी

- धान अवशेषों को जलाने की निगरानी तथा सक्रिय अग्नि का पता लगाने के लिए उपग्रहों का उपयोग किया जाता है। 1 अक्टूबर से 30 नवंबर के बीच पंजाब, हरियाणा और उत्तर प्रदेश राज्यों में उपग्रहों से थर्मल इमेज का उपयोग करके धान के अवशेषों को जलाने की निगरानी की गई। उच्च रिज़ॉल्यूशन के उपग्रह चित्रों का उपयोग करके, पंजाब और हरियाणा में लगाए गए चावल क्षेत्र और अवशेष जलाने के क्षेत्रों का मानचित्रण किया गया तथा बुलेटिन जारी किए गए, जो अवशेष जलाने की घटनाओं के स्थान को दर्शाते हैं और जिनका भारत सरकार द्वारा केंद्रीय क्षेत्र की योजना की प्रगति की निगरानी के लिए उपयोग किया गया।
- बेहतर फसल बीमा उत्पाद और फसल में नुकसान के आकलन के लिए उपग्रह चित्रों का उपयोग करके गेहूं फसल में फूल आने और दाने बनने के समय उच्च तापमान तनाव के जोखिम के लिए एक नया सूचकांक आधारित फसल बीमा उत्पाद विकसित किया।
- सुदूर संवेदन से फसल हरियाली और फसल तापमान पर आधारित वैजिटेटिव हैल्थ इंडेक्स (VHI) का प्रयोग करके गेहूं की पैदावार में

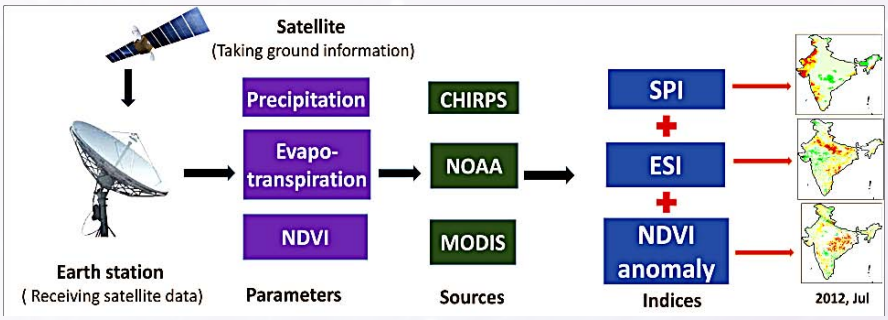

सूखा निगरानी के लिए सुदूर संवेदन आधारित समग्र सूखा सूचकांक का उपयोग

नुकसान के आकलन के लिए एक सूचकांक बनाया। मौसम आधारित सूचकांक बीमा की तुलना में सुदूर संवेदन आधारित फसल बीमा उत्पाद में फसल पैदावार के नुकसान व भुगतान के बीच बेहतर संबंध पाया गया और इसमें आधार जोखिम भी कम होता है।

- थर्मल इमेजिंग से गेहूं में नमी तनाव की खोज की गई । थर्मल छवि, नमी तनाव की स्थिति में उच्च कैनोपी तापमान दिखाता है।

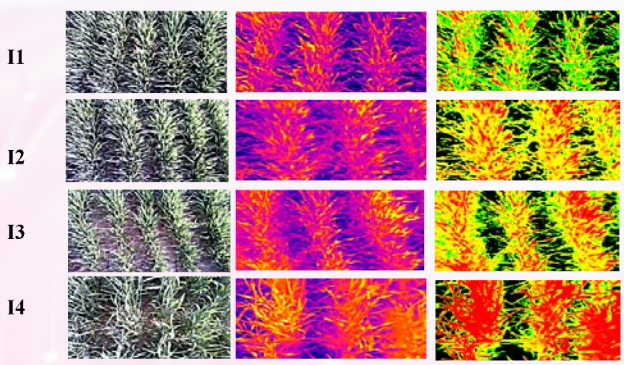

थर्मल इमेजिंग से गेहूं में नमी तनाव की खोज

- एयरबोर्न इमेजिंग स्पेक्ट्रोस्कोपी (एविरिस-एनजी, जेपीएल, यूएसए) की सहायता से क्षेत्रीय पैमाने समग्र जैव कार्बन का अनुमान लगाया गया।

- ड्रोन दूर संवेदी से गेहूं में सूखा और नाइट्रोजन तनाव की जांच की गयी। संस्थान के फार्म में मल्टीस्पैकट्रल संवेदक युक्त ड्रोन से सूखे और नाइट्रोजन तनाव के लिए गेहूं जीनोटाइप की विभेदक प्रतिक्रिया प्राप्त की गई।

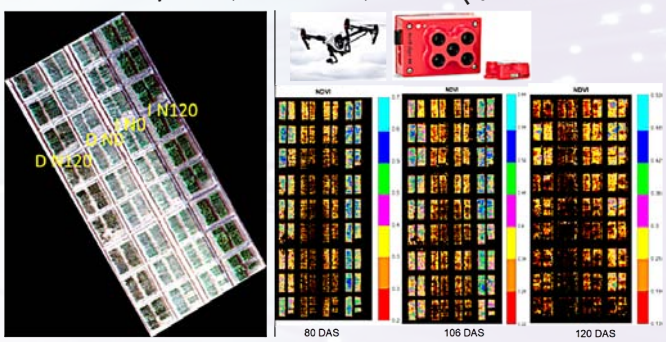

ड्रोन दूरसंवेदी से गेहूं में सूखा और नाइट्रोजन तनाव की जांच

- गेहूं पैदावार के पूर्वानुमान हेतु 'फसल अनुरूपण मॉडल' में पहली बार सुदूर संवेदी उत्पन्न फसल निवेश का उपयोग किया गया।
- वर्षा विसंगति की संभाव्यता, उपग्रह से फसल स्वास्थ्य की जांच, मृदा विशेषताओं और सिंचित क्षेत्र के आधार पर अगेती, मध्यम तथा पछेती कृषि सूखा मौसम के फसल क्षेत्र के मानचित्रण हेतु कार्यप्रणाली का नियोजन किया गया।

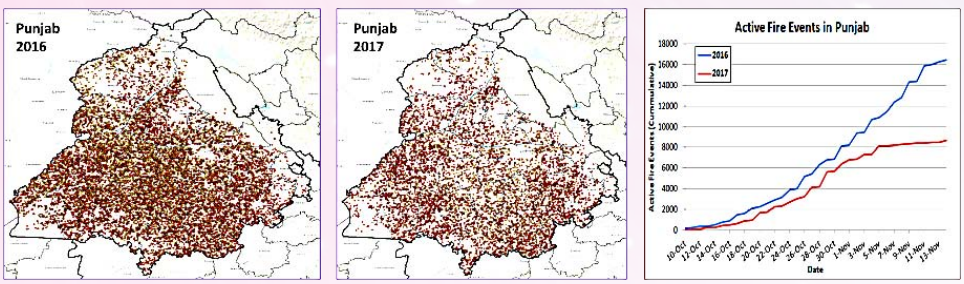

पंजाब में धान अवशेषों के दहन की निगरानी

- करनाल जिले के लिए 27 समजातीय कृषि भूमि इकाइयों एवं जैव-भौतिक पहलुओं को जी.आई. एस. परिवेश में रखकर स्थान विशिष्ट निवेशों की सिफारिश की गयी।
- सुदूर संवेदन एवं भौगोलिक संसूचना तंत्र का उपयोग करते हुए भूमि स्वरूप का चरित्रांकन एवं वर्गीकरण करने हेतु कार्यप्रणाली का विकास किया गया।

कृषि भौतिकी संभाग में उपलब्ध सुविधाएं

- क्लास ए-मौसम आधारित वेधशाला
- पादप जैव भौतिकी प्रयोगशाला
- मृदा भौतिकी प्रयोगशाला
- स्नातकोत्तर प्रयोगशाला
- भौतिकी प्रयोगशाला
- सूदर संवेदन एवं भौगोलिक संसूचना तंत्र प्रयोगशाला
- अतिवर्ण क्रम प्रयोगशाला
- दूरस्थ शिक्षा के लिए ईडीयूसेट सुविधा
- कंप्यूटर प्रयोगशाला
- पुस्तकालय
- सैटेलाइट डेटा रिसेप्शन केंद्र
- माइक्रो मेट टॉवर
- स्वचालित मौसम स्टेशन
- लार्च एपर्चर सिंटिलोमीटर
- स्वतंत्र वायु तापमान वृद्धि की सुविधा
- इंडियन सोसाइटी ऑफ एग्रोफिज़िक्स का मुख्यालय

क्लास ए- मौसम आधारित वैधशाला

मनुष्य क्रोध को प्रेम से, पाप को सदाचार से, लोभ को दान से और झूठ को सत्य से जीत सकता है।

- गौतम बुद्ध

किसानों की आमदनी में वृद्धि हेतु संसाधनों का सतत प्रबंधन

ओ.पी. सिंह[1] एवं रणबीर सिंह[2]

कृषि प्रसार संभाग[1] एवं फार्म संचालन सेवा इकाई[2]
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

जहां एक ओर मानव ने अंतरिक्ष में पहुंच कर मानव संस्कृति का गौरव बढ़ाया है, वहीं जलवायु परिवर्तन एक गंभीर विषय के रूप में विश्व को चुनौती प्रदान कर रहा है और विश्व स्तर पर जलवायु परिवर्तन के अतिरिक्त एक और विषय बहुत ही चिंतित करने वाला है, वह है जनसंख्या वृद्धि। भारत जनसंख्या के दृष्टिकोण से चीन के बाद दूसरे नंबर पर आता है। जहां इस बढ़ती हुई जनसंख्या को नियंत्रित करना तो एक बड़ी चुनौती है, साथ ही साथ वर्तमान जनसंख्या के भरण-पोषण हेतु खाद्य पदार्थ उपलब्ध कराना, उससे भी कठिन कार्य है। उक्त समस्या के समाधान हेतु देश में बढ़ती जनसंख्या की वृद्धि के लिये अतिरिक्त उत्पादन प्राप्त करने के लिए प्रति इकाई क्षेत्रफल की उत्पादकता बढ़ानी होगी, जोकि संसाधनों और लागतों के न्याय संगत प्रयोग द्वारा ही संभव है। संसाधनों के संरक्षण का अर्थ यह है कि हम प्राकृतिक संसाधनों का इस प्रकार बुद्धिमता से प्रयोग करें, ताकि हमारी वर्तमान पीढ़ी का जीवन स्तर ऊँचा उठे साथ ही प्राकृतिक संपदा की हानि कम से कम हो और ये आने वाली पीढ़ियों के लिए भी पर्याप्त मात्रा में सुरक्षित रह सकें। संसाधनों का प्रयोग करते समय इस बात का भी ध्यान रखना चाहिए कि कोई भी संसाधन व्यर्थ न जाए। हमारा जीवन वायु, जल, मृदा, चट्टानों, वन, जलाशयों आदि के संरक्षण उपायों पर निर्भर है। इन साधनों के संरक्षण का मुख्य उद्देश्य यही है कि इन सभी साधनों का हम अधिक से अधिक सदुपयोग करके अपना जीवनयापन करें। इसके साथ ही हम उन साधनों को भावी पीढ़ियों के लिए भी बचाकर प्रदूषण रहित रखें।

संसाधन संरक्षण एवं प्रबंधन के उद्देश्य

1. पारिस्थितिकी तंत्र की विशेषताओं को कायम रखा जाए।
2. जैव विविधता को बनाए रखा जाए।
3. पर्यावरण प्रदूषण को कम करना।

कृषि में प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन की आवश्यकता

देश में खाद्यान्न संकट को दूर करने तथा अर्थव्यवस्था को मजबूत करने के लिए कृषि उपज बढ़ाने की आवश्यकता है। इसके लिए मिट्टी और जल संरक्षण के उपाय करना अति आवश्यक है। असमय वर्षा, अतिवृष्टि, अनावृष्टि एवं जलवायु परिवर्तन के कारण प्राकृतिक संसाधनों एवं उनके दोहन पर विपरीत प्रभाव पड़ रहा है। अतः प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन की अत्यंत आवश्यकता है।

कृषि संसाधन प्रबंधन में सही किस्मों का चुनाव, बुआई का सही समय एवं विधि तथा उचित समय, बीजोपचार, बीज की उचित मात्रा, संतुलित खाद, उचित सिंचाई, खरपतवार नियंत्रण इत्यादि आते हैं, जिससे प्रति इकाई लागत व क्षेत्रफल से पैदावार में वृद्धि होती है।

कृषि में प्राकृतिक संसाधन प्रबंधन की विधियां

1. पर्यावरण अनुकूल प्राविधियां

ग्रीनहाउस गैसों के कारण पिछले दो दशकों से मौसम में परिवर्तन तथा भूमण्डलीय तापमान में वृद्धि एक महत्वपूर्ण विषय बनकर उभरा है। भूमण्डलीय तापमान में मुख्य रूप से कार्बन डाईऑक्साइड, क्लोरोफ्लोरो कार्बन एवं मीथेन आदि गैसें हैं। भूमि उपयोग में परिवर्तन से तात्पर्य ऐसी प्रजातियों का विकास, जो इन परिवर्तनों के साथ परिवर्तन स्थापित कर सकें, जैसे सस्य क्रियाओं से संबंधित व्यवहारिक परिवर्तन, कार्बन डाईऑक्साइड नियंत्रण आदि। बदलते पर्यावरण में कृषि उत्पादन को टिकाऊ बनाए रखने के लिए मृदा एवं जल का संरक्षण आवश्यक है। इसे ध्यान में रखते हुये वैज्ञानिकों द्वारा

ऐसी अनेक तकनीकियां तथा विधियां विकसित की गई हैं, जो मृदा के उपजाऊपन का संरक्षण करती हैं तथा सिंचाई के जल की बचत और जल के कुशल उपयोग को बढ़ावा देती हैं। इस प्रकार की संसाधन संरक्षण प्रौद्योगिकियों में जीरो-टिलेज तकनीक, बेड प्लांटिग तकनीक, गेहूं की सतही बुआई, धान की सीधी बुआई एवं बिना लेव की रोपाई, लीफ कलर चार्ट/एल.सी.सी. द्वारा धान नाइट्रोजन उर्वरक का प्रयोग, कम जुताई, ट्रैफिक कंट्रोल एवं डबल जीरो-टिलेज आदि हैं। इनके द्वारा लागत एवं प्राकृतिक संसाधनों का समुचित उपयोग, फसल प्रणाली की गहनता व विविधीकरण तथा खाली मृदा एवं धान के बाद खाली मृदा का उपयोग करते हुए, खेती को सफल एवं टिकाऊ बनाया जा सकता है। इनके प्रयोग से बुआई/रोपाई, डीजल, बीज, खाद, जल के खर्चों को कम करते हुए समय से बुआई/रोपाई तथा प्राकृतिक संसाधनों का संरक्षण करते हुए अच्छी गुणवत्ता वाली उपज प्राप्त की जा सकती है।

2. पोषक तत्वों का समेकित उपयोग

कृषि वैज्ञानिकों द्वारा प्रायः समेकित पोषक तत्व प्रबंधन की अनुशंसा की जाती है। समेकित पोषक तत्व प्रबंधन का अभिप्राय पोषक तत्वों के विभिन्न स्रोतों (जैविक खाद, रसायनिक उर्वरक, जैव उर्वरक, हरी खाद, खलियां आदि) से पोषक तत्वों की फसल को आपूर्ति करने से है। जैविक खादों में गोबर की खाद, कंपोस्ट एवं केंचुआं की खाद प्रमुख हैं। हरी खाद के लिए सनई, ढैंचा, मूँग, ग्वार अथवा लोबिया आदि को उगाया जा सकता है। जैव उर्वरकों में राइजोबियम, एजोटोबैक्टर, एजोस्पीरिलम, बी.जी.ए., पी.एस.बी. एवं वैम आदि शामिल हैं। नाइट्रोजनधारी उर्वरकों में यूरिया प्रमुख है। डी.ए.पी. से नाइट्रोजन एवं फॉस्फोरस की उपलब्धता होती है। पोटैशियम डालने के लिए मुख्य रूप से म्युरेट ऑफ पोटाश का प्रयोग किया जाता है। गंधक के प्रमुख स्रोत गंधक तत्व, जिप्सम एवं आयरन पायराइट्स हैं। जिंक की कमी को दूर करने के लिए जिंक सल्फेट उर्वरक का प्रयोग किया जा सकता है। जैव उर्वरकों का सल्फर व अन्य अकार्बनिक स्रोतों के साथ मिलाकर उपयोग करने से उपज के साथ-साथ नाइट्रोजन की उपयोगिता में विशेष रूप से सुधार होता है। दलहनी फसलों में जैव उर्वरकों के प्रयोग से उपज में 15 से 20 प्रतिशत तक की वृद्धि के साथ 30 से 40 प्रतिशत नाइट्रोजन प्रति हेक्टेयर की बचत हो जाती है।

3. फसल विविधीकरण

गंगा के मैदानी क्षेत्रों में पिछले तीन दशकों से धान-गेहूं फसल चक्र अपनाये जाने के कारण प्राकृतिक संसाधनों में मुख्य रूप से मृदा तथा जल की कमी के लक्षण प्रकट होने लगे हैं। अति-आवश्यक लागतों के उचित प्रयोग के कारण इन फसलों की उत्पादकता में या तो ठहराव आ गया है अथवा ह्रास हो रहा है। उपज स्तर को कायम रखने के लिए लागतों का उपज मात्रा में प्रयोग उपज की वृद्धि में सहायक सिद्ध नहीं हो पा रहा है। परंतु इससे मृदा, जल तथा वातावरणीय प्रदूषण जैसी समस्याएं उत्पन्न हो रही हैं, जिसके कारण हमें लाभदायक फसल पद्धति के लिए सोचना पड़ रहा है। अन्य फार्म व्यवस्थाओं जैसे; आधुनिक फसलों की खेती, सस्य-वानिकी, पशुपालन, मुर्गी तथा मछलीपालन या अधिक मूल्य की औषधीय एवं सुगंध वाली फसलों की ओर ध्यान देना पड़ रहा है। फसल विविधीकरण के द्वारा आधारभूत संसाधनों जैसे; मृदा, जल, जलवायु और वनस्पतियों का प्रयोग इस प्रकार से किया जाता है कि संपूर्ण विकास व पर्याप्त रोजगार के साथ-साथ पर्यावरण तंत्र भी सुरक्षित रहे। उदाहरण के लिए धान-गेहूं फसल चक्र में दलहनी फसलों के समावेश द्वारा न केवल वातावरणीय नाइट्रोजन का स्थिरीकरण होता है। बल्कि मृदा की संरचना, उर्वरता और जल उपभोग क्षमता में वृद्धि को बनाए रखने में भी सहायता मिलती है। भारतीय कृषि प्रणाली अनुसंधान संस्थान, मोदीपुरम में किए गए प्रयोगों से यह सिद्ध हुआ है कि धान-गेहूं प्रणाली में अरहर के साथ-साथ धान लगाने से बहुत जल की बचत होती है तथा आगामी गेहूं की फसल में कम नाइट्रोजन की आवश्यकता होती है।

4. समेकित कृषि प्रणाली

कृषि पद्धतियों का भारतीय किसान पहले से ही उपयोग करते आ रहे हैं। समेकित कृषि प्रणाली, चक्रीय फसल, अंतर फसल, मिश्रित फसल अभ्यासों के साथ

संबद्ध कार्यकलापों यथा-पशुपालन, मुर्गी पालन, सूअर पालन, मछली पालन, बत्तख पालन, वृक्षारोपण, अनाज उत्पादन, फूलोत्पादन, चारा उत्पादन, फल व सब्जियां उत्पादन एवं मशरुम उत्पादन आदि कुछ कृषि पद्धतियों एकीकृत अंगों के रूप में फसल उत्पादन से जुड़ी हैं और किसानों को न केवल सतत आजीविका के लिए उत्पादन बढ़ाने योग्य बनाती है बल्कि सूखा, बाढ़ अथवा अन्य गंभीर मौसम घटनाओं के प्रभाव को भी कम करती है। इस प्रणाली में पशुओं से जो गोबर प्राप्त होता है, उसे विभिन्न प्रकार से प्रयोग किया जाता है। गोबर का अधिकतर भाग गोबर की खाद एवं कंपोस्ट बनाने में प्रयोग किया जाता है और उस खाद का उपयोग तालाब के ऊपर बनी मेंड़ों पर उगाए गए फल, वृक्षों और सब्जी उत्पादन में किया जाता है। तालाब की मेंड़ों पर कोई भी रासायनिक खाद का प्रयोग नहीं किया जाता है, ताकि जैविक उत्पाद पैदा किये जा सकें। गोबर का कुछ भाग गोबर गैस बनाने में प्रयोग किया जाता है। यह बायोगैस एक औसत परिवार के खाना बनाने के लिए पर्याप्त होती है। शेष गोबर को मछलियों हेतु तालाब में डाला जाता है। तालाब का पौष्टिक जल गर्मी की फसलों की सिंचाई में प्रयोग किया जाता है, जो भूमि की उर्वरता को बढ़ाने एवं भौतिक दशा सुधारने में सक्षम होता है। पशुओं के लिए दाना मिश्रण को भी फसल उत्पादों से फार्म पर ही बनाया जाता है ताकि लागत को कम किया जा सके तथा उसकी गुणवत्ता को बनाये रखा जा सके। समेकित कृषि प्रणाली के माध्यम से किसानों की वार्षिक आय में लगभग 40 प्रतिशत तक की वृद्धि हुई है।

5. जैव विविधता

सामान्य रूप से आनुवंशिक, प्रजाति और पारिस्थितिकीय स्तर पर पहचानी जा सकती है। मानव मात्र की संतति निरंतर बनी रहे, इसके लिए जैव विविधता का संरक्षण अत्यंत महत्वपूर्ण है। जैव विविधता के संरक्षण के जिम्मेदार कारणों में एकल खेती और अपरंपरागत क्षेत्रों में परंपरागत फसलों की शुरुआत है।

संक्षेप में कह सकते हैं कि, वर्तमान पीढ़ी के भरण-पोषण के अतिरिक्त आगे आने वाली पीढ़ियों को ध्यान में रखते हुए प्राकृतिक संसाधनों यथा-मृदा, जल, जानवर, जंगल, जन एवं कृषि आदानों का संतुलित उपयोग करके टिकाऊ उत्पादन लेना होगा और ऐसी जलवायु अनुकूल तकनीक अपनानी होगी, जिससे हमारे पर्यावरण एवं मानव स्वास्थ्य को कोई हानि न पहुंच सके। यह तभी संभव है जब हम प्राकृतिक संसाधनों का उपयोग संतुलित मात्रा में करें।

कष्ट ही तो वह प्रेरक शक्ति है जो मनुष्य को कसौटी पर परखती है और आगे बढ़ाती है।

- सावरकर

सूखे के प्रबंधन के लिए कृषि संबंधित रणनीतियां

सुनील कुमार त्यागी एवं भूपिन्द्र सिंह

पर्यावरण विज्ञान एवं जलवायु समुत्थानशील कृषि केंद्र
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारत मुख्यतः एक कृषि प्रधान देश है। कृषि हमारी सामाजिक-आर्थिक प्रणाली की रीढ़ है। यह न केवल भोजन और कच्चा माल प्रदान करता है, बल्कि आबादी के बहुत बड़े अनुपात में रोजगार के अवसर भी प्रदान करता है। हमारी आबादी का लगभग 70 प्रतिशत सीधे कृषि व कृषि संबंधी कार्यों में रत है। 2018-19 में, भारत के सकल घरेलू उत्पाद में कृषि और संबद्ध क्षेत्रों का योगदान 15.87 प्रतिशत रहा। पिछले दो दशकों में, भारतीय कृषि में तेजी से बदलाव आया है। वैश्वीकरण और उदारीकरण की नीति ने कृषि आधुनीकीकरण के नए रास्ते खोल दिए हैं। इसने न केवल व्यवसायीकरण और विविधीकरण को जन्म दिया है, बल्कि कॉर्पोरेट संस्थाओं द्वारा निवेश के कारण विभिन्न तकनीकी और संस्थागत नवाचारों को शुरू किया गया है। एक समय था, जब भारत खाद्यानों का आयात करने वाला देश था। 2017-18 में, भारत ने 277 मिलियन टन खाद्यान्न उत्पादन का लक्ष्य हासिल किया है। खाद्य उत्पादन में लगातार वृद्धि से भारत को खाद्यान्न में आत्म निर्भर बनने में मदद की है।

भारतीय कृषि बहुत हद तक मानसून पर निर्भर करती है। भारत में दक्षिण-पश्चिम मानसून जून से सितंबर तक, चार महीने की अवधि का है। इस अवधि के दौरान, भारत की कुल वार्षिक वर्षा का 75 प्रतिशत से अधिक वर्षा होती है। कभी-कभी, यह भी देखा गया है कि मानसून में देरी फसलों की बुआई को बुरी तरह से प्रभावित करती है जिसके परिणामस्वरूप, विशेष रूप से चावल और खरीफ फसलों की उत्पादकता में गिरावट आती है। अनिश्चित मानसून न केवल किसानों के लिए चिंता का कारण बन जाता है, बल्कि प्रतिकूल परिस्थिति में कृषि प्रबंधकों, योजनाकारों और कृषि विशेषज्ञों को भी अनिश्चितता की स्थिति में पहुंचा देता है। भारतीय मौसम विज्ञान विभाग (IMD) वह एजेंसी है, जो हमारे देश में शॉर्टरेंज, मीडियम रेंज और लॉन्ग रेंज फोरकास्ट की जानकारी और प्रसार के लिए जिम्मेदार है। लेकिन, कई वर्षों से वास्तविक और अनुमानित आंकड़ों के बीच एक व्यापक अंतर देखा गया है।

सूखे का वर्गीकरण

सूखा आमतौर पर एक फसली मौसम या उससे अधिक की अवधि में वर्षा की कमी है, जिसके परिणामस्वरूप कुछ कृषि कार्य पानी की कमी के कारण संपन्न नहीं हो पाते हैं। हालांकि, साहित्य के संदर्भ में, सूखे को मौसम विज्ञान, कृषि विज्ञान, जल विज्ञान और सामाजिक-आर्थिक के रूप में वर्गीकृत किया गया है।

अनावृष्टि-किसानों के लिए एक अनिश्चित स्थिति

मौसम संबंधी सूखा आमतौर पर समय की पूर्व निर्धारित अवधि में वर्षा की कमी से परिभाषित होता है। इसका निर्धारण, छह महीने की समयावधि में 50 प्रतिशत सामान्य वर्षा होना तथा उपयोगकर्ता की जरूरतों व अनुप्रयोगों तथा स्थान के अनुसार अलग-अलग निर्धारित होती है।

कृषि सूखे को सामान्यतः कुछ निर्दिष्ट अवधि में सामान्य वर्षा के प्रस्थान की तुलना में फसल और चारा

वृद्धि का समर्थन करने के लिए मिट्टी में पानी की उपलब्धता में कमी के कारण परिभाषित किया गया है। वर्षा और मिट्टी में, वर्षा जल के रिसाव के बीच संबंध अकसर प्रत्यक्ष नहीं होता है। जल रिसाव की स्थिति पूर्ववर्ती नमी की स्थिति, ढलान, मिट्टी के प्रकार और वर्षा की तीव्रता के आधार पर भिन्न-भिन्न होती है। मृदा विशेषताएं भी, जैसे, कुछ मिट्टी में पानी की धारण क्षमता अधिक होती है, जिससे शीघ्र सूखे का प्रभाव नहीं होता।

हाइड्रोलॉजिकल सूखे को आमतौर पर वर्षा ऋतु के दौरान सतह व उपसतह में नमी की औसत स्थितियों से कमियों द्वारा परिभाषित किया जाता है। कृषि सूखे की तरह, वर्षा की मात्रा और झीलों, जलाशयों, जलभृतों, और धाराओं में पानी की आपूर्ति के बीच कोई सीधा संबंध नहीं है, क्योंकि इन हाइड्रोलॉजिकल सिस्टम घटकों का उपयोग कई-कई बार विभिन्न उद्देश्यों के लिए किया जाता है, जैसे कि सिंचाई, मनोरंजन, पर्यटन, बाढ़ नियंत्रण, परिवहन, पनबिजली उत्पादन, घरेलू जल आपूर्ति, लुप्तप्राय प्रजातियों की सुरक्षा और पर्यावरण प्रबंधन आदि। हाइड्रोलॉजिकल प्रणाली में, वर्षा की विकृति और उस स्थान पर जलाभाव की स्थिति में पर्याप्त समय अंतराल होता है।

सामाजिक-आर्थिक सूखा अन्य प्रकार के सूखे से बिलकुल अलग होता है, क्योंकि यह कुछ वस्तुओं (जैसे पानी, पशुधन, चारा या पनबिजली) के लिए आपूर्ति और मांग के बीच संबंध को दर्शाता है जो वर्षा या पानी की उपलब्धता पर निर्भर करता है। प्रत्येक वर्ष, वर्षा की मात्रा के आधार पर खपत मात्रा में हर साल परिवर्तन होता है। जल आपूर्ति में भी उतार-चढ़ाव होता है, जोकि अकसर बढ़ती आबादी, विकास और अन्य कारकों के परिणामस्वरूप होता है।

समय के साथ-साथ, मुख्य प्रकार के सूखे और वर्षा जल की कमियों के बीच सीधा संबंध कम हो रहा है क्योंकि भूमि की सतह और उप सतह में पानी की उपलब्धता कुशल प्रबंधन से सुधरती है। पानी की आपूर्ति के प्रबंधन में परिवर्तन या तो सूखे के प्रभाव को कम कर देता है या बढ़ा देता है। सूखा स्वचालित रूप से आपदा की ओर नहीं ले जाता है। आपदा केवल तब होती है जब किसी समुदाय या समाज के कामकाज में गंभीर व्यवधान होता है, जिसमें व्यापक मानव, सामग्री, आर्थिक या पर्यावरणीय नुकसान शामिल होते हैं, जो प्रभावित समुदाय या समाज के अपने संसाधनों का उपयोग करने की क्षमता से अधिक होता है।

भारत में सूखा

मौसम विज्ञान के अनुसार, भारत 36 उप-विभाजनों में विभाजित है। कृषि योजना और विकास के उद्देश्य से, देश को तापमान, वर्षा की मात्रा, मिट्टी और फसल के पैटर्न के आधार पर 15 कृषि जलवायु क्षेत्रों में विभाजित किया गया है। सूखा भारतीय जलवायु की एक सामान्य आवर्तक विलक्षणता है और आमतौर पर इसके स्थानिक विस्तार, तीव्रता और अवधि से जुड़ा हुआ है। अन्य प्राकृतिक आपदाओं के विपरीत, इसकी शुरुआत धीमी होती है लेकिन विनाशकारी प्रभाव के साथ तीव्रता में बढ़ोतरी भी होती है। कम वर्षा, जलाशयों में जल संग्रहण स्तर और भूजल स्तर में गिरावट, बुआई और फसल की स्थिति, प्रमुख सूखा संकेतक हैं। दक्षिण-पश्चिम मानसून सीज़न (जून-सितंबर) भारत में मुख्य बरसात का मौसम है। इसलिए दक्षिण-पश्चिम मानसून की विफलता सूखे के रूप में प्रकट होती है। भारत में लगभग 68% भूमिक्षेत्र में अलग-अलग प्रकार के सूखे का खतरा बना रहता है।

भारत की स्वतंत्रता के बाद से सूखे के वर्ष

वर्ष	देश का प्रभावित (प्रतिशत में) क्षेत्रफल	प्रभावित श्रेणी
1951	33.2	सीमित
1952	25.8	अल्प
1965	42.9	सीमित
1966	32.3	सीमित
1968	20.6	अल्प
1969	19.9	अल्प
1971	13.3	अल्प
1972	44.4	अल्प

1974	29.3	सीमित
1979	39.4	सीमित
1982	33.1	सीमित
1985	30.1	सीमित
1986	19.0	अल्प
1987	49.2	गंभीर
2002	14 राज्यों में	गंभीर
2009	47.0	गंभीर

स्रोत: कृषि अनुसंधान डाटा पुस्तिका - 2018

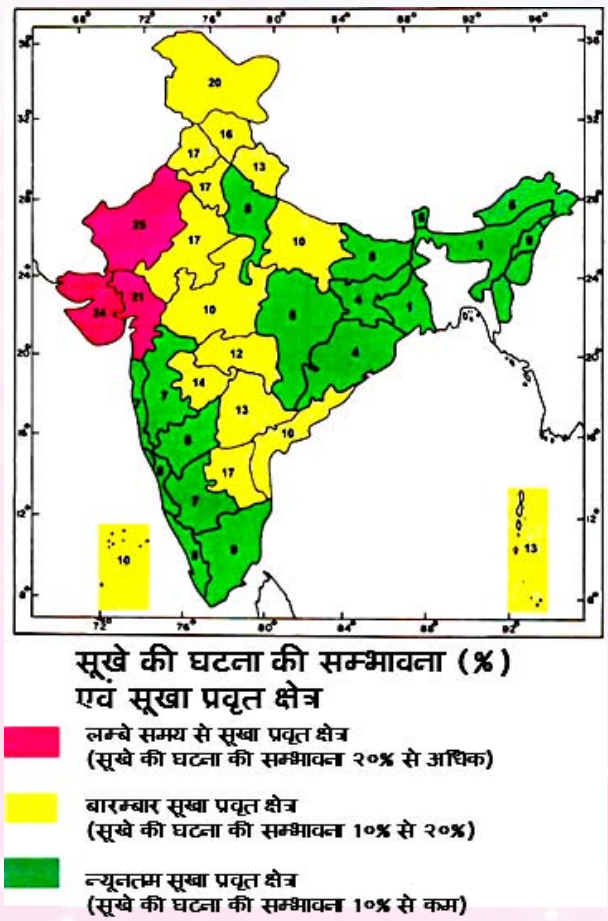

कृषि पर सूखे का असर

सूखा बड़ी मात्रा में आर्थिक, पर्यावरणीय और सामाजिक जीवन स्तर को प्रभावित करता है। प्रमुख प्रभावों में फसल एवं वन उत्पादकता में कमी, आग के खतरे में वृद्धि, जलस्तर में कमी, पशुधन और वन्य जीव मृत्युदर में वृद्धि और मछली के आवास को नुकसान शामिल हैं। फसल एवं वन उत्पादकता में कमी के परिणामस्वरूप किसानों और कृषि व्यवसाय के लिए आय कम हो सकती है, भोजन और चारे के लिए कीमतें बढ़ सकती हैं व बेरोजगारी भी बढ़ सकती है।

वर्षा के कारण सूखे का तत्काल परिणाम फसल उत्पादन में गिरावट है। जिसके फलस्वरूप, किसानों को ऐसी स्थिति का सामना करना पड़ता है कि वे अपने परिवारों को भोजन खिलाने और अपनी अन्य प्रतिबद्धताओं को पूरा करने के लिए बहुत असक्षम हो जाते हैं। कम वर्षा के कारण फसल अवशेषों से चारे की आपूर्ति में गिरावट आती है। चारे की अपर्याप्त मात्रा से पशुधन की मौतों में वृद्धि हो सकती है। कई शोधकर्ताओं ने भारत के सूखा प्रभावित क्षेत्रों में खाद्यान्न उत्पादन के सारभूत नुकसान की सूचना दी है। खरीफ की फसलें, सूखे की अधिक मार झेलती हैं। निम्नलिखित सारणी खाद्यान्न उत्पादन में सूखे के कारण होने वाले नुकसान को समझने के लिए एक स्नैपशॉट चित्र प्रदान करती है।

सूखे के वर्षों के दौरान भारत में चावल उत्पादन में गिरावट

वर्षा की कमी के वर्ष	मानसून की वर्षा (एलपीए से प्रतिशत कमी)	चावल के उत्पादन में गिरावट (%)
1972-73	-24	9.76
1974-75	-12	11.29
1979-80	-19	27.02
1982-83	-14	13.01
1986-87	-13	5.40
1987-88	-19	12.26*
*वर्ष 1985-86 की तुलना में		
2002-03	-19	29.69
2009-10	-22	11.33

स्रोत:Indiastats.com

भारत सरकार द्वारा प्रकाशित, सूखे के प्रबंधन की नियम पुस्तिका में सूखे के विपरीत प्रभावों का विस्तार से वर्णन किया गया है। मुख्य प्रकार के सूखे के प्रभाव नीचे वर्णित हैं:

आर्थिक प्रभाव

- कृषि और संबंधित क्षेत्रों में सूखे के प्रभाव कई आर्थिक क्षेत्रों में होते हैं, जैसे फसल और पशुधन उत्पादन दोनों की पैदावार में कमी।
- आपूर्ति कम होने के कारण भोजन, ऊर्जा और अन्य उत्पादों की कीमतों में बढ़ोतरी।
- फसल की गुणवत्ता को नुकसान।
- पनबिजली उत्पादन का नुकसान।
- छोटे और सीमांत किसान, पानी और चारे की कमी होने के कारण सबसे ज्यादा प्रभावित होते हैं।
- राष्ट्रीय आर्थिक विकास का नुकसान, आर्थिक विकास धीमा होना।

पर्यावरणीय प्रभाव

- मरुस्थलीकरण का विस्तार - जल और पवन द्वारा मिट्टी का कटाव।
- पशु और पौधों की प्रजातियों को नुकसान।
- उपलब्ध जल व चारे की कमी के कारण मछलियों और वन्य जीवों के आवास पर प्रतिकूल प्रभाव।
- कुछ क्षेत्रों में वन्य जीवों का नुकसान।
- लुप्त प्राय प्रजातियों को विलुप्त होने से बचाने हेतु अत्यधिक प्रयास।
- आग की घटनाओं की बढ़ती संख्या व गंभीरता।

सामाजिक प्रभाव

- भोजन की कमी, गर्मी और आत्महत्याओं के कारण मानव जीवन का नुकसान।
- पानी उपयोग के लिए संघर्ष / राजनीतिक संघर्ष।
- सूखे के प्रबंधन में उदासीनता के लिए सरकार के प्रति जनता का असंतोष।
- सूखा राहत के वितरण में असमानता।
- बढ़ती गरीबी और जनसंख्या का पलायन।
- सार्वजनिक वितरण योजनाओं में अधिक भ्रष्टाचार।

सूखे से नुकसान का प्रबंधन

सूखे द्वारा अनिश्चितता और संभावित नुकसान के प्रबंधन के लिए अग्रिम जोखिम प्रबंधन दृष्टिकोण अपनाया जाता है। इस प्रक्रिया में जोखिम और नुकसान को नियंत्रित करने व कम करने के लिए विशिष्ट रणनीतियों और कार्य योजनाओं को कार्यान्वित करने हेतु गहन प्रयास किये जाते रहे हैं। राष्ट्रीय आपदा प्रबंधन प्राधिकरण, भारत सरकार ने सूखे के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने और दूर करने के लिए कई छोटी, मध्यम और दीर्घकालिक रणनीतियां तैयार की हैं और सबसे ज्यादा प्रभावित राज्यों के साथ मिलकर राहत और विकास कार्यक्रमों को लागू किया है। इन उपायों में खाद्यान्न और चारा की उपलब्धता, सतह और भू-जल के विवेकपूर्ण उपयोग, पशु शिविरों के प्रवास को रोकना, प्रभावित लोगों की प्रोत्साहन सहायक आय और ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार सृजन शामिल हैं। सही मायने में, सूखा एक आपदा नहीं है, बल्कि एक प्रबंधन का मुद्दा है। इस विषय से संबंधित मुख्य मुद्दे निम्नलिखित हैं:

प्रमुख प्रबंधन मुद्दे

- आकस्मिक राहत फसल योजनाएं।
- पेय जल की उपलब्धता।
- रोजगार और पोषण सुरक्षा।
- पशुधन प्रबंधन।
- समय पर राहत राशि की उपलब्धता।

विशेषज्ञों के अनुसार, ऐसे मामले सामने आए हैं, जिनमें समाधान योजनाओं का क्रियान्वयन उचित समय पर नहीं हो पाया है। खराब प्रबंधन के लिए जिम्मेदार कारक नीचे सूचीबद्ध हैं:

खराब प्रबंधन के लिए जिम्मेदार कारक

- सूखे की स्थिति का गलत आकलन।
- विलंबित और अपर्याप्त कार्रवाई।

- गैर-भागीदारी योजनाएँ।
- सूखा राहत उपाय योजनाओं का गलत क्रियान्वयन।
- अंतर-विभागीय सहयोग की कमी।
- तालाबों और नदियों जैसे सतही जल स्रोतों की सुरक्षा के लिए प्रबंधकीय कौशल का अभाव।

कृषि सूखे के प्रबंधन के लिए रणनीतियां

कृषि संबंधी सूखे से निपटने के लिए कार्यप्रणाली विकसित करने हेतु अनुसंधान कार्यों को सर्वोच्च प्राथमिकता की आवश्यकता है। व्यापक रूप से उपयोग की जाने वाली वर्तमान विधियों में उपयुक्त फसल प्रणाली विकसित करना, उचित फसल के प्रकार और किस्मों का चयन तथा फलोत्पादक मिट्टी और जल प्रबंधन प्रथाओं को अपनाना शामिल है। सूखे प्रबंधन के लिए विशेषज्ञों द्वारा सुझाए गए विभिन्न उन्नत तकनीकों और प्रथाओं को नीचे सूचीबद्ध किया गया है।

उचित फसल चयन: सूखे के शुरूआती संकेतों के आधार पर, कम अवधि की फसल की किस्मों के साथ-साथ कम पानी की आवश्यकता वाली फसलों का चयन, जिन्हें वर्षा की अवधि में काटा जा सकता है। साथ ही, मानसून के बाद की फसल के लिए मृदा प्रोफ़ाइल में पर्याप्त अवशिष्ट नमी होना। सूखे की गंभीरता और फसल की किस्म के आधार पर बुआई के समय को समायोजित किया जा सकता है।

फसल प्रतिस्थापन: पारंपरिक फसलें/किस्में, जोकि फसलों द्वारा जल उपयोग की दक्षता में प्रभावहीन है, बाह्य निविष्टियों के प्रति कम अनुक्रियाशील और कम उपज वाली फसलों को अधिक दक्षता वाली फसलों द्वारा प्रतिस्थापित किया जाना चाहिए। जैसे धान और गन्ने की फसलों के लिए बहुत अधिक पानी की आवश्यकता होती हैं, अतः वैकल्पिक फसलें जैसे कि मक्का, दालें, मूँगफली, सूरजमुखी, सोयाबीन, चारा और सब्जियां उगाई जा सकती हैं।

फसल प्रणाली: संसाधनों के अधिक कुशल उपयोग हेतु इंटर क्रोपिंग और मल्टीपल क्रॉपिंग योजना का उपयोग कर के फसल की गहनता (क्रॉप इन्टेन्सिटी) में वृद्धि लायी जा सकती है। फसल की गहनता, फसल ऋतु की अवधि पर निर्भर करती है, जोकि वर्षा पैटर्न और मिट्टी की नमी भंडारण क्षमता पर निर्भर करता है। फसल विविधीकरण को बढ़ावा देना, सूखा सहिष्णु फसल के साथ मुख्य फसल का मिश्रण, खरपतवार प्रबंधन, मिट्टी की नमी संरक्षण के लिए मल्चिंग और ड्रिप सिंचाई/ स्प्रिंकलर के प्रयोग की वकालत की जाती रही है।

उर्वरकों का उपयोग: शुष्क क्षेत्र (ड्राईलैंड) की मिट्टी न केवल प्यासी होती है, बल्कि भूखी भी होती है। इसलिए, उर्वरकों को बीज के नीचे फरों में लगाया जाना चाहिए। उर्वरकों का उपयोग न केवल फसल को पोषक तत्व प्रदान करने में मदद करता है, बल्कि मिट्टी की नमी का भी कुशल उपयोग करता है। जैविक और अकार्बनिक उर्वरकों का उचित मिश्रण मिट्टी की नमी धारण क्षमता में सुधार करता है और साथ ही सूखा सहिष्णुता को भी बढ़ाता है।

वर्षा जल प्रबंधन: वर्षा जल प्रबंधन एक ऐसी एकीकृत रणनीति है, जो खेतों और वाटर शेड पर, फसल-पशुधन प्रणालियों को कृषि और घरेलू, दोनों उद्देश्यों के लिए स्थायी रूप से पानी और पोषक संसाधनों को व्यवस्थित करता है तथा संसाधनों के कुशल उपयोग करने की क्षमता को भी बढ़ाता है। दक्ष वर्षा जल प्रबंधन सूखा प्रभावित क्षेत्रों से कृषि उत्पादन बढ़ाने में सहायक होता है। कंपोस्ट और जैविक खाद के खेतों में डालने से और फलियों वाली फसल उगाने से मिट्टी में कार्बनिक पदार्थ की मात्रा बढ़ जाती है और साथ ही जलधारण क्षमता में भी वृद्धि होती है। वर्षा जल, जो मिट्टी द्वारा नहीं सोखा जा सकता है, वह सतह रनॉफ के रूप में बह जाता है। इसके अतिरिक्त रनॉफ जल को भूमि उपचार के साथ-साथ, तालाबों व कुओं में संगृहीत किया जा सकता है और भविष्य में सिंचाई के लिए प्रयोग किया जा सकता है।

जलग्राही क्षेत्र प्रबंधन: जलग्राही क्षेत्र प्रबंधन कार्यक्रमों को फसलों, पशुधन और भूमि की उत्पादकता पर सूखे /बाढ़ के प्रतिकूल प्रभावों को कम करने, समग्र आर्थिक विकास को बढ़ावा देने के लिए किया जाता है तथा संसाधन रहित गरीब और वंचित वर्गों के लोगों की सामाजिक-आर्थिक स्थिति में सुधार करने के लिए लागू किया जाता है।

भूमि का वैकल्पिक उपयोग: सभी शुष्क भूमि फसल उत्पादन के लिए उपयुक्त नहीं हैं। कुछ भूमि चारागाह प्रबंधन, ड्राईलैंड बागवानी, कृषि-वानिकी प्रणालियों के लिए उपयुक्त हो सकती है। ये सभी प्रणालियां, जो फसल उत्पादन के लिए वैकल्पिक तौर पर उपलब्ध हैं, उन्हें वैकल्पिक भूमि उपयोग प्रणाली कहा जाता है। ये प्रणालियां मोनो-क्रॉप्ड ड्रायलैंड्स में गैर मौसमी (ऑफ-सीजन) रोजगार सृजन करने में मदद करते हैं और गैर मौसमी (ऑफ-सीजन) बारिश का उपयोग करते हैं, मिट्टी के क्षरण को रोकते हैं तथा इको सिस्टम में संतुलन बहाल करने में सहायक होते हैं। उद्यानपथ फसल, कृषि-बागवानी और सिल्वी-चारागाह अलग-अलग वैकल्पिक भूमि उपयोग प्रणालियां हैं।

कृषि-सलाहकार सेवाएं: कृषि उत्पादन में सुधार के लिए उपलब्ध मौसम संबंधी जानकारी का किसानों को उपयोग करने में मदद करने के लिए भारत मौसम विज्ञान विभाग (IMD) द्वारा कृषि-मौसम संबंधी सलाहकार सेवा प्रदान की जाती है। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान (IARI) भारत के मौसम विभाग (IMD) के साथ मिलकर अपने एकीकृत कृषि सलाहकार सेवाओं के माध्यम से राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र (NCR) में मौसम आधारित पूर्वानुमान का उपयोग करते हुए मौसम आधारित परामर्श जारी कर रहा है। इस उपक्रम के माध्यम से अनुसंधान परिणामों का उपयोग परामर्श तैयार करने के लिए किया जा रहा है। इन परामर्श दिशा निर्देशों को विभिन्न जन संचार माध्यमों के द्वारा प्रसारित किया जाता है और यह विवरण भा.कृ. अनु.सं. की वेबसाइट पर भी रखा जाता है ताकि किसानों द्वारा मानसून की अनिश्चितताओं को कम करने के लिए उचित कदम उठाए जा सकें।

सारांश

भारत एक कृषि- प्रधान देश होने के कारण तेजी से बढ़ती आबादी को भोजन और कच्चा माल प्रदान करता है। यह हमारी सामाजिक-आर्थिक प्रणाली को मजबूत करने के लिए रोजगार के अवसर भी प्रदान करता है। अच्छा मानसून भारतीय कृषि के लिए एक महत्वपूर्ण संकेतक है, क्योंकि वर्षा आधारित खेती योग्य क्षेत्र खाद्यान्न की मांग के साथ-साथ चारे, मोटे अनाज, दालों और तिलहन की आपूर्ति का 40% आपूर्ति करता है। देश के बड़े हिस्से में कम वर्षा या समान वितरण की कमी न केवल देश की पर्यावरणीय, सामाजिक और आर्थिक संरचना को प्रभावित करती है, बल्कि किसानों के लिए भी चिंता का कारण बनती है। साथ ही यह समस्या कृषि प्रबंधकों, योजनाकारों और किसानों को अनिश्चित स्थिति में खड़ा कर देती है। उपयुक्त फसल प्रणाली विकसित करने, उचित फसल के प्रकार और किस्मों के चयन, उचित मृदा-जल प्रबंधन प्रथाओं को अपनाने और कृषि-मौसम संबंधी सलाहकार सेवाओं जैसी रणनीतियों को कृषि सूखे से निपटने के लिए कारगर उपाय माना गया है।

जीवन की जड़ संयम की भूमि में जितनी गहरी जमती है और सदाचार का जितना जल दिया जाता है उतना ही जीवन हरा भरा होता है और उसमें ज्ञान का मधुर फल लगता है।

- दीनानाथ दिनेश

पौधशाला (नर्सरी) से रोजगार सृजन

रामेश्वर दयाल मीना एवं रणबीर सिंह

शाकीय विज्ञान संभाग एवं फोसू
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, पूसा, नई दिल्ली 110012

पौधों की नर्सरी एक लाभकारी व्यवसाय है। आजकल वांछित उन्नत किस्मों की सब्जियों, फूलों, शोभाकारी वृक्षों, फलदार-वृक्षों के पौद की मांग बढ़ रही है। नर्सरी स्थापना के लिए जिला उद्यान अधिकारी के माध्यम से राष्ट्रीय बागवानी मिशन के अंतर्गत आर्थिक सहायता भी दी जा रही है। जो व्यक्ति पौद की नर्सरी लगाना चाहते हैं, वे इसका लाभ ले सकते हैं।

भारत में अधिकांश किसान छोटी जोत वाले हैं। उनके लिए बड़े क्षेत्र पर खेती कर वर्ष भर आमदनी प्राप्त करना कठिन होता जा रहा है तथा अपने परिवार का भरण पोषण करना बड़ा चुनौतीपूर्ण है, जिसका स्थायी समाधान कम लागत, कम समय एवं कम जोत पर आय का स्रोत, पौधशाला या नर्सरी है। बहुत बड़ी नर्सरी रखना और मशीनों से नर्सरी तैयार करना वैसे भारतीय किसानों के बजट से बाहर होता है। ऐसे में किसानों के लिए छोटी-छोटी नर्सरी तैयार करना अच्छा होता है। इससे वे अपने खेत में भी सब्जी की खेती कर सकते हैं और अपनी नर्सरी में तैयार पौद दूसरों को भी बेच सकते हैं। इससे काफी लाभ भी हो जाता है। किसी नर्सरी से पौधे लेकर अपने खेत में बुआई करने की अपेक्षा अपनी नर्सरी में तैयार पौधों से सब्जी की खेती करना आसान एवं सस्ता होता है। इसमें शारीरिक श्रम एवं पैसों की बचत हो जाती है। छोटे स्थान पर नर्सरी बना कर पौधे तैयार कर लेना उत्तम होता है। इससे खेत की तैयारी का समय मिल जाता है। अपनी आवश्यकता से अधिक पौधे होने पर, उनको बेच कर लाभ प्राप्त किया जा सकता है। सब्जियों में कुछ फसलें जैसे भिंडी, सेम, मटर, राजमा इत्यादि को खेत, तैयार करके सीधे बुआई की जाती है। परंतु कुछ ऐसी फसलें भी हैं, जिनकी पहले नर्सरी में पौद तैयार करके फिर तैयार खेत में रोपाई की जाती है जैसे; टमाटर, बैंगन, मिर्च, प्याज, पत्ता गोभी, फूलगोभी, गांठगोभी आदि। नर्सरी एक ऐसा स्थान है, जिसके लिये आदर्श जलवायु, भूमि तथा सिंचाई की व्यवस्था करना आवश्यक है। नर्सरी का उद्देश्य आदर्श पौधे तैयार करना होता है। सब्जियों की खेती के लिए नर्सरी में पौद तैयार करना भी एक विशेष तकनीकी कार्य है। जो किसान अच्छी पौद तैयार नहीं कर सकते, वे इन सब्जियों की सफल खेती भी नहीं कर सकते हैं। सब्जियों की गुणवत्ता और उत्पादन बढ़ाने के लिए तकनीकी जानकारी होना आवश्यक है। सब्जियों की अधिकांश फसलों के बीज बुआई करके पौधशाला में पौद तैयार की जाती है। फिर पौद को खेत में लगाते हैं। पौधशाला में छोटी पौद की देखभाल करने में अधिक आसानी रहती है, क्योंकि पौधशाला में पौद तैयार करने के सभी कार्य आसानी से, कम समय में और कम लागत में हो जाते हैं। पौद की बढ़वार के लिए अनुकूल वातावरण के साथ-साथ खेत की तैयारी के लिए अधिक समय भी मिल जाता है। सब्जियों के उत्पादन में पौधशाला में तैयार पौद की अधिक उपयोगिता है। यदि पौधशाला में तैयार पौद ही बीमार, कमजोर हो तो किसान को सब्जी की फसल का सही लाभ नहीं मिल पाता है। इसलिए आवश्यक है कि पौधशाला में पौद स्वस्थ हो।

इसके लिए सब्जियों में पौधशाला का प्रबंधन किसानों के लिए विशेष उपयोगिता रखता है। पौधशाला प्रबंधन में पौधशाला का चुनाव से लेकर तैयार खेत में पौद रोपाई तक सभी अनेक वैज्ञानिक ढंग सम्मिलित होते हैं।

सब्जियों की नर्सरी के प्रकार

1. ऊपर उठी हुई क्यारियां: वर्षा एवं ठंड के मौसम में पौधे तैयार करने हेतु भूमि से ऊपर उठी हुई क्यारियां बनाते हैं।
2. समतल क्यारियां: गर्मी के मौसम में पौधे तैयार करने हेतु समतल क्यारियां बनाते हैं।

नर्सरी प्रबंधन

सब्जी उत्पादन में सब्जी पौद की बहुत बड़ी भूमिका होती है। यदि पौद स्वस्थ नहीं है, तो इसका फसल पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ता है। नर्सरी में पौद तैयार करना एक कला है। नर्सरी तैयार करने के लिए निम्न कारकों पर समुचित ध्यान देना आवश्यक है।

बीज एवं किस्म का चुनाव: अच्छी किस्म की पौद तभी मिल सकती है, जब अच्छी गुणवत्ता का बीज लगाया जाए। सामान्यतः सब्जी उत्पादन के लिए अपने क्षेत्र के अनुसार ही सब्जी की किस्मों का चुनाव करना बहुत आवश्यक है। किस्म अधिक पैदावार एवं अच्छी गुणवत्ता वाली हो। सब्जियों का शुद्ध व प्रमाणित बीज किसी सरकारी कृषि संस्थान या कृषि विश्व विद्यालय, तराई बीज निगम, राष्ट्रीय बीज निगम या रजिस्टर्ड बीज उत्पादन संस्थानों से ही खरीदना चाहिए क्योंकि इनसे खरीदा गया बीज एवं किस्म आनुवंशिक रूप से शुद्ध होते हैं।

स्थान का चुनाव: पौधशाला के लिए ऐसे स्थान का चुनाव करना चाहिए, जहां पर जल भराव न होता हो। प्रतिवर्ष पौधशाला का स्थान बदल देना चाहिए, जिससे कीट व रोग अधिक न हो पाएं। जहां पर सूरज की रोशनी सही मात्रा में मिलती हो, वहां नर्सरी तैयार करनी चाहिए। पौधशाला के लिए दोमट या बलुई दोमट मिट्टी, जिसका पी.एच. मान 6 से 7 के बीच हो, प्रयोग में लानी चाहिए। पौधशाला में सिंचाई के साधन होने चाहिए। पौधशाला की मिट्टी ऐसी होनी चाहिए, जिसमें कार्बनिक पदार्थ की मात्रा अधिक हो और यह जल अधिक धारण कर सके। जहां पर कम क्षेत्रफल पर फसल उगानी हो, उसके लिए पौद लकड़ी व टिन के बक्सों, गमलों या मिट्टी के बर्तनों में उगाई जा सकती है, लेकिन यह ध्यान रखें कि बर्तनों की गहराई 15 सेमी. से कम नहीं होनी चाहिए।

मृदा उपचार: सब्जियों में जो रोग मृदाजनित है, उनके उपचार के लिए फार्मेल्डिहाईड, क्लोरोपिकरीन, मिथाइल ब्रोमाइड आदि का प्रयोग करते हैं। कवकों व कीटों को मारने के लिए उपचारित मृदा को प्लास्टिक की पॉलीथीन से ढक देना चाहिए, जिससे रसायन से निकलने वाली गैस मृदा के कण-कण में घुस कर कीटों को खत्म कर दे। पौधशाला तैयार करने वाले स्थान पर घास-फूंस जलाकर भी मृदा का उपचार कर सकते हैं।

आकार: गोभीवर्गीय सब्जियों, टमाटर, बैंगन व मिर्च की एक एकड़ फसल के लिए लगभग 100 वर्गमीटर की पौधशाला तथा एक एकड़ प्याज के खेत के लिए 150 से 180 वर्ग मीटर पौधशाला की आवश्यकता होती है। सामान्यतः सब्जियों की पौद नर्सरी में लगभग एक मीटर चौड़ी क्यारियों में उगाई जाती है। खुले में बनी क्यारियों की चौड़ाई इतनी होनी चाहिए कि नर्सरी से घास निकालने एवं पानी देने में कठिनाई न हो।

बीजोपचारः नर्सरी में बीज बोने से पहले बीज को थाइरम नामक कवकनाशी दवा से उपचारित कर लेना चाहिए। बीजोपचार के लिए 2.5 ग्राम दवा/किग्रा. बीज की दर से होनी चाहिए।

बीज की बुआईः नर्सरी की क्यारियों में बीज को छिटक कर नहीं बोना चाहिए बल्कि बीज को पंक्तियों में बोना चाहिए। बीजों को पंक्तियों में क्यारी की चौड़ाई में बनी आकार नालियों में बोना चाहिए तथा बीज के आकार एवं किस्म के अनुसार 5 से 7 सेमी. की दूरी पर बोना चाहिए। अर्थात लाइन से लाइन की दूरी 10-15 सेमी. व बीज से बीज की दूरी 5 सेमी. रखें। बीज को 1-1.5 सेमी. गहराई पर लगाते हैं। ऐसा करने से खरपतवारों को निकालने एवं प्रतिरोपण के लिए पौद निकालने में सुविधा रहती है।

पौधशाला के लिए खाद एवं उर्वरक: पौधशाला की 3 मीटर लंबी क्यारी के लिए 10 किग्रा. सड़ी गोबर की खाद को भूमि तैयारी के समय से 15 से 20 दिन पहले मिट्टी में मिला देना चाहिए। 100 ग्राम यूरिया, 150 ग्राम डाई अमोनियम फॉस्फेट व 120 ग्राम म्यूरेट ऑफ पोटाश प्रति क्यारी की दर से पौधशाला तैयारी के समय मिला देना चाहिए।

पौधशाला की तैयारी

- पौधशाला की मिट्टी को जुताई करके भुरभुरी करलें व पुरानी जड़ों के टुकड़े, खरपतवारों आदि को पूरी तरह निकाल दें।
- पौधशाला की मिट्टी में अच्छी प्रकार से सड़ी हुई गोबर या कंपोस्ट खाद की 40 से 50 किग्रा. मात्रा प्रति 10 वर्ग मीटर की दर से मिला लेना चाहिए।
- पौधशाला में पदगलन रोग की रोकथाम के लिए मिट्टी में कवकनाशी दवाओं जैसे ट्राइकोडर्मा विरडी, सेरेसान या कैप्टाफ आदि को बुआई से पहले मिला देना चाहिए।
- पौधशाला को रोगों से बचाने के लिए फार्मेल्डिहाइड (फार्मलीन) दवा को 25 मि.ली./लीटर जल में घोल कर मृदोपचार करना चाहिए। इसके बाद उपचारित मृदा को एक सप्ताह तक पॉलीथीन से ढक कर रखना परम आवश्यक है। यह उपचार बुआई के 15 दिन पूर्व कर लेना चाहिए।
- पौधशाला में दीमक की रोकथाम के लिए फ्युराडान 3जी दवा क्यारियां बनाते समय मिला दें।
- पौधशाला की क्यारियां मृदा सतह से 15 से 20 सेमी. ऊंची बनानी चाहिए। क्यारी की लंबाई आवश्यकतानुसार, चौड़ाई 50 सेमी. तथा 2 क्यारियों के बीच की दूरी 30 सेमी. रखना उचित होता है।

पौधशाला में बीज की बुआई

- बीज की बुआई सदैव समतल क्यारियों में करनी चाहिए। क्यारी में लकड़ी के डंडे या अंगुली की सहायता से नाली बनाते हुए बीज की बुआई करनी चाहिए।
- यदि बीज का आकार छोटा हो तो बुआई से पहले उसमें बालू मिट्टी मिला लेनी चाहिए।
- पौधशाला में बुआई के बाद गोबर की सड़ी खाद की पतली परत से ढक देना चाहिए।
- छोटी पौद को गर्मी में तेज धूप से, सर्दियों में अधिक ठंड से तथा तेज वर्षा से बचाने के लिए पॉलीथीन की चादर से ढक देना चाहिए।
- नर्सरी में बीजों को बोने से पहले कैप्टान या थीरम से 2.5 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से उपचारित करना चाहिए।
- यदि पौद की बढ़वार कम हो, तो पौद पर यूरिया 0.5 प्रतिशत का घोल बनाकर छिड़काव अवश्य करना चाहिए।
- पौद को कीटों (चैंपा, लीफ माइनर) की रोकथाम के लिए डाइमेथोएट 30 ई.सी. दवा को एक मि.ली./लीटर की दर से जल में मिला कर छिड़काव अवश्य करें।
- पौधशाला में पौद को कीटों से बचाने हेतु नाइलोन की जाली का प्रयोग भी कर सकते हैं।
- पौद को बीमारी से बचाव के लिए 2 ग्राम कार्बेंडाजिम दवा/लीटर जल में मिला कर पौधों की जड़ों को डुबाकर रोपाई करें।
- पौधों की रोपाई से 4 से 5 दिन पहले सिंचाई बंद कर देनी चाहिए। पौद उखाड़ने के 24 घंटे पहले पौधशाला में पानी लगा दें, ताकि जड़ों को कम से कम नुकसान हो।

- रोपाई से पूर्व पौद की जड़ों को जैव उर्वरक के घोल में 15 से 20 मिनट तक डुबोकर रखें।
- पौद की रोपाई शाम के समय करनी चाहिए।

बुआई के बाद नर्सरी की देखभाल: प्रारंभ में पौधशाला को तेज धूप से बचाना चाहिए, जिसके लिए दिन के समय पौधों को हल्की पत्तियों से ढक देना चाहिए। जब पौद थोड़ी बड़ी हो तो उन्हें अधिक धूप एवं कम पानी देकर मोटा और बौना बनाना तथा साथ ही कीटों एवं रोगों से मुक्त रखना चाहिए। पौद को रोग व कीट से मुक्त रखने के लिए 2 ग्राम डाइथेन एम-45 को एक लीटर जल में मिला कर छिड़काव करें। रोगी पौधों की नर्सरी क्यारियों से तुरंत निकाल देना चाहिए। जब नर्सरी में बीज अंकुरित होने लगें तो समय-समय पर सिंचाई करते रहना चाहिए। यदि नर्सरी में पौद घनी हों, तो फालतू पौधे निकाल देने चाहिए तथा नर्सरी को खरपतवार मुक्त रखना चाहिए।

नर्सरी से पौद को निकालना : नर्सरी में जब पौद 10 से 15 सेमी. ऊंची हो जाए एवं उसमें 3 से 4 पत्तियां आ जाएं, तो पौद को नर्सरी से उखाड़ लेना चाहिए।

अधिक लाभ हेतु 'ट्रे' नर्सरी विधि

इस विधि में पौद तैयार करने के लिए प्लास्टिक की खानेदार ट्रे का उपयोग किया जाता है। इसकी कीमत 30 रुपये होती है। सब्जियों की खेती करने वाले किसान ट्रे नर्सरी विधि से पौद तैयार करके लाभ प्राप्त कर सकते हैं। जो लोग सब्जी की खेती नहीं करते, केवल नर्सरी उगाने का व्यवसाय करते हैं, यह विधि उनके लिए बहुत ही लाभप्रद है। एक ट्रे का रख-रखाव सही प्रकार से किया जाए, तो वह 5 वर्ष चल जाती है। अलग-अलग पौद के लिए अलग-अलग खाने वाली ट्रे का प्रयोग करते हैं। ये बाजार में मिल जाती हैं। टमाटर, बैंगन और बेलदार सब्जियों के लिए 18 से 20 घन सेमी. आकार के खाने वाली ट्रे का प्रयोग होता है। इसी प्रकार शिमला मिर्च, मिर्च और फूलगोभी जैसी फसलों के लिए 8 से 10 घन सेमी. आकार के खानों वाली ट्रे का प्रयोग किया जाता है। पौद तैयार करने के लिए कोकोपिट, वर्मीकुलाईट व परलाइट प्रवर्धन माध्यम को 3:1:1 के अनुपात में मिलाया जाता है। इसको जल में गीला करने के बाद ट्रे के खानों में भर दिया जाता है। इसके बाद ट्रे खानों में हल्के गड्ढे बनाए जाते हैं। इन गड्ढों में एक-एक बीज डाल कर गड्ढे को हल्की परत से ढक दिया जाता है। इससे बीजों के अंकुरण के लिए सही नमी मिल जाती है। पौद को तैयार होने में 25 से 30 दिन का समय लगता है। पौद तैयार होने के बाद ट्रे के खानों से बाहर निकालकर रोपाई कर दी जाती है। इस विधि से बेमौसमी पौद भी तैयार की जा सकती है। इससे कम से कम स्थान में अधिक पौद तैयार हो जाती है।

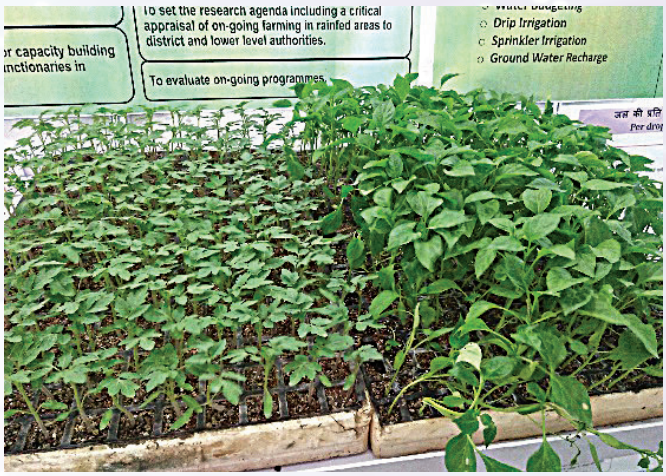

चित्रः ट्रे-विधि से तैयार पौद

ट्रे-नर्सरी व्यवसाय का लेखा-जोखा

लगभग 10 हजार रुपये की पूंजी से एक अच्छी नर्सरी खोली जा सकती है। लगभग 4-5 रुपये तक की लागत से एक पौधा तैयार हो जाता है और बाजार में उस की कीमत कम से कम 15 रुपये मिलती है। आम, अमरूद, लीची, केला एवं कैक्टस आदि के एक पौधे की कीमत 30 से 80 रुपये तक मिल जाती है। इसके अतिरिक्त मौसमी फूल और फलों के बीज और पौधे भी अच्छी आमदनी दे देते हैं।

ट्रे-नर्सरी के लाभ: इस विधि में बे-मौसम सब्जियों की पौद कम जल व कम भूमि में तैयार की जा सकती है। भूमि जनित रोगों से छुटकारा मिलता है तथा पौद को एक स्थान से दूसरे स्थान पर आसानी से ले जाया जा सकता है।

गूटी विधि से तैयार नर्सरी

फलदार पेड़ों की नर्सरी तैयार करने की अनेक विधियां हैं। अलग-अलग पेड़ों को तैयार करने के लिए अलग-अलग विधियों से नर्सरी लगाई जाती है। इन विधियों में बीज द्वारा, कलम द्वारा, ऊतक संवर्धन द्वारा और गूटी विधि से पौद तैयार की जाती है। यदि आपका नींबू, लीची, अनार, माल्टा की उन्नत किस्मों का बाग है तो आप गूटी विधि से नर्सरी का कार्य शुरू कर सकते हैं। इस विधि से अधिक संख्या में पौद तैयार कर सकते हैं। इस विधि के लिए गूटी लगाए जाने वाले पेड़ 5 वर्ष पुराने होने चाहिए।

कैसे बांधे गूटी? : गूटी बांधने का सही समय जुलाई के पहले सप्ताह से अगस्त के अंतिम सप्ताह तक होता है। जिस फलदार पेड़ों की नर्सरी के लिए पौद तैयार करनी है, उसकी स्वस्थ व सीधी टहनियों के 1 या 3 फुट नीचे से चाकू द्वारा चारों ओर 3 इंच की दूरी से छिलके उतार दिए जाते हैं। उतारे हुए छिलके के स्थान पर मॉस, घास, जो हमें नर्सरी के लिए सामान बेचने वाली दुकानों से मिल जाती है, ऊपर लगा कर पॉलीथीन लपेटते हुए सुतली से कस कर बांध देते हैं। कई बार कटे हुए स्थान पर इंडोल ब्यूनटेरिक अम्लस का लेमोलिन में मिला पेस्ट भी लगा सकते हैं। इससे जड़ें अच्छी संख्या में एवं स्वस्थ होती हैं। 5 दिनों के अंदर बांधी गई गूटी में जड़ें निकलने लगती हैं। काटी गई टहनियों को पहले से तैयार किए पॉलीपैक में जिसमें गोबर की खाद, मिट्टी, भूसी व बालू मिलाकर भरा गया हो, मॉस घास के ऊपर की पॉलीथीन हटाकर रोपित कर देना चाहिए। पॉलीथीन में लगाए इन पौधों को क्यारी में रख कर सिंचाई करते रहें। ये पौधे एक महीने में ही बिक्री के लिए तैयार हो जाते हैं। गूटी विधि से तैयार नर्सरी के सूखने का डर नहीं होता है।

नर्सरी तैयार करने के लाभ

- नर्सरी में पौद तैयार करने से बीज का नुकसान कम होता है।
- समय से खरपतवार, कीट व रोग से पौद की सुरक्षा की जा सकती है।
- पौद तैयार करने से खेत तैयारी के लिए अधिक समय मिल जाता है।
- एक छोटे से क्षेत्र में उगी पौद की देख-रेख व रख-रखाव करना आसान रहता है।

भारत में फल एवं सब्जियों के पौधों की मांग लगातार बढ़ रही है। इसी प्रकार सुंदर व खुशबूदार फूलों, सजावटी व तेजी से बढ़ने वाली बेलों की भी मांग बढ़ती जा रही है। अच्छी गुणवत्ता वाले फल, फूल, सब्जियों व सजावटी पौधों को नर्सरी से प्राप्त किया जा सकता है। यही कारण है कि आज नर्सरी भी अच्छी आमदनी का व्यवसाय बन गया है। कहते हैं कि नींव जितनी मजबूत होगी, भवन/बिल्डिंग भी उतनी ही बुलंद होगी। मजबूत और आलीशान भवन में जो भूमिका अच्छी नींव की है, वही भूमिका अच्छे पेड़ और फसल में नर्सरी की होती है। अच्छी नर्सरी ही फसल, बाग या पेड़ का भविष्य तय करती है।

फूल चुन कर एकत्र करने के लिए मत ठहरो। आगे बढ़े चलो, तुम्हारे पथ में फूल निरंतर खिलते रहेंगे।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

भा.कृ.अनु.सं. के खेत तालाबों में मछली पालन द्वारा अतिरिक्त आय सृजन का पहला प्रयास

ग्रेगरी पोलोव[1], मान सिंह[2], मुर्तजा हसन[3], अनिल कुमार मिश्र[4], एस.एस. परिहार[5] और एस.डी. सिंह[6]

[1].शोध छात्र, जल प्रौद्योगिकी केंद्र, [2].परियोजना निदेशक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र, [3].प्रधान वैज्ञानिक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र, [4].प्रधान वैज्ञानिक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र, [5].विशिष्ट वैज्ञानिक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र, [6]अध्यक्ष, सेस्करा

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

सार

प्रस्तुत लेख में किसानों को अपने खेत तालाबों में संचित जल के प्रयोग से न केवल अतिरिक्त आय सृजित करने के एक सफल मॉडल की विस्तृत जानकारी दी जा रही है; वरन खेत पर विविधीकरण के द्वारा जल उत्पादकता में वृद्धि करने की प्राविधियों से भी अवगत कराया गया है। खेत तालाबों में मत्स्य पालन के द्वारा मात्र 8 माह की अल्पावधि में भी कुछ मछलियों की उन्नत प्रजातियों का पालन संभव है। जो बहुत ही कम समय में किसानों की आय दोगुनी करने में पूर्णरूपेण सक्षम है। इस प्राविधि के प्रयोग के द्वारा किसान भाई मात्र आठ माह की अल्प अवधि में प्रति हेक्टेयर 5-6 लाख रुपये की अतिरिक्त आमदनी सुनिश्चित कर सकते हैं। इस शोध के द्वारा यह भी ज्ञात किया जा सका कि उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों में जहां सर्दियों में जल का तापमान बहुत कम हो जाता है (विशेषकर रात्रि में) वहां के तालाबों में भी मत्स्य उत्पादन सफलता पूर्वक संभव है। इस के साथ ही साथ यह भी प्रतिपादित किया जा सका कि खेतों की परिधि पर लगाये जाने वाले ऐसे पर्णपाती वृक्ष जो वर्ष में एक या दो पत्ते गिराते हैं और एक या दो बार फलते हैं; जैसे पीपल, बरगद, बड़, नीम, बबूल और जामुन इत्यादि और जिनके फलों का प्रयोग मनुष्यों द्वारा कम ही किया जाता है; मछलियों के चारे का एक पौष्टिक परंतु शून्य लागत विकल्प भी हो सकते हैं। इस प्रकार यदि किसान भाई चाहें तो लगभग चार पाँच वर्षों के उपरांत; जब खेत तालाबों के किनारे लगाए गए वृक्ष परिपक्व हो जाएंगे, तब लगभग शून्य बजट में अथवा आधे चारे में आठ माह की अवधि में प्रति हेक्टेयर 6-7 लाख रुपये की विशुद्ध अतिरिक्त आमदनी सुनिश्चित कर सकते हैं। यह शोध लेख इस प्रकार की सर्वप्रथम और पूर्णतया प्रायोगिक रूप से परखी हुई, पक्की, विशुद्ध सैद्धांतिक जानकारी एक नवीन गवेषणा, नवोन्मेषी प्राविधि को निरूपित करता है। उत्तर भारत के मैदानी क्षेत्रों सहित देश के अन्य भू-भागों के किसान भाइयों की सहायता के लिए और उन के स्वर्णिम भविष्य के द्वार खोलने के लिए इस शोध कार्य के परिणामों को बृहद रूप से (बड़े पैमाने पर) अपनाना अति आवश्यक और महत्वपूर्ण है।

प्रस्तावना

सन् 2022 तक कृषकों की आय दोगुनी करने की राह में सारे वैज्ञानिक विभिन्न प्रकार की विधियों के प्रयोग से कृषकों की आय को शीघ्रातिशीघ्र दोगुना करने हेतु प्रयासरत हैं। फसलोत्पादन के साथ साथ, मत्स्य पालन, मौन पालन, रेशम कीट पालन एवं औद्यानिक फसल निकायों में कृषि क्षेत्र में त्वरित रूप से आय को दोगुना करने की अपार संभावनाएं हैं। इस के अतिरिक्त नई तकनीकियों के अनुप्रयोगों से फसल विविधीकरण, नवीन प्रौद्योगिकियों को अपनाने, विभिन्न कृषि निकायों जैसे औद्यानिकी, मत्स्यकी, शाकीय फसलों के संरक्षित उत्पादन तथा प्रसंस्करण द्वारा आयवर्धन के लक्ष्यों की त्वरित पूर्ति संभव है। भारत के मुख्य रूप से पूर्वी एवं पूर्वोत्तर क्षेत्रों में अच्छी वर्षा होने के कारण सतह पर जल संरचनाओं की प्रचुरता है। इसी प्रकार से दक्षिण क्षेत्र में भी तालाबों के द्वारा सिंचाई प्राचीन काल से की जाती है। आज कल पुराने क्रियाकलापों के अतिरिक्त खेती हेतु जल संसाधन संरक्षण के कार्यों में तीव्रता लाने तथा मनरेगा जैसी परियोजनाओं के क्रियान्वयन से खेत

तालाबों में जल को संरक्षित करने की प्रविधियां जोर पकड़ रही हैं। खेत तालाबों के संचित जल में मत्स्य उत्पादन की अपार संभावनाएं हैं, जिनसे न केवल फसलों में सिंचाई कर के अधिक उत्पादन लिया जा सकता है, बल्कि खेत तालाबों में वर्ष भर जल संचयन कर के समेकित मत्स्य पालन द्वारा अर्जित आय से खाद्य सुरक्षा सहित अतिरिक्त आय सृजन, रोजगार सृजन इत्यादि से कृषि क्षेत्रों में आय वृद्धि की जा सकती है। यह आलेख इसी अवधारणा को साकार करने का एक प्रयास है। इस लेख में भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के ऐसे ही चार प्रक्षेत्र तालाबों में प्रायोगिक रूप से किये गए परीक्षणों के आधार पर खेत तालाबों के संगृहीत जल से सिंचन और उसी में मत्स्य पालन से होने वाले लाभपरक व्यवसाय की अभिकल्पना को डाटा और तकनीकी के माध्यम से साबित करने का प्रयास किया गया है।

दुनिया भर में सामिष जनसंख्या के उचित पोषण हेतु मछली का प्रयोग सर्वविदित है। मछलियों की उपलब्धता और उनके मांस में पोषक तत्वों में प्रचुरता है और यह सर्वोत्तम सामिष भोजन में से एक है। मछली अपनी प्रजाति विविधता के साथ समुद्र के खारे पानी से लेकर छोटे-छोटे बरसाती गड्ढों में एवं समुद्रतल की अतल गहराइयों से लेकर पर्वतीय नदियों और जलाशयों में समान रूप से पाई जाती है। व्यवसायिक मछली पालन हेतु मछली की प्रजातियों के आधार पर इसके उपयोग को उद्योग का दर्जा प्राप्त है। विभिन्न प्रजातियों की उन्नत मत्स्य उत्पादन हेतु हमारे देश सहित विभिन्न देशों की सरकारें भी अपने-अपने स्तर पर प्रयासरत हैं। भारत के अधिक वर्षा वाले क्षेत्रों में उपलब्ध जल राशियां तो मछली का नैसर्गिक निवास स्थान और अथाह भंडार ही है। अब भारत के किसानों के द्वारा बड़े-बड़े जलाशयों में व्यवसायिक रूप से मछली पालन किया जाने लगा है। इस के अतिरिक्त राजस्व विभाग गाँवों में उपलब्ध जलाशयों की मछली उत्पादन हेतु नीलामी करते रहे हैं। चर्चा का विषय यह है कि खेत तालाब (चित्र 1) में संगृहीत जल में उन्नत मत्स्य कृषि और उन्नत कृषि के द्वारा कैसे उनकी आय में वृद्धि सुनिश्चित की जा सके। इस के विभिन्न सोपानों पर किसानों की बढ़ी हुई आय, खाद्य सुरक्षा से रोजगार सृजन, जल की गुणवत्ता और मछली के पालन में की जाने वाली सावधानियों के बारे के शोध पर आधारित विस्तृत चर्चा की गई है। जिसका पालन करने के जो कृषक भाई मछली पालन करने में इच्छुक हैं और जिनके पास अपने अपने खेत तालाब हैं अथवा जो खेत तालाब खुदवाने में रुचि रखते हैं, उन्हें एक ही वर्ष में अपनी आय दोगुना करने हेतु उन्नत मत्स्य पालन हेतु संपूर्ण जानकारी दी जा रही है, जिसके प्रयोग द्वारा वे न केवल अपनी आय में वृद्धि सुनिश्चित कर सकते हैं वरन अपने और देश के खाद्य और पोषण सुरक्षा में अहम योगदान करने के साथ-साथ किसानों की आय को दोगुना करने में देश के प्रधानमंत्री जी के आह्वान को साकार भी कर सकते हैं।

खेतों पर जल उपलब्धता तथा जल उत्पादकता बढ़ाने के लिए खेत तालाबों की संकल्पना

कृषि क्षेत्रों पर जल उपलब्धता बढ़ाने के लिए खेत तालाब की संकल्पना की गई है, परंतु खेतों पर संगृहीत जल में यदि कृषक बंधु मत्स्य पालन भी कर सकें तो उन्हें संगृहीत जल के प्रयोग से सिंचित कृषि से होने वाली आय से लगभग बराबर अथवा उससे अधिक आय प्राप्त हो सकती है। प्रक्षेत्र आधारित जल संग्रहण तालाबों के जल के सम्यक उपयोग से फसलों की सिंचाई के अतिरिक्त मत्स्य उत्पादन से अतिरिक्त आय प्राप्त की जा सकती है। यह संकल्पना जल प्रौद्योगिकी केंद्र द्वारा भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के प्रायोगिक परीक्षणों से यह सिद्ध की जा चुकी है (चित्र 2)।

चित्र 1: खेत तालाब के संगृहीत जल में उन्नत मत्स्य कृषि और उन्नत कृषि के द्वारा कृषकों की आय में वृद्धि

चित्र 2. भा.कृ.अनु.संस्थान के प्रायोगिक प्रक्षेत्र पर चार प्रक्षेत्र तालाबों में 7 माह की अवधि तक पाली गयी मछलियों पर किये गए शोध कार्य को दर्शाता एक खेत तालाब (इस तालाब में किनारों को टूटने से बचाने हेतु प्लास्टिक शीट का आच्छादन किया गया था, जबकि तली का नहीं)

भा.कृ.अनु.सं. के प्रक्षेत्र पर विभिन्न नलकूपों द्वारा उत्तथापित भू-जल को दो बड़े-बड़े हौजों (उत्तथापित तालाबों, धारिता 2-5 लाख ली. प्रत्येक) में एकत्रित किया जाता है। तत्पश्चात इन तालाबों में एकत्रित जल को नालियों के निकाय द्वारा विभिन्न खेतों में सिंचाई हेतु वितरित किया जाता है। नलकूपों से ला कर जल जब टैंक में गिरता है (चित्र 3) तब इस जल में ऑक्सीजन भी घुल-मिल जाती है। मछली पालन की एक प्रमुख शर्त होती है। इस प्रकार के जल संकलन में यह कार्य अपने आप ही संपादित होता रहता है। सिंचन टैंक रात भर में जल से पुन: भर जाते हैं और दिन में पुन: खाली हो जाते हैं। यह क्रम इसी प्रकार सतत रूप से चलता रहता है, परंतु इस प्रकार इनमें हमेशा कुछ न कुछ जल एकत्रित रहता है, जिसे हम डेड स्टोरेज भी कहते हैं। सन् 2014 में लाइबेरिया से जल विज्ञान एवं तकनीकी संभाग में शिक्षा प्राप्त करने आए हुए एक छात्र श्री ग्रेगरी पोव्लोव, जिनकी रुचि मत्स्य पालन में थी, क्योंकि उन्हें जल विज्ञान संबंधी शोध करने के उपरांत अपने देश वापस जा कर मत्स्य पालन का कार्य करना था और जिन्होंने डॉ. मान सिंह के शीर्ष नेतृत्व में कार्य किया, उनके मस्तिष्क में सर्वप्रथम इस जलाशय के एकत्रित जल में सिंचन-सह-मत्स्य पालन करने का विचार उत्पन्न हुआ। इसी प्रकार दो अन्य तालाब जो आच्छादित कृषि परियोजना के खेत में बनाए गए थे और जिन में एक तालाब को कंक्रीट से आच्छादित किया गया था तथा दूसरे तालाब को प्लास्टिक से आच्छादित किया गया था। इस शोध को पूर्ण करने हेतु प्रयुक्त किये गए ताकि परीक्षणों से प्राप्त परिणामों की परस्पर तुलना की जा सके।

मछली पालन की तैयारी

मछली पालन हेतु ऐसे तालाबों की आवश्यकता होती है जिनके तल कच्चे हों और जिनमें किसी भी प्रकार की लाइनिंग न की गयी हो। यदि बगल की दीवारें भी बिना लाइनिंग की हों तो बहुत अच्छा है क्योंकि फाइटोप्लान्कटन (मछली का नैसर्गिक चारा या भोजन) के उत्पादन के लिए इस प्रकार के तालाबों की बहुत आवश्यकता पड़ती है। मछली पालन आरंभ करने से पहले मिट्टी की जांच करा लेना आवश्यक है। यद्यपि वर्षा जल को तो शुद्ध ही कहा जा सकता है, परंतु वाहजल अथवा रन ऑफ में विभिन्न प्रकार की अशुद्धियों का सम्मिश्रण एवं जल में घुलनशील होने के कारण विभिन्न प्रकार के लवण इसमें पाये जा सकते हैं। उत्पत्ति के आधार पर भू-जल अपेक्षाकृत खारा हो सकता है जिसकी जांच मछली पालकों को कार्य आरंभ करने से पहले किसी सत्यापित प्रयोगशाला से अवश्य करा लेनी चाहिए। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के तालाबों के जल की गुणवत्ता की जांच भारतीय जल प्रौद्योगिकी केंद्र के जल गुणवत्ता निर्धारण

चित्र 3. भा.कृ.अनु.संस्थान के प्रायोगिक प्रक्षेत्र पर प्रक्षेत्र तालाबों में जल के भरने हेतु की गई व्यवस्था तथा निकास नाली द्वारा जल को वितरिकाओं में प्रतिस्थापन मछली की प्रजातियों का चयन

प्रयोगशाला में की गयी थी। चित्र 4 में जल में घुलनशील ऑक्सीजन की माहवार स्थिति दर्शाई गयी है, जिस के आधार पर यह अनुमान लगाया गया कि जल में मछली पालन की संभावना है। इस के साथ-साथ जल का पी.एच. मान भी मछली पालन हेतु उपयुक्त पाया गया था (चित्र 5)।

समेकित मत्स्य पालन हेतु छः प्रकार की मछलियों का चुनाव किया जाता है जैसे; रोहू, कतला, मृगल और तीन प्रकार के कार्प। परंतु इस परीक्षण में पाँच प्रकार की मछलियों का ही प्रयोग किया गया था (म1: सिल्वर कार्प, म2 : कतला कार्प, म3 : लाबिओ कार्प, म4 : ग्रास कार्प, म5 : कामन (साधारण) कार्प)। मछली पालन में चार से छह विभिन्न प्रकार की मछलियों का चुनाव किया जाता है जैसे रोहू, कतला, मृगल, ग्रास कार्प, कामन कार्प व सिल्वेर कार्प। सार्वभौमिक उपयोगिता और मांग को देखते हुए तालापिया नामक प्रजाति भी अपनाई जा सकती है जो अपेक्षाकृत अधिक लाभप्रद मछली की प्रजाति है (चित्र 6) । कुछ विद्वानों का मत है कि यदि उन खाद्य पदार्थों की, जिसकी आवश्यकता मनुष्य को पड़ती है, आपूर्ति मछली उत्पादन हेतु आगतों के रूप में बड़े पैमाने पर की जाने लगे, तो राष्ट्रीय खाद्य सुरक्षा खतरे में पड़ जाएगी, क्योंकि तब धनी मछली उत्पादनकर्ता व्यवसायी अधिक मात्रा में मनुष्य के भोज्य पदार्थ मछलियों के चारे के रूप में करने लगेंगे, जिससे कि आमिष गरीबों के भोजन हेतु उपलब्ध भोज्य पदार्थों में सीधी कमी अथवा भोज्य पदार्थों के उत्पादन में कमी आने की संभावनाएं हैं। परंतु यहाँ यह बात भी दृष्टव्य है कि बहुत ही साधारण खाना खा कर मछलियां उच्च कोटि का भोजन संश्लेषित करती

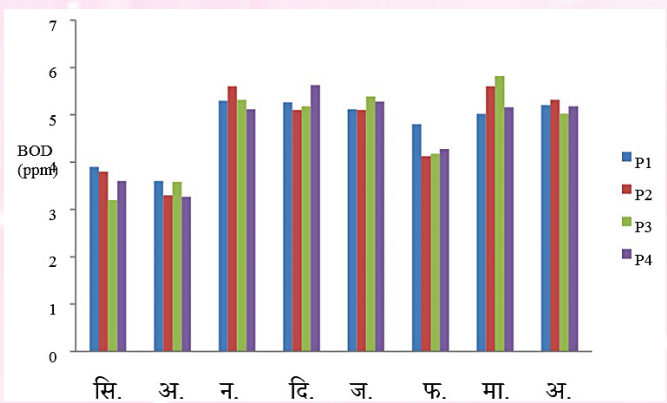

चित्र 4. मछली पालन तालाबों में घुलनशील ऑक्सीजन की स्थिति

हैं और यही संसार के एक बहुत बड़ी जनसंख्या को पोषण सुरक्षा प्रदान करता है।

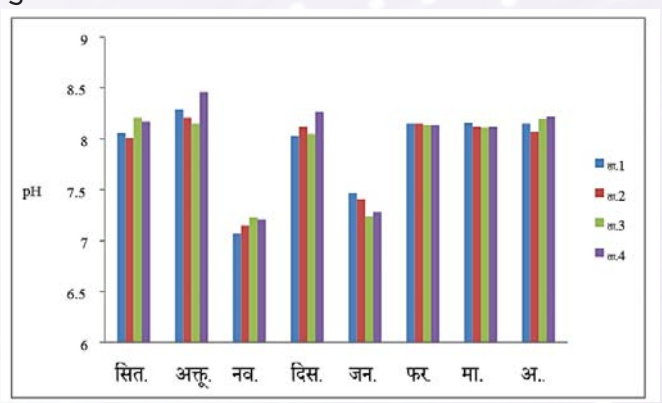

चित्र 5. विभिन्न माह में तालाबों के जल की गुणवत्ता (पी.एच. मान) की स्थिति

चित्र 6: समेकित मत्स्य पालन में पाली जाने वाली विभिन्न प्रकार की मछलियाँ (रोहू, कतला, मृगल, ग्रास कार्प, कामन कार्प, सिल्वेर कार्प)

खेत तालाबों में जल के पुनर्भरण और निष्कासन की व्यवस्था

इस परीक्षण में तालाबों के पुनर्भरण और निष्कासन की व्यवस्था अधिकतम रही क्योंकि तालाबों का जल सिंचाई हेतु निष्कासित किया गया और उसकी पूर्ति हेतु पुन: नलकूपों द्वारा जल का पूरा संवर्धन किया गया। फलस्वरूप जल में घुलनशील ऑक्सीजन की मात्रा में आशातीत वृद्धि परिलक्षित हुई। साथ ही साधारणतया जल में उपलब्ध घुलनशील ऑक्सीजन की मात्रा सामान्य से अधिक पाई गई तथा मछलियों को ऑक्सीजन की अधिक आपूर्ति हुई जिससे मछलियां ज्यादा स्वस्थ बनीं और उनकी बढ़वार ज्यादा अच्छी हुई (चित्र 7) और

स्वस्थ मछली सारे तालाब में घूमती रहती हैं और अधिक चारा खाती हैं जिससे बदवार अच्छी होती है और स्वस्थ मछलियां ज्यादा पैदावार देती हैं, इसके सकारात्मक परिणाम निकाले जा रहे हैं। मछलियों के अच्छे स्वास्थ्य के कारण उनके शरीर के वजन में तीव्रता से वृद्धि देखी गई।

चित्र 7. भा.कृ.अनु. संस्थान के प्रक्षेत्र पर उपलब्ध खेत तालाब में मछली पालन प्रयोग (इस तालाब में किनारों और तली को टूटने से बचाने हेतु सीमेंट कंक्रीट द्वारा आच्छादित किया गया था)। तालाब में जल निस्तारण और जल पुनर्भरण के साथ-साथ ऑक्सीजन अनुमेलित करने की भी व्यवस्था करना अति आवश्यक है।

मछली पालन हेतु अंगुलिकाओं का क्रय, संचालन और तालाबों में छोड़ना

इस परीक्षण हेतु कौन-कौन सी मछली की प्रजातियों के कितनी अंगुलिकाओं की आवश्यकता पड़ेगी यह निर्धारण कर लेने के उपरांत किसी राजपत्रित या सत्यापित मछली बीज उत्पादक से मछलियों की अंगुलिकाओं को लगभग 8000-9000 अंगुलिकाएं प्रति हेक्टेयर के स्टोकिंग डेंसिटी के आधार पर लाना उचित रहता है। मछली के करनाल स्थित फ़ार्म पर से अंगुलिकाओं को खरीद कर प्लास्टिक की थैलियों में भर कर शीघ्रताशीघ्र तालाब तक पहुंचाना अति आवश्यक है। चित्र 8 में फ़ार्म पर अंगुलिकाओं को पैक किया जाते हुए प्रदर्शित किया गया है।

चित्र 8. मछली के करनाल स्थित फ़ार्म पर से अंगुलिकाओं को खरीद कर प्लास्टिक की थैलियों में भर कर शीघ्रताशीघ्र तालाब तक पहुंचाया गया

मछली का आहार और पोषण व्यवस्था

मछली उत्पादन की प्रारंभिक प्रक्रिया

इस परीक्षण में मछलियों के आहार में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिंस और मिनरल्स 275 दिन में तीन से चार बार तक दिया जाता था। मछली के संतुलित आहार को निश्चित सामग्री और अनुपात में बनाया गया था, जो मछली का संतुलित आहार बनाने के लिए सामग्री की मात्रा अनुपात और बनाने की संस्तुत विधि थी तथा विवरण मछली पालकों को विभिन्न स्रोतों से सहज ही उपलब्ध हो सकता है। भोजन की गुणवत्ता अच्छी होनी चाहिए (चित्र 9) तथा मछली पालन हेतु समय-समय पर तालाबों में उपलब्ध जल की गुणवत्ता की जांच करना भी आवश्यक है। कृषि प्रक्षेत्रों पर उपलब्ध तालाबों के जल की गुणवत्ता का निर्धारण करने के लिए प्रयोगशाला में किये गए जल की जांच को चित्र 4 व 5 में प्रदर्शित किया

चित्र 9. मछलियों के संस्तुत आहार को सदा उचित मात्रा में तौल कर प्रति दिन निर्धारित समय पर दिया जाना आवश्यक है।

गया है। पी.एच., बीओडी, ई.सी., ओ.डी. आधारित जल की गुणवत्ता जांच होने के उपरांत भी लगातार तालाब में पाली गई मछलियों के स्वास्थ्य, वृद्धि और भार का मापन और मछली की देखभाल मछली की अंगुली अवस्था से लेकर पूर्ण वयस्क होने तक हर महीने एक निश्चित तारीख को एक डॉक्टर द्वारा यादृच्छिक रूप से 5 या 10 मछलियों का तालाब के विभिन्न भागों से जाल के द्वारा पकड़ कर विभिन्न प्रकार के मापन का कार्य करते रहे और मछलियों के स्वास्थ्य वृद्धि दर और भार का मापन करने के साथ में किसी भी प्रकार के परजीवी संक्रमण से बचाने के लिए उपाय करते रहे।

खेत तालाबों के जल की गुणवत्ता का पालित मछलियों की मासिक विकास दर

मछलियों के शरीर की विकास दर उनकी प्रजाति, भोजन के स्वरुप, भोजन एवं जल की गुणवत्ता तथा जल के तापमान और उसमें उपलब्ध खाद्य पदार्थो की प्रकृति पर निर्भर करती है (चित्र 10)। भा.कृ.अनु.संस्थान, नई दिल्ली स्थित प्रक्षेत्र तालाबों के जल की गुणवत्ता का पालित मछलियों की मासिक विकास दर (शरीर की लंबाई सेंटीमीटर में) अध्ययन के परिणामस्वरुप इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया कि तालाब संख्या 2 और तालाब संख्या 3 की मछलियों की औसत लंबाई अन्य तालाबों की तुलना में श्रेष्ठ थी। इस में जल की गुणवत्ता का महत्वपूर्ण योगदान रहा (सारणी -1)।

चित्र 10. लगभग 5 माह के बाद मछली की बढ़वार की स्थिति

चित्र 11. भा.कृ.अनु. संस्थान के प्रक्षेत्र पर लगभग 275 दिनों की मछलियाँ

***प्रथम माह: सितंबर से आरंभ**

मछली के चारे को मछली के शरीर के वजन के अनुसार तोल कर देना चाहिए। प्रक्षेत्र तालाबों के जल में पालित मछलियों की मासिक शारीरिक विकास दर (शरीर का भार ग्राम में) पाले जाने के बाद विभिन्न महीनों में मछलियों के शरीर की विकास दर (शरीर का भार ग्राम में) प्रमुख रूप से पानी में उत्पन्न शैवालों, उनकी प्रजाति, दिए जाने वाले भोजन की मात्रा तथा बारंबारता, भोजन के स्वरूप तथा गठन, भोजन की पौष्टिकता एवं जल की गुणवत्ता तथा जल के तापमान पर निर्भर थी (चित्र 11)। भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली स्थित प्रक्षेत्र तालाबों के जल की गुणवत्ता का पालित मछलियों की मासिक विकास दर; शरीर के भार में क्रमिक वृद्धि (ग्राम में) के सम्यक अध्ययन के परिणामस्वरुप इस निष्कर्ष पर पहुंचा गया कि तालाब संख्या 3 की मछलियों का औसत भार तालाब संख्या 2 की मछलियों के औसत भार की तुलना में अधिक रहा। (चित्र 12) यद्यपि सभी तालाबों में एक ही भोजन और मात्रा तथा बारंबारता रखी गयी (सारणी-2).

तालाबों की परिधि पर फलदार वृक्षों का मछली के पोषण तथा सकल उत्पादन पर प्रभाव

इस प्रायोगिक परीक्षण के द्वारा यह ज्ञात हुआ कि जिन तालाबों की परिधि पर आम, नीम, महुआ, बरगद या पीपल जैसे पौधे थे (चित्र 13) उनकी मछलियों की वृद्धि दर अपेक्षाकृत अधिक पाई गई है। इसका कारण पतझड़ के मौसम में इन पेड़ों की हरी पत्तियों का पानी में गिर पड़ना था, जिसे मछलियां अपेक्षाकृत बड़े चाव से

सारणी 1 भा.कृ.अनु.संस्थान, नई दिल्ली स्थित प्रक्षेत्र तालाबों के जल की गुणवत्ता में पालित मछलियों की मासिक विकास दर (शरीर की लंबाई सेंटीमीटर में)

तालाब संख्या	मछली का प्रकार	जीरा अवस्था	प्रथम माह*	द्वितीय माह	तृतीय माह	चतुर्थ माह	पंचम माह	षष्टम माह	सप्तम माह (बिक्री हेतु तैयार)
1	10.038	25.122	31.58	35.7	128	184	212.4	269.4	10.038
2	10.026	24.734	32.68	36.52	137.4	194	216.8	312.8	10.026
3	10.04	25.148	32.44	35.72	124.8	149.4	218.4	306.4	10.04
4	10.03	24.188	32.44	34.904	115	131	182	204	10.03

खाती हुई दृष्टिगत हुई। साथ ही गर्मी के मौसम में इन पौधों के फलों को भी चिड़ियों द्वारा कुतरे जाने के उपरांत पानी में गिरता हुआ देखा गया, जिसे खाकर मछलियों ने अपने पोषक खाद्य पदार्थों से अधिक मात्रा में पोषण ग्रहण कर लिया, जिसके कारण उनकी वृद्धि दर में अभूतपूर्व बढ़ोतरी दर्ज की गई। एक अनुमान यह भी लगाया गया कि फल वाले वृक्षों पर आने वाली चिड़ियों के समूह द्वारा की गई बीट, तालाबों में फाइटोप्लांकटन के उत्पादन में सहायक सिद्ध हुई। जिससे तालाब की वनस्पति उत्पादकता में वृद्धि हुई। परिणामस्वरूप मछलियों की सकल उत्पादकता में वृद्धि परिलक्षित की गई। इसका दूसरा आयाम यह भी हो सकता है, कि मछलियों ने चिड़ियों की बीट को ही भोजन के रूप में ग्रहण किया, जिससे उन्हें अधिक पोषण प्राप्त हुआ और मछलियों की वृद्धि प्रभावित हुई है (सारणी 2)। इससे यह निष्कर्ष निकाला गया कि तालाबों की परिधि पर यदि घने अथवा फलदार वृक्ष लगाए जाएं तो मछली के उत्पादन में बिना किसी अतिरिक्त लागत के; लागत से अधिक लाभ स्वतः ही प्राप्त हो जाता है। यह प्राविधि के रूप में अपनाई जा सकने वाली एक बड़ी संस्तुति है।

चित्र 12. विकास अवधि संपूर्ण होने पर मछली का वजन 900-1000 ग्राम होना आवश्यक है

सारणी 2 भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली स्थित प्रक्षेत्र तालाबों में पालित मछलियों की मासिक वृद्धि दर (शरीर का भार ग्राम में)

तालाब संख्या	मछली का प्रकार	जीरा अवस्था	प्रथम माह*	द्वितीय माह	तृतीय माह	चतुर्थ माह	पंचम माह	षष्टम माह	सप्तम माह (बिक्री हेतु तैयार)
1	37.6	168.8	364.6	457.8	563	751.6	953.8	1143.6	37.6
2	39.2	176.2	377	442.6	558.2	839	979.4	1358	39.2
3	37.4	175.4	367.4	383.4	547.8	749.8	976.8	1844	37.4
4	36.8	187.8	355.4	447.6	615.6	751.2	869.8	946.6	36.8

चित्र 13. प्रक्षेत्र तालाबों की परिधि पर फलदार वृक्षों का मछली के पोषण तथा सकल उत्पादन पर प्रभाव

खेत तालाबों पर मछली पालन से आय वृद्धि

प्रक्षेत्र तालाबों का मुख्य कार्य सिंचन हेतु फसलों को जल उपलब्ध करवाना होता है, जिससे किसान भाइयों को मुख्य आय प्राप्त होती है। संचित जल में लगभग 275 दिनों में यदि किसान भाई लागत से अधिक कुछ भी लाभ प्राप्त कर सकेंगे, तो यह उनके लिए बोनस के सामान होगा। तथापि इस परीक्षण में छोटे तालाबों से प्राप्त लाभ का आकलन करने से यह पता चला कि लगभग छः लाख रुपये प्रति हेक्टेयर की अतिरिक्त आय (सारणी 3) प्राप्ति भी संभव है। यदि किसान के पास तालाब उपलब्ध हो और उसके परिवार के लोग मात्र ही कम से कम खर्च पर मछलियों को चारा खिलाने का दायित्व निर्वहन कर सकें। परंतु व्यवहारिक रूप से मतस्य पालन के खर्च की गणना में मछलियों के चारे की कीमत, भूमि का किराया (रुपये 62,500 प्रति हेक्टयेर प्रति वर्ष (जबकि भूमि का खर्च रुपये 25,000 प्रति एकड़ (जैसा इस क्षेत्र में प्रचालित बाजार भाव है) आंका गया है, तथा तालाब बनवाने का खर्च 10 वर्षों की आयु में एक सामान रूप से बांटकर (रुपये 50,000 प्रतिवर्ष), 2 मजदूर प्रतिदिन (रुपये 300 प्रति व्यक्ति प्रतिदिन), जल उत्थापन खर्च रुपये 50,000 प्रति माह तथा रुपये 5000 प्रतिमाह बिजली का खर्च को सकल खर्च में शामिल किया गया है। ऐसी स्थिति में सकल और निवल आय क्रमशः रुपये 8,5,9982.5 तथा रुपये 6,72,735.00 प्राप्त हो सकती है (सारणी 3 तथा 4)।

सारणी 3 भा.कृ.अनु.संस्थान, नई दिल्ली स्थित खेत तालाबों में पालित मछलियों के आय-व्यय का विवरण (सकल लाभ प्रति हेक्टेयर 8000 मछली की स्टोकिंग डेंसिटी के आधार पर अनुमानित)

तालाब संख्या	सप्तम माह (बिक्री हेतु तैयार)	मछली की पैदावार किग्रा. प्रति हेक्टेयर	रुपये 150 प्रति किग्रा. की दर से मछली का मूल्य	प्रति हेक्टेयर तालाब में मछली का मूल्य	मछली पालन का खर्च समग्र पालन काल में#	सकल लाभ/ हानि
तालाब संख्या 1 का औसत	1,143.6	9,148.8	171.54	13,72,320	6,28,980	7,43,340
तालाब संख्या 2 का औसत	1,358	10,864	203.7	16,29,600	7,46,900	8,82,700
तालाब संख्या 3 का औसत	1,844	14,752	276.6	22,128,00	10,14,200	11,98,600
तालाब संख्या 4 का औसत	946.6	7,572.8	141.99	11,35,920	5,20,630	6,15,290
सभी तालाबों का औसत	1,323.05	10,584.4	198.4575	15,87,660	7,27,677.5	8,5,9982.5

नोट: उपर्युक्त गणना में मात्र मछलियों के चारे की कीमत ही खर्च में शामिल की गयी है। इसमें तालाब बनवाने का खर्च यह मान कर नहीं जोड़ा गया है कि किसान के खेत पर तालाब पहले से ही उपलब्ध है।

सारणी 4 भा.कृ.अनु.सं. नई दिल्ली स्थित प्रक्षेत्र तालाबों में पालित मछलियों के आय-व्यय का विवरण (निवल लाभ प्रति हेक्टेयर 8000 मछली की स्टोकिंग डेंसिटी के आधार पर अनुमानित)

तालाब संख्या	मछली पालन का खर्च समग्र पालन काल में	सकल लाभ/हानि	निवल लाभ/ हानि
तालाब संख्या 1 का औसत	6,28,980	7,43,340	4,89,240
तालाब संख्या 2 का औसत	7,46,900	8,82,700	6,28,600
तालाब संख्या 3 का औसत	10,14,200	11,98,600	9,44,500
तालाब संख्या 4 का औसत	5,20,630	6,15,290	3,6,1190
सभी तालाबों का औसत	7,27,677.5	8,5,9982.5	6,72,735

नोट: 1. इस गणना में मछलियों के चारे की कीमत, भूमि का किराया (रुपये 62,500 प्रति हेक्टयेर प्रति वर्ष) तथा तालाब बनवाने का खर्च 10 वर्षों की आयु में एक समान रूप से बांटकर (रुपये 50,000 प्रतिवर्ष), 2 मजदूर प्रतिदिन (रुपये 300 प्रति व्यक्ति प्रतिदिन), जल उत्थापन खर्च रुपये 50,000 प्रति माह तथा रुपये 5000 प्रतिमाह बिजली के खर्च को सकल खर्च में शामिल किया गया है।

2. भूमि का खर्च रुपये 25,000 प्रति एकड़ (जैसा इस क्षेत्र में प्रचालित बाजार भाव है) आंका गया है।

उपसंहार

इस प्रकार हम देखते हैं कि यदि किसान भाई अपने खेत तालाबों में संचित जल में मछली-पालन का व्यवसाय शुरू करें, तो निश्चित ही उनकी आय आने वाले समय में दोगुनी या उससे भी अधिक हो सकेगी। सिंचन-सह-मत्स्य पालन भारतीय कृषि को एक नए आयाम तक ले जाने में सर्वथा सक्षम है। इस प्रणाली में निश्चित रूप से किसानों की आय को दोगुना करने की त्वरित क्षमता है। इस सिंचन-सह-मत्स्य पालन प्रणाली के द्वारा आम के आम गुठलियों के दाम वाली उक्ति भी चरितार्थ होती हुई प्रतीत हुयी है। एकीकृत कृषि प्रणाली की यही विशेषता है कि एक निकाय का अपशिष्ट दूसरे निकाय हेतु आगातों में परिवर्तित हो उठता है। इस प्रकार दूसरे निकाय से प्राप्त अपशिष्ट को किसी तीसरे निकाय के रूप में शून्य शुल्क पर प्रयोग किया जा सकता है। इससे कूड़े के निपटान की समस्याएं भी हल हो जायेंगी। भा.कृ.अनु. संस्थान के जल प्रौद्योगिकी केंद्र द्वारा किए गए शोध के परिणामों से यह सिद्ध होता है कि यदि हम वैज्ञानिक रूप से सभी संसाधनों का समेकित प्रयोग करें और संबंधित निकायों को एकीकृत कृषि प्रणाली का आधार बना सकें, तो प्रक्षेत्रों से होने वाली आय में वृद्धि के साथ-साथ भूमि, जल तथा पर्यावरण की शुद्धि के साथ ही वातावरण में भी आमूलचूल परिवर्तन लाया जा सकता है।

प्रकृति अपरिमित ज्ञान का भंडार है, पत्ते-पत्ते में शिक्षापूर्ण पाठ हैं, परंतु उससे लाभ उठाने के लिए अनुभव आवश्यक है।

- हरिऔध

ब्रोकली लगाएं, अधिकाधिक लाभ कमाएं

श्रवण सिंह, बृज बिहारी शर्मा एवं भोपाल सिंह तोमर

शाकीय विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.पं.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

जब बात स्वास्थ्यवर्धक सब्जियों की हो तो ब्रोकली का नाम विशेष रूप से सामने आता है। इसका मुख्य कारण ब्रोकली की बहुमूल्य उच्च स्तरीय खाद्य और पोषक मानक हैं। यही कारण है कि ब्रोकली विश्व भर में उगाई जाने वाली एक महत्वपूर्ण स्वास्थ्यवर्धक सब्जी है। ब्रोकली में सल्फरयुक्त जैव-सक्रिय यौगिक 'सल्फोरफेन' होता है, जिसमें कैंसर रोधी गुण पाए जाते हैं। इसके पोषक मान को देखें तो इसके 100 प्रति ग्राम ताजा खाद्य भाग में वसा नगण्यो (0.37 ग्राम) एवं ऊर्जा (34 किग्रा. कैलोरी) और शुगर बहुत कम होती है (1.7 ग्राम) हैं जो कि स्वास्थ्य के लिए अच्छी मानी जाती है। एक कप (100 ग्राम) ब्रोकली, 89.2 मिलीग्राम विटामिन सी प्रदान करती है। जोकि सामान्यतः उपयोग में लाए जाने वाले स्रोत नारंगी (53.2 मिलीग्राम) से अधिक होती हैं। यह बीटा-कैरोटीन (623 IU), पोटैशियम (316 मिलीग्राम), विटामिन के (101.6 माइक्रो ग्राम), फोलिक अम्ल (63 माइक्रो ग्राम), मैग्नीशियम (21 मिलीग्राम) एवं जस्ता (0.41 मिलीग्राम) की भी एक अच्छी स्रोत है। यह रेशा (2.6 ग्राम) और प्रोटीन (2.82 ग्राम) भी प्रदान करती है जो स्वास्थ्य के लिए आवश्यक होते हैं। इसमें ग्लुकोराफानिन और ग्लुकोईबेरिन मुख्य ग्लूकोसिनोलेट्स होते है जिनका हमारे स्वास्थ्य पर सकारात्मक प्रभाव होता है।

शहरी क्षेत्रों में ब्रोकली को गृह वाटिका में गमलों में, प्लास्टिक की ट्रे में और पॉलीथीन के थैलों में भी लगा सकते हैं। कुछ वर्ष पूर्व भारत में ब्रोकली एक उच्चवर्गीय उपभोक्ताओं की सब्जी मानी जाती थी लेकिन अब इसका उत्पादन किसान करने लगे हैं जिससे यह जन सामान्य उपभोक्ताओं की पहुंच में आने लगी है। हालांकि अभी भी ब्रोकली की खेती इसकी स्वास्थ्य और आर्थिक महत्व की क्षमता से कम स्तर पर की जाती है। उत्तरी भारत में इसकी खेती सर्दियों में (सितंबर - फरवरी) और पहाड़ी क्षेत्रों में गर्मियों में (अप्रैल - सितंबर) करते हैं। भारत के बाकी हिस्सों में भी ब्रोकली की खेती सर्दियों के महीनों में कर सकते हैं। ब्रोकली की अगेती किस्मों को उन्नत पौधशाला प्रबंधन करके और उठी हुई क्यारियों पर लगा कर अगेती फसल (अक्टूबर - नवंबर) ली जा सकती है जिससे अधिक बाजार भाव मिलता है। अधिक बाजार भाव, अल्प फसल अवधि और मौजूदा फसल प्रणाली में उत्तम समावेश होने के कारण ब्रोकली की लोकप्रियता किसानों में निरंतर बढ़ती जा रही हैं।

ब्रोकली की उन्नत किस्में

भारत में तैयार की गई ब्रोकली की उन्नत किस्में सारणी-1 में दी गई हैं। हमारे यहां हरे रंग के शीर्ष वाली किस्में सबसे अधिक लोकप्रिय हैं। उसके बाद बैंगनी रंग की किस्मों का स्थान आता है। सारणी-1 में दी गई किस्मों के अलावा विभिन्न प्रकार की संकर और सामान्य किस्में भी बाजार में मिलती हैं। भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली ने भी बैंगनी रंग की एक उत्तम लाइन 'पूसा पर्पल ब्रोकली -1' (चित्र-1 और 2) का विकास किया है जिसमें ग्लूकोसिनोलेटस के साथ-साथ एंथोसायनिन भी भरपूर है। इसकी सितंबर से नवंबर तक उचित अंतराल में बुआई करके नवंबर से फरवरी तक कटाई की जा सकती है। इसका रंग पालम विचित्र से ज्यादा गहरा और चटक बैंगनी है (चित्र-3)।

सारणी-1: ब्रोकली की उन्नत किस्में, परिपक्वता की अवधि एवं भार का विवरण

किस्में	बीज का स्रोत	परिपक्वता की अवधि (दिन)	भार (ग्राम)	उपज (कि./हे.)	रंग
पूसा के टी एस- 1	भा. कृ. अनु. स. कटराईं	85-95	250-400	125-150	ठोस हरा
पंजाब ब्रोकली	पंजाब कृषि विश्वविद्या-लय, लुधियाना	65-70	300-400	110-120	हरा
शेर-ए-कश्मीर	शेर-ए-कश्मीर यू. एग्री. सा. टे., कश्मीर	65-70	300-400	100-110	हरा
पालम विचित्रा	हि. प्र. कृ. वि. वि. पाल-मपुर	115-120	600-700	200-220	बैंगनी
पालम समृद्धि	,,	85-90	300-400	120-140	हरा
पालम कंचन	,,	140-145	650-750	250-270	पीला हरा
पालम हरितिका	,,	145-150	600-700	250-270	हरा

चित्र-1 - पूसा पर्पल ब्रोकली -1

चित्र-2 - पूसा पर्पल ब्रोकली -1 का प्रक्षेत्र दृश्

चित्र-3 - पालम विचित्रा

बीज और पौधशाला प्रबंधन

- ब्रोकली के लिए बीज दर सामान्यतः 400-500 ग्राम बीज से तैयार की गई पौध एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में रोपाई हेतु पर्याप्त होती है।
- ब्रोकली की पौधशाला पर्याप्त नमी वाले स्थान पर तैयार करनी चाहिए। उचित जल निकास की व्यवस्था करें। संभव हो तो मृदा जनित रोगों से प्रभावित भूमि में पौधशाला न बनाएं।
- मई महीने में पौधशाला के लिए चयनित भूमि को प्लास्टिक शीट से ढककर भूमि का सौरीकरण

करें। बुआई से एक सप्ताह पहले मिट्टी को केप्टान या थीराम या बॉविस्टिन के 3 ग्रा./ली. पानी के घोल से तर भी करें।

- बुआई के एक सप्ताह पहले 1 किग्रा. ट्राइकोडर्मा विरिडी को 100 किग्रा. गोबर की खाद में मिला कर छायादार जगह पर तैयार करें और इसे नर्सरी की क्यारी में मिलाएं। इससे आर्द्रगलन और मृदा जनित रोगों से बचाव होता है।
- पौद तैयारी के लिए क्यारी 3.0- 5.0 मी. लंबाई में, 45 से.मी. चौड़ाई में तथा 20 - 30 सेमी. उठी हुई बनाएं। एक हेक्टेयर क्षेत्रफल में रोपाई के लिए लगभग 25 से 30 नर्सरी क्यारी पर्याप्त होती हैं।
- प्रत्येक क्यारी में 20-25 किग्रा. सड़ी हुई गोबर की खाद मिलाएं।
- बुआई से पहले बीज को केप्टान या बाविस्टीन 2 ग्रा. या ट्राईकोड्रमा 5 ग्रा. प्रति किग्रा. बीज के दर से उपचारित करें।
- क्यारी पर बुआई पंक्तियों में करें। इससे प्रति इकाई पौद भी अधिक मिलती है। इसके लिए लगभग 25-30 बीज प्रत्येक 5 से 7 सेमी. की दूरी पर 1.5 से 2.0 से.मी. गहरी बनी पंक्ति में समान दूरी पर डालें। सूखी छनी हुई गोबर की खाद में बाविस्टिन 2 ग्राम/किग्रा. मिलाकर पंक्तियों को ढक दें। क्यारी को सूखी घास सें 4 दिन तक ढकें, इससे अंकुरण अच्छा होता है जिसे अंकुरण होने पर हटा दें।
- ब्रोकली की पौधशाला को अधिक तेज बारिश से बचाने के लिए पॉलीशीट से ढकने की व्यवस्था करें।
- पौधशाला की उचित देखभाल करें प्रतिदिन सिंचाई करें और आवश्यकतानुसार खरपतवारों को निकालें। क्यारियों पर 6-7 दिनों के अंतराल में 2-3 बार पंक्तियों के बीच हल्की गुड़ाई करें।
- पौद को सख्त बनाने (हार्डनिंग) हेतु रोपाई के 4-5 दिन पहले सिंचाई एक दिन के अंतराल पर करें।
- रोपाई से पहले पौधों की जड़ों को बॉविस्टिन 2 ग्राम या ट्राइकोडर्मा 10 ग्रा. प्रति लीटर पानी के घोल में 30 मिनट तक डुबाएं जिससे रोपाई के बाद आने वाले जड़ गलन रोग से बचाव होता है।

उन्नत सस्य क्रियाएं

- ब्रोकली भूमि से पौषक तत्वों का अधिक दोहन करती है और इसकी पूर्ति के लिए प्रति हेक्टेयर गोबर की खाद या कंपोस्ट 15-20 टन, नाइट्रोजन 100-125 कि.ग्रा फॉस्फोरस 60-80 किग्रा. और पोटाश 50-60 किग्रा. दें।
- गोबर की खाद या कंपोस्ट की पूरी मात्रा खेत की तैयारी के दौरान प्रथम जुताई (रोपाई से तीन सप्ताह पूर्व) के दौरान भूमि में मिला दें।
- खेत की अंतिम जुताई के समय नाइट्रोजन की आधी मात्रा (60 किग्रा./है. से 28 किग्रा. नाइट्रोजन) तथा फॉस्फोरस (175 किग्रा. डी.ए.पी./है.य 31.5 किग्रा. नाइट्रोजन और 80 किग्रा. फॉस्फोरस) व पोटाश (100 किग्रा. म्यूरेट ऑफ पोटाश/है.) की पूरी मात्रा भूमि में अच्छी तरह से मिला दें।
- शेष नाइट्रोजन को दो बराबर हिस्सों में बांट कर एक हिस्सा रोपाई के एक महीने पश्चात निराई-गुड़ाई के साथ डालें तथा दूसरा हिस्सा शीर्ष बनने की स्थिति में (लगभग 45-50 दिन बाद) मिट्टी चढ़ाते समय मिलाएं।
- पौधों की बढ़वार कम होने की स्थिति में 2-3 बार 15-20 ग्राम यूरिया/लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
- ब्रोकली के शीर्ष में बोरॉन की कमी के कारण भूरेपन की समस्या आती हैं। इससे बचाव के लिए 1.5 से 2.5 किग्रा. बोरेक्स प्रति हेक्टेयर की दर से अन्य उर्वरकों के साथ भूमि की तैयारी के दौरान मिलाएं।
- ब्रोकली की रोपाई के लिए 30-35 दिन की आयु की पौद लें और 15-20 सेमी. उठी हुई मेड़ों पर रोपाई करें।
- पौधों की उत्तम बढ़वार और अधिक पैदावार के

लिए ब्रोकली फसल में उचित अंतराल रखें। इसके लिए पंक्तियों के बीच 45 सेमी. एवं पौधों से पौधों के बीच 45 सेमी. रखें। अधिक बढ़ने वाली किस्में जैसे कि पालम कंचन, पालम विचित्रा और पालम हरीतिका के लिए पंक्तियों के बीच 60 सेमी. एवं पौधों से पौधों के बीच 45-60 सेमी. रखें। प्रति हेक्टेयर 35,000 हजार (60 × 45 सेमी.) से 45 हजार (45 × 45 सेमी.) पौधे लगाए जा सकते हैं।

- ब्रोकली की पौद रोपाई के तुरंत बाद हल्की सिचांई करें। रोपाई उपरांत कुछ पौधे मर जाते हैं या पौधे की कोपल क्षतिग्रस्त हो जाती है। इसलिए आवश्यकतानुसार 7-10 दिन में पुनः रोपण द्वारा खाली जगहों को भरें।
- ब्रोकली फसल की शुरुआती अवस्था में खरपतवार अधिक उगते हैं। इसलिए उनका उचित प्रबंधन करें। इसके लिए रोपाई से एक-दो दिन पहले स्टॉम्प 3.3 लीटर या बेसालीन 2.5 लीटर/हेक्टेयर की दर से छिड़काव कर हल्की सिंचाई करें जो शुरुआती अवस्था में (15-20 दिन) खरपतवारों को रोकती है। इसके बाद 15 दिन के अंतराल पर 2-3 गुड़ाई करें।
- ब्रोकली जलभराव की स्थिति को सहन नहीं कर पाती है इसलिए जल निकास की उचित व्यवस्था अनिवार्य रुप से करें और सिंचाई नियंत्रित मात्रा में ही करें।
- सितंबर से नवंबर तक साप्ताहिक अंतराल पर सिंचाई करें। नवंबर से जनवरी के महीनों में सिंचाई 10-15 दिन के अंतराल पर कर सकते हैं।
- प्लास्टिक या सूखी घास से पलवारना करने से और ड्रिप पद्धति (बूंद-बूंद या टपक सिंचाई) से सिंचाई करने से पौधों की बढ़वार अच्छी होती है और पैदावार भी अधिक होती है।

कटाई और विपणन

- समय रहते उचित आकार के ठोस सघन शीर्षों को डंठल/तना (15-20 सेमी.) के साथ काटें और पत्तियों को हटाकर शीर्षों को रंग, सुगठता व आकार के आधार पर तीन श्रेणियों में छंटाई करें।
- श्रेणीकृत शीर्षों को कार्ड बोर्ड बॉक्स या टोकरियों में बिना दबाव की स्थिति में रखकर बाजार में भेजें। कटाई से एक दिन पहले उचित सिंचाई करें जिससे शीर्ष का भार बढ़ता है और ताजापन बना रहता है।
- ब्रोकली शीर्ष की कटाई उपरांत भंडारण क्षमता सामान्य तापमान (लगभग 13-17° सेल्सियस और 74%) पर कम (2-3 दिन) होती है इसलिए तुरंत विपणन की व्यवस्था करें।
- ब्रोकली फसल एक साथ तैयार नहीं होती है अतः 3-5 दिन के अंतराल पर आवश्यकतानुसार कटाई करें।

पैदावार और आर्थिक लाभ

- अगेती किस्मों की पैदावार (10-15 टन/है.) पछेती किस्मों (20-25 टन/है.) की अपेक्षा कम होती है लेकिन बाजार भाव अधिक होता है इसलिए किसान दोनों समूहों की किस्मों से अच्छी आमदनी ले सकते हैं।
- ब्रोकली की खेती से औसतन 1,00,000 से 1,50,000 रुपये/हेक्टेयर की आय किसानों को मात्र तीन से पाँच महीने में उचित फसल प्रबंधन और उचित बाजार भाव मिलने पर हो सकती है।

प्रमुख रोग एवं कीट प्रबंधन

- पौधशाला में पेंटड बग एक मुख्य कीट है, जिसकी रोकथाम के लिए इमिडाक्लोप्रिड 70, 5 ग्राम/किग्रा. बीज की दर से उपचारित करें।
- कटुआ इल्ली ब्रोकली के पौधों को रात्रिकाल में नुकसान पहुंचाती है। इसके नियंत्रण हेतु डाईमेथोइट 30 ई.सी. 2 मि.ली./ली. पानी में घोल बनाकर छिड़काव करें ।
- हीरक पृष्ठ पतंगा कीट ब्रोकली में 50-60% तक नुकसान पहुंचाता है। स्पाइनोसिड (25 एस.सी.) 3.0 मि.ली./10 लीटर पानी की दर से छिड़काव करें।
- तंबाकु की सुंडी छोटी अवस्था में पत्तों को खुरच

कर खाती है। इसके नियंत्रण हेतु अंडे के समूह को एकत्र कर नष्ट करें एवं मेलाथियान 2.0 मि.ली./ली. या इंडोक्सिकार्ब 14.5 एस. 1-1.5 मि.ली./लीटर के हिसाब से पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

- आर्द्रगलन रोग का प्रकोप नर्सरी अवस्था में अत्यधिक होता है। इसके नियंत्रण हेतु बीजों की बुआई से पूर्व 3 ग्राम थीरम या केप्टान/किग्रा. बीज की दर से बीजोपचार करें।
- काला सड़न रोग के कारण पत्तियों के बाहरी किनारों पर 'V' आकार के हरिमाहीन एवं पानी में भीगे जैसे धब्बे दिखाई देते है। इसके नियंत्रण हेतु स्ट्रेप्टोसाइक्लिन (40 ग्राम) + कॉपर ऑक्सीक्लोराइड (200 ग्राम)/200 ली. पानी में मिलाकर 7-10 दिन के अंतराल पर छिड़काव करें।
- अल्टरनेरिया धब्बा रोग से पत्तियों पर गोल आकार के छोटे से बड़े भूरे वलयाकार धब्बे बन जाते है। अंत में धब्बे काले पड़ जाते है। इसके नियंत्रण हेतु मेंकोजेब 75 wp 2 ग्रा./ली. पानी में मिलाकर छिड़काव करें।

समय परिवर्तन का धन है। परंतु घड़ी उसे केवल परिवर्तन के रूप में दिखाती है, धन के रूप में नहीं।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

कमरख एक लाभ अनेक

विद्या राम सागर एवं जितेंद्र कुमार बैरवा

खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

कमरख का फल देखने में स्टार की तरह दिखाई देता है इसलिए इसे 'स्टार फ्रूट' कहा जाता है। यह फल पकने में हल्के पीले रंग का होता है। प्रत्येक फल की चौड़ाई 6 से 13 मिमी. होती है। इसके फल मुख्य रूप से दो प्रकार के होते हैं, एक खट्टे या तीखे स्वाद वाले और दूसरे मीठे स्वाद वाले होते हैं। इसके स्वाद और औषधीय गुणों के कारण इसे बहुत पसंद किया जाता है। विदेशों में स्टार फ्रूट के जैम और जैली काफी प्रचालित हैं परंतु हमारे देश में इसे कच्चा ही अधिक खाया जाता है। दिल्ली की सड़कों पर तो हर कदम पर आपको ये चाट के ठेलों पर देखने को मिलता है। शकरकंदी की चाट के साथ तो इसका स्वाद गज़ब का होता है।

कमरख में पोषक तत्व

कई प्रकार के स्वास्थ्य लाभ दिलाने वाले इस फल में बहुत से पोषक तत्व होते हैं। इस फल में विटामिन सी, विटामिन ए, विटामिन बी के साथ ही फॉस्फोरस, जिंक, कैल्शियम, मैग्नीशियम, सोडियम, पौटेशियम और लौह की अच्छी मात्रा होती है। इस फल में प्रतिऑक्सीकारक, पॉलीफेनोलिक यौगिकों जैसे क्वार्सेटिन और गैलिक एसिड की उच्च मात्रा होती है।

सारणी 1: कमरख के फलों का पोषक मान

1	फाइबर	10 ग्राम
2	कार्बोहाइड्रेट	9.5 ग्राम
3	रेशा	2.8 ग्राम
4	प्रोटीन	1.04 ग्राम
5	विटामिन ई	0.15 मिलीग्राम
6	लौह	0.08 मिलीग्राम
7	जिंक	0.12 मिलीग्राम
8	शर्करा	3.98 ग्राम
9	कैल्शियम	3 मिलीग्राम
10	पोटैशियम	133 मिलीग्राम
11	विटामिन बी-6	0.017 मिलीग्राम
12	वसा	0.33 ग्राम

फल हमारे बेहतर स्वास्थ्य के लिए बेहद उपयोगी होते हैं। फल का सेवन हमें लंबी आयु के साथ-साथ ख़ूबसूरती भी प्रदान करता है। फल खाने से हमारे शरीर में खनिज और विटामिन की पूर्ती होती है, जो कि हमारे शरीर के अच्छी तरह से काम करने लिए बेहद ज़रूरी होते हैं। रेशेयुक्त फल हमारी पाचन शक्ति को बढ़ाने में सहायता करते हैं। फल खाने से हमें पर्याप्त ऊर्जा भी मिलती है। कमरख हमारे शरीर हेतु निम्न प्रकार से लाभकारी होते हैं।

- **पाचन क्रिया के लिए:** फलों में न केवल महत्वपूर्ण विटामिन और खनिज पाए जाते हैं, बल्कि इनके सेवन से हमारा पाचन तंत्र भी स्वस्थ रहता है। यद्यपि किसी भी प्रकार का फल आपके संपूर्ण स्वास्थ्य के लिए लाभदायक होता है, लेकिन विशिष्ट पोषक तत्वों की अधिक मात्रा वाले फल जैसे कमरख अधिक फायदेमंद हो सकते हैं।
- **बालों के लिए लाभदायक:** स्वस्थ आहार आपके बालों

को मजबूत और चमकदार रहने में सहायता कर सकता है। आप जो खाते हैं वह आपको अपने बाल खोने से भी बचा सकता है। यदि आपको भोजन से कुछ पोषक तत्व नहीं मिल रहे हैं, तो आप अपने बालों में इसका असर देख सकते हैं। इसलिए अपने बालों की सेहत के लिए उपयोगी पोषक तत्व वाले फलों का सेवन करें। बहुत से लोगों को बाल न बढ़ने की समस्या का सामना करना पड़ता है विशेषकर महिलाओं को क्योंकि बालों के विकास के लिए विटामिन बी कॉम्प्लेक्स की जरुरत होती है जिसकी उनके शरीर में कमी हो जाती है जिसकी वजह से उनके बालों के विकास की प्रक्रिया धीमी हो जाती है। कमरख में विटामिन ई कॉम्प्लेक्स की भरपूर मात्रा पाई जाती है जिससे बालों के बढ़ने की प्रक्रिया तेज होती है एवं बाल भी मजबूत होते हैं।

- **एक्जिमा में:** कमरख में ऐसे बहुत से पोषक तत्व होते हैं जो रोगाणुरोधी होते हैं जो एक्जिमा का उपचार करने में हमारी सहायता करते हैं।
- **हृदय रोग में:** कमरख हृदय रोगों से हमारी रक्षा करने में भी सहायता करता है क्योंकि कमरख में विटामिन बी-9 होता है जोकि हृदय रोगों से रक्षा के लिए जरूरी होता है। कमरख में राइबोफ्लेविन, नियासिन, थायमिन, विटामिन ए, बी, बी-5, सी, आदि प्रतिऑक्सीकारक होते हैं जो हमें हृदय रोग से बचाते हैं। आप अपने दिल को स्वस्थ रखने के लिए स्टाबर फल का उपयोग कर सकते हैं। यह आपके दिल को स्वस्थ रखने और कार्यक्षमता को बढ़ाने में सहायक हो सकता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि कमरख फल में पोटैशियम की उच्च मात्रा होने के साथ ही कैल्शियम की मध्यम मात्रा होती है। यह शरीर में उचित रक्तचाप को बनाए रखने में सहायक होते हैं। इसके अलावा इसमें मौजूद अन्य पोषक तत्व रक्तवाहिकाओं को भी स्वस्थ रखते हैं जिनसे रक्त संचरण को सुधारने में मदद मिलती है। इस तरह से स्टार फल का नियमित सेवन आपके दिल को स्वस्थ रख सकता है। यह आपके लिए ऊर्जा दिलाने वाला और हृदय को स्वस्थ रखने वाला आहार हो सकता है।
- **चमकती त्वचा के लिए:** इस फल का सेवन सभी उम्र के लोग कर सकते हैं। कमरख में वे सभी जरुरी पोषक तत्व पाए जाते हैं जो चमकती हुई त्वचा के लिये जरुरी होते हैं जिनमें जस्ता के अतिरिक्त बहुत से खनिज और विटामिन सम्मिलित हैं। इस औषधीय फल में प्रतिऑक्सीकारकों की भी अच्छी मात्रा होती है।
- **भार कम करने में:** बहुत से लोग अपने भार के बढ़ने की समस्या को लेकर काफी परेशान रहते हैं कई वो कुछ करते हैं लेकिन उनका वजन कम नहीं होता, कमरख एक ऐसा फल है जिसका सेवन आपके स्वास्थ्य के लिए लाभदायक ही नहीं बल्कि आपके भार को कम करने में भी फायदेमंद होता है। आप अपने भोजन में कमरख का प्रयोग करके अपने भार को कम कर सकते हैं। एक कमरख में 25 से 30 कैलोरी की कम मात्रा और फाइबर की ज्यादा मात्रा होती है।
- **भूख बढ़ाने में:** जिन लोगों को भूख नहीं लगती उनके लिए कमरख बहुत ही फायदेमंद होता है। आप सुबह-सुबह कमरख का एक गिलास जूस में चीनी मिलाकर भी सेवन कर सकते हैं ऐसे करने से आपको भूख लगनी शुरू हो जाएगी और भूख भी बढ़ जाएगी।
- **कफ, पित्त, रक्त विकार में:** जो लोग धूम्रपान करते हैं या धूम्रपान करने वाले लोगों के आसपास रहते हैं उन्हें अकसर कफ़, पित्त, रक्तविकार की समस्या हो जाती हैं। इस समस्या से सुलझाने के लिए कमरख बहुत ही लाभदायक होता है। इसके लिए आप कमरख को अच्छी तरह से पीस लें। अब इसे धीमी आंच पर एक चौथाई होने तक पकाते रहें। एक चौथाई होने के बाद इसे थोड़ी देर के लिए ठंडा होने दें। ठंडा होने के बाद इसमें सही मात्रा में सेंधा नमक, धनिया, जीरा, आदि को पीसकर उसे मिला दें। इन सबको अच्छी तरह से मिलकर सिरका तैयार कर लें। इस सिरका को रोगी को सुबह-शाम 7 से 10 ग्राम की मात्रा में देने से रक्त विकार, कफ़, पित्त की समस्या दूर हो जाती है।
- **हड्डियां मजबूत करने में:** आप अपनी हड्डियों को

मजबूत करने के लिए स्टार फल का उपयोग कर सकते हैं। इस फल में मैग्नीशियम, लौह, कैल्शियम, जस्ता और फॉस्फोरस की अच्छी मात्रा होती है। ये सभी पोषक तत्व हड्डियों के घनत्व को बढ़ाने और ऑस्टियोपोरोसिस से बचने में आपकी मदद कर सकते हैं। ऑस्टियोपोरोसिस अकसर अधिक उम्र की महिलाओं और पुरुषों में होता है।

- **कोलेस्ट्रॉल को कम करने में:** कमरख में तांबा पाया जाता है जो कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने में हमारी सहायता करता है। दिल को स्वस्थ रखने के लिए स्टार फल फायदेमंद होता है। कमरख फल में प्राकृतिक वसा की मात्रा बहुत ही कम होती है साथ ही इनमें रेशा अधिक मात्रा में होता है। इस तरह से वसा की कम मात्रा आपके शरीर में अतिरक्त वसा को जमा नहीं होने देती है। साथ ही रेशा आपके चयापचय दर को बढ़ाता है जिससे अतिरिक्त वसा का उपयोग कर लिया जाता है। इस तरह से यह आपके शरीर में कोलेस्ट्रॉल के उपयुक्त स्तर को बनाए रखने में सहायक होता है। इसके साथ ही यह शरीर में मौजूद खराब कोलेस्ट्रॉल के स्तर को कम करने और अच्छे कोलेस्ट्रॉल के स्तर को बढ़ाने में मदद कर सकता है। यानी कि दिल का दौरा, स्ट्रोक या कोरोनरी हृदय रोग होने की संभावना को कम किया जा सकता है।
- **ऊर्जा और ताजगी देने में:** आज के व्यस्त जीवन में दिन भर काम करने की वजह से थकान के साथ-साथ आलस्य भी महसूस होता है। कमरख का सेवन आपके शरीर में नई ऊर्जा का संचार और ताजगी का एहसास कराता है। इसके उपयोग हेतु कमरख के फल पर काली मिर्च का पाउडर, चीनी और जीरे का पाउडर डाल लें। अब इसका घोल बनाकर तैयार कर लें। इसका घोल के सेवन से आपके शारीर में एक नई ताजगी और ऊर्जा का संचार होगा जिससे आपका दिल और दिमाग अच्छी तरह से काम कर सकेंगे।
- **रोग प्रतिरोधक क्षमता बढ़ाने में:** लोगों के शरीर में लौह और खनिज लवणों की कमी के कारण रोग प्रतिरोधक क्षमता कम हो जाती है। ऐसे लोगों को कमरख का सेवन करना चाहिए। इसमें विटामिन सी होने की वजह से पोषक तत्वों की मात्रा बढ़ जाती है। इस वजह से यह हमारे शरीर की रोग प्रतिरोधक क्षमता को बढ़ाने में सहायता करता है।
- **माताओं में दूध का प्रसाव बढ़ाने में:** इस फल के फायदे महिलाओं के लिए भी जाने जाते हैं। अकसर बहुत सी महिलाओं को प्रसव के बाद दूध उत्पादन में कमी की समस्या होती है। यह परंपरागत रूप से उन माताओं में दूध उत्पादन क्षमता को बढ़ाने के लिए उपयोग किया जाता है जिससे उनके नवजात शिशुओं को पर्याप्त आहार प्राप्त हो सके। इसके अलावा इस फल का उपयोग उन महिलाओं के लिए भी होते हैं जिनकी अवधि में देरी होती है। इस फल का नियमित सेवन करने से महिलाओं में मासिक धर्म को प्रोत्साहित किया जा सकता है। कमरख का सेवन करने से माताओं के दूध का प्रसाव बढ़ जाता है।
- **मधुमेह में:** अध्ययनों से पता चलता है कि अघुलनशील रेशा ग्लूकोज की मात्रा को नियंत्रित कर सकता है। इस तरह से स्टार फल मधुमेह के प्रभाव और लक्षणों को कम कर सकता है। अघुलनशील रेशा शरीर में इंसुलिन के स्तर को नियंत्रित करने में मदद करता है। इस कारण स्टार फल उन लोगों के लिए आदर्श आहार बन जाता है जो मधुमेह से छुटकारा चाहते हैं। आप भी अपने शरीर में रक्त शर्करा को नियंत्रित करने के लिए स्टार फल के लाभ प्राप्त कर सकते हैं।

स्टार फल

चियाबीज (*साल्विया हिस्पैनिका*): एक पौष्टिक पॉवर हाउस

मोनिका जॉली, वेदा कृष्णन, शैली प्रवीण एवं अर्चना सचदेव,

जैव रसायन संभाग
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

चियाबीज एक प्रमुख पोषण स्रोत है, क्योंकि यह ओमेगा-3 एस, रेशा और प्रोटीन का बहुत अच्छा स्रोत है। इसीलिए हाल ही में चियाबीज लोकप्रिय हो रही है और चर्चा का विषय है। एक वैश्विक सर्वेक्षण के अनुसार, भारत में ओमेगा -3 की कमी का स्तर ऊंचा है। यही कारण है कि हमें इसे अपने आहार में, विशेष रूप से शाकाहारियों को, अपने भोजन में शामिल करने की आवश्यकता है। यह एक लोकप्रिय स्वास्थ्य भोजन बन रहा है, जोकि अपने विशाल उपयोगों के कारण लोकप्रियता प्राप्त कर रहा है।

वानस्पतिक विवरण

चिया (*साल्विया हिस्पैनिका*) एक वार्षिक पौधा है। इसके फूल बैंगनी या सफेद होते हैं और प्रत्येक तने के अंत में एक स्पाइक में कई समूहों में उत्पादित होते हैं। फसल के बाद बीज को यंत्रवत साफ किया जाता है। फूलों, पत्तियों और पौधों के अन्य भागों को हटा दिया जाता है। संपूर्ण चिया का निर्माण एक संपूर्ण चर गति हथौड़ा मिल के माध्यम से किया जाता है। चियाबीज लगभग 1 मिमी (0.039 इंच) के व्यास के साथ छोटे अंडाकार होते हैं। वे भूरे, काले और सफेद रंग के होते हैं। भारतीय किसानों ने सफेद और काले दोनों रंगों के चिया बीज में रुचि ली है। इसके प्राथमिक कारण हैं, उच्च आय, कम खेती लागत तथा पानी की खपत और कीट और जानवरों द्वारा अछूते हुए 90 दिनों की थोड़ी अवधि। सफेद किस्म की कीमत प्रीमियम के रूप में होती है क्योंकि यह भारतीय खाद्य उत्पादों के साथ अच्छी तरह से मिश्रण करती है। चिया को अपने बीज के लिए व्यावसायिक रूप से उगाया जाता है।

मृदा, क्यारी तथा बुआई

चिया की खेती के लिए हल्की-मध्यम मिट्टी या रेतीली मिट्टी की आवश्यकता होती है। पौधे अच्छी तरह से सूखी उपजाऊ मिट्टी में उगते हैं, लेकिन अम्लीय मिट्टी और मध्यम सूखे में भी उगाया जा सकता है। आधुनिक वाणिज्यिक उत्पादन में, प्रति हेक्टेयर (2.5किग्रा./ एकड़) हेतु 6 किग्रा. बीज की आवश्यकता होती है। बीजों को 2-2.5 फीट की दूरी पर पंक्तियों में बोया जाता है।

भारत में चिया को मुख्यत: बंगलुरू, मैसूर (कर्नाटक), आंध्र प्रदेश, तमिलनाडु एवं उत्तर प्रदेश के कुछ क्षेत्रों में उगाया जाता है।

संघटन एवं पौषण मान 100 ग्राम चिया बीज में खनिज, कैल्शियम, लौहा, मैग्नीशियम, मैंगनीज, फॉस्फोरस और जस्ता (सारणी 1) की उच्च मात्रा (48-130% दैनिक मूल्य) होती है। शुष्क चिया के बीज में पोषक तत्व की मात्रा सारणी 1 में दी गई है:

सारणी 1: शुष्क चिया के बीज में पोषक तत्वों की मात्रा

क्र.सं.	पोषक तत्व	प्रतिशत
1	प्रोटीन	91-96%
2	वसा	20-22%
3	कार्बोहाइड्रेट्स	30-35%
4	रेशा	25-41%
5	ऐश	18-30%
6	अपचनीय रेशा	4-6%

आश्चर्यजनक रूप से चिया में दूध की तुलना में छह गुना अधिक कैल्शियम, पालक से छह गुना अधिक लोहे और ब्लूबेरी में पाए गए प्रतिऑक्सीकारक का दोगुना होता है। चिया बीजों में, 25-30% तेल, तेल की वसा की संरचना, जिसमें ओमेगा-3 फैटी अम्ल, एल्फाध-

लिनोलेनिक अम्ल होता है। 55% ω-3, 18% ω-6, 6% ω-9, और 10% संतृप्त वसा होती है। चिया बीज और मछली के तेल में बहुत सारे ओमेगा-3 वसीय अम्ल होते हैं। चिया बीज के एक चम्मच में ओमेगा-3 वसीय अम्ल 720 मिलीग्राम होते हैं। (सारणी 2) जबकि कॉड लिवर तेल के एक चम्मच में 800 मिलीग्राम ओमेगा-3। लेकिन जब हम पौधे के स्रोत के रूप में इसकी तुलना करते हैं, तो इसमें फ्लेक्स बीजों के बाद अधिकतम ओमेगा 3 तेल होता है।

यही कारण है कि हमें अपने आहार में विशेष रूप से शाकाहारियों को चिया बीज अपने भोजन में शामिल करने की आवश्यकता है।

सारणी 2: प्रमुख फसलों में ओमेगा-6 और ओमेगा-3 वसा का अनुपात

स्रोत (25ग्राम)	ओमेगा-3 (ग्राम)	ओमेगा-6 (ग्राम)	ओमेगा-3: ओमेगा-6
चिया	4.90	1.60	3:1
अखरोट	2.50	10.60	1:4.2
काला चावल	0.15	0.19	0.8:1
उड़द दाल	0.60	0.04	14:1
अलसी	6.30	1.60	4:1

आहार में चिया बीज के लाभ

- चिया बीज भूख को कम करते हैं।
- भार प्रबंधन के लिए सहायता करते हैं।
- यह जोड़ों के दर्द (ऑस्टियोपोरोसिस) को रोकता है।
- आंतों का स्वास्थ्य, रक्त शर्करा के स्तर पर नियंत्रण करते हैं।
- कोलेस्ट्रॉल और सेलुलर ऊर्जा की आपूर्ति करते हैं।
- यह हमारी प्रतिरक्षा प्रणाली को मजबूत करता है।

भोजन में चिया बीज के उपयोग

चिया बीज हाइड्रोफिलिक होते हैं, जो भिगोते हुए तरल में 12 गुना अपने भार को अवशोषित करते हैं। भिगोने के दौरान, बीज एक म्यूसीलायजिनस कोटिंग विकसित करता है, जो चिया-आधारित पेय पदार्थों को विशिष्ट जेल बनावट देता है।

चिया बीज उपयोग के तरीके

- **चिया बीज चबाना:** एक व्यस्त दिन में नाश्ते में केवल चिया बीज चबाएं।
- **बीज को भिगोने के बाद पीओ:** पहले पानी या ताजे रस में बीज को भिगोना, शरीर में पचाने के लिए और भी आसान बनाता है। बीजों को भिगोने के बाद आइसक्रीम, चॉकलेट और जैम में उपयोग किया जा सकता है।
- **मिल्कशेक, पुडिंग और पेय में:** अतिरिक्त ऊर्जा के लिए।
- **भोजन पर चिया बीज छिड़कें:** चिया के बीज नाश्ते, टोस्ट या ताजा सलाद पर छिड़क दिया जा सकता है।
- **अंकुरित चिया:** अंकुरित चिया के बीज इसकी विटामिन की मात्रा को बढ़ाते हैं और उन्हें और भी पौष्टिक बना देते हैं।
- **चिया चाय पिएं:** जो एक चिकित्सीय चाय है।
- **चिया ब्रेड और रोटी में**: चिया के बीजों को ब्रेड से मिलाकर खाया जा सकता है।

चिया के मूल्यवर्धित उत्पाद

चिया एक सुपरफूड है जोकि प्रोटीन, रेशे और ओमेगा-3 के साथ पाया जाता है तथा किसानों को उच्च लाभ लेने में सहायता करता है। भारत में चिया के लिए, खेती

की लागत लगभग 15,000/एकड़ है, जबकि सफेद किस्म के लिए पैदावार 3 क्विंटल/एकड़ और काली किस्म के लिए लगभग 5 क्विंटल/एकड़ है। मैसूर के किसानों को सफेद चिया से 22,500, जबकि रागी से लगभग 2,500 रुपये प्रति क्विंटल लाभ मिलता है।

भारत में केंद्रीय खाद्य प्रौद्योगिकी संस्थान, मैसूर द्वारा आइसक्रीम, चॉकलेट और जैम जैसे चिया-मिश्रित उत्पादों को विकसित किए गए हैं, जिनका विभिन्न कंपनियों द्वारा व्यावसायीकरण किया जा रहा है। वहां चिया के साथ एक और सुपरफूड 'क्विनोआ' भी शुरू किया गया है जिसके लिए आंध्र प्रदेश और उत्तर प्रदेश के किसानों की प्रतिक्रिया बहुत अच्छी रही। आशा है कि भारत में यह फ़सल किसानों और सामान्य जनता द्वारा भी स्वीकार की जाएगी।

आपका कोई भी काम महत्वहीन हो सकता है पर महत्वपूर्ण यह है कि आप कुछ करें।

- महात्मा गांधी

माइक्रोग्रीन्स: एक नवीन व पौष्टिक खाद्य विकल्प

ज्ञान प्रकाश मिश्रा[1], अतुल कुमार[2], हर्ष कुमार दीक्षित[1], प्रीति[1] एवं मुरलीधर अस्कि[1]

[1]आनुवंशिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012
[2]बीज-विज्ञान एवं प्रौद्योगिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

'माइक्रोग्रीन्स' एक प्रकार की शाकीय फसल है, जिसका उपयोग पौधों की अत्यंत ही छोटी एवं नाजुक अवस्था अर्थात बीजपत्र तथा एक जोड़े पत्ती की स्थिति में किया जाता है। माइक्रोग्रीन्स की उत्पत्ति 1980 के दशक के प्रारंभ में अमेरिका के सैन फ्रांसिस्को (कैलिफ़ोर्निया) शहर में हुई। यहां के रसोइयों ने रंग, स्वोद, बनावट और रुचि के लिए विभिन्न खाद्य व्यंजनों में इनका उपयोग करना शुरू किया। देखते ही देखते इसका उपयोग बहुत तेजी से दुनिया भर के विभिन्न देशों में होने लगा। आज अमेरिका सहित विश्व के कई देशों में 'माइक्रोग्रीन्स' उद्योग में विभिन्न प्रकार की बीज कंपनियां और उत्पादक शामिल हैं। 'माइक्रोग्रीन्स' 'बेबी-साग या बेबीग्रीन' की तुलना में छोटे होते हैं और 'अंकुरित-बीज' की तुलना में उपयोग योग्य होने में कुछ ज्यादा समय लेते हैं। इनका आकार 1 से 3 इंच (2.5 से 7.6 से.मी.) तक होता है, जिसमें तना और पत्तियां भी शामिल होती हैं। बड़े आकार के पौधों को 'पेटिट ग्रीन्स ' कहा जाता है। ''बेबी ग्रीन्स'' और "माइक्रोग्रीन्स" शब्द मुख्य रूप से विपणन संबंधित हैं, जिनका प्रयोग उनकी संबंधित श्रेणियों का वर्णन करने के लिए किया जाता है।

स्प्राउट्स या अंकुरित-बीज और 'माइक्रोग्रीन्स' समान नहीं होते हैं। स्प्राउट्स सिर्फ पानी में उगते हैं: जबकि, ''माइक्रोग्रीन्स'' मिट्टी में या मिट्टी जैसे किसी माध्यम में सूर्य के प्रकाश या कृत्रिम प्रकाश में उगाए जाते हैं। स्प्राउट्स की तुलना में इनमें स्वास्थ्य-लाभ वाले फाइटोकेमिकल्स भी बहुत अधिक मात्रा में होते हैं। अंकुरित-बीज आमतौर पर किसी भी जाति के पूरे पौधे (जड़, बीज और तना) के रूप में उपयोग किए जाते हैं, जैसे कि बादाम, चना और मूँगफली के स्प्राउट्स। अंकुरण के लिए बीजों को आमतौर पर लगभग आठ घंटे तक पानी में भिगोया जाता है, और फिर निकाला जाता है। अंकुरण के दौरान बीज को उच्च घनत्व के स्तर पर रखा जाता है, तथा नमी के उच्च स्तर के कारण बीज तेजी से अंकुरित होता है। अंकुरण प्रक्रिया अंधेरे या बहुत कम प्रकाश की स्थिति में की जाती है, जो रोगजनक बैक्टीरिया के तेजी से बढ़ने के लिए उपयुक्त होती है। इसके विपरीत, 'माइक्रोग्रीन्स' के बढ़ने के लिए उपयुक्त आदर्श स्थितियां खतरनाक रोगजनकों के विकास को प्रोत्साहित नहीं करती।

पौधों की विभिन्न जातियों की एक विविध श्रेणी को माइक्रोग्रीन्स के रूप में उगाया जाता है, जिनमें कुछ विशेष यौगिक गुण होते हैं। चूंकि इन्हें अपरिपक्व अवस्था में काटा जाता है, इसलिए इनको अधिक उपज हेतु उच्च-घनत्व पर बोया जाता है। एक "माइक्रोग्रीन्स" में एक केंद्रीय तना होता है तथा पत्तियों का विस्तार जब पूरी तरह से हो जाता है तो "माइक्रोग्रीन्स" फसल कटाई के लिए तैयार होती है। कटाई आमतौर पर मिट्टी की सतह से ठीक ऊपर कैंची से की जाती है। अधिकांश माइक्रोग्रीन्स के लिए औसत फसल का समय बीज बोने से लेकर कटाई तक लगभग 07-21 दिन का होता है, हालांकि कुछ को चार से छह सप्ताह भी लग सकते हैं। 'माइक्रोग्रीन्स' की कटाई के बाद इनका उपयोग जल्द से जल्द किया जाना चाहिए नहीं तो वे बहुत तेजी से अपना रंग और स्वाद खो देते हैं।

सामान्य रूप से लगाए जाने वाले माइक्रोग्रीन्स

माइक्रोग्रीन्स को चार मुख्य श्रेणियों में रखा जाता है:

1. **तना एवं लता (शूट और टेंड्रिल) वाले माइक्रोग्रीन्स :** मटर, सूरजमूखी, मकई इत्यादि। इनको अकसर गार्निश के रूप में उपयोग किया जाता है।

2. **मसालेदार माइक्रोग्रीन्स:** मूली, क्रेस और सरसों इत्यादि।
3. **सूक्ष्म जड़ी-बूटियों वाले माइक्रोग्रीन्सस:** सौंफ, खाद्य गुलदाउदी, तुलसी, प्याज इत्यादि।
4. **कोमल माइक्रोग्रीन्स:** लाल गोभी, ब्रोकोली, पालक, बीट (लाल), चौलाई, अजवाइन इत्यादि।

पोषण

यूएसडीए के शोधकर्ताओं ने 2014 में माइक्रोग्रीन्स के पोषण और निधानी आयु से संबंधित, कई अध्ययनों को प्रकाशित किया। इन शोधों में पच्चीस किस्मों का परीक्षण किया गया, जिनमें मुख्य पोषक तत्वों जैसे कि एस्कॉर्बिक अम्ल (विटामिन सी), टोकोफेरोल्स (विटामिन ई), फाइलोक्विनोन (विटामिन के) और बीटा-कैरोटीन (विटामिन ए) तथा अन्य कैरोटीनॉयड को काफी अधिक मात्रा में पाया गया (सारणी 1)। सामान्य तौर पर माइक्रोग्रीन्स में विटामिन और कैरोटीनोयड का उच्च स्तर होता है- जो कि परिपक्व पौधे के समकक्षों की तुलना में लगभग पाँच गुना अधिक होते हैं। इन पौधों में विटामिन, पोषक तत्व, एंटीऑक्सीडेंट व फाइटोन्यूट्रिएंट्स भरपूर मात्रा में होते हैं। न्यूट्रिशन एंड फ़ूड साइंस, यूनिवर्सिटी ऑफ़ मैरीलैंड द्वारा माइक्रोग्रीन्स का पोषण संबंधी अध्ययन 2012 में किया गया, जिसमें परिपक्व सब्जियों की तुलना में माइक्रोग्रीन्स को उच्च पोषण प्रदान करने वाला पाया गया। स्प्राउट्स की तुलना में माइक्रोग्रीन्स का स्वाद काफी अच्छा होता है।

माइक्रोग्रीन्स को विभिन्न प्रकाश व्यवस्था की परिस्थितियों में लगाया जा सकता है, जिसमें अप्रत्यक्ष प्राकृतिक प्रकाश शामिल है। अलग-अलग प्रकाश व्यवस्था की स्थिति में पैदा होने वाले माइक्रोग्रीन्स के स्वाद में अंतर देखा गया है। उदाहरण के लिए, मकई के माइक्रोग्रीन्स अंधेरे में उगने पर मीठे होते हैं, लेकिन अंकुरित पौधों में होने वाली प्रकाश संश्लेषण प्रक्रियाओं के कारण प्रकाश के संपर्क में आने पर कड़वे हो जाते हैं। नाइटशेड समूह के पौधे जैसे कि आलू, टमाटर, बैंगन और काली मिर्च को माइक्रोग्रीन्स के रूप में नहीं उगाया और खाया जाना चाहिए, क्योंकि इनके माइक्रोग्रीन्स में सोलेनिन और ट्रोपेन जैसे जहरीले एल्कलॉएड होते हैं, जो पाचन और तंत्रिका तंत्र में प्रतिकूल प्रभाव पैदा कर सकते हैं।

सारणी 1. माइक्रोग्रीन्स एवं सामान्य सलाद में उपस्थित पोषक तत्वों की मात्रा

फसल	अल्फा-टोकोफ़ेरॉल			बीटा-कैरोटीन		
	माइक्रोग्रीन्स	सामान्य सलाद	गुना वृद्धि	माइक्रोग्रीन्स	सामान्य सलाद	गुना वृद्धि
सेलेरी	18.7	0.27	69.5	5.6	0.022	254.5
धनिया	83.0	2.50	21.2	11.7	0.337	34.7
पालक	14.2	2.03	7.0	5.3	0.469	11.3
कनोला	19.1	0.43	44.4	7.5	0.119	63.0
फसल	**अल्फा-टोकोफ़ेरॉल**			**बीटा-कैरोटीन'**		
	माइक्रोग्रीन्स	सामान्य सलाद	गुना वृद्धि	माइक्रोग्रीन्स	सामान्य सलाद	गुना वृद्धि
सेलेरी	45.8	3.1	14.8	0.029	0.022	1.3
धनिया	40.6	27.0	1.5	0.310	0.025	12.4
पालक	41.6	28.1	1.5	0.483	0.016	30.2
कनोला	45.8	15.0	3.1	0.109	0.016	6.8

*मिग्रा./100 ग्राम ताजा भार

उपयोग

माइक्रोग्रीन्स का उपयोग टॉपिंग, गार्निश, सलाद और कई अन्य व्यंजनों में स्वादवर्धन हेतु किया जाता है। इसे मुख्य रूप से रेस्तरां में व्यंजनों के आकर्षण और स्वाद को बढ़ाने के लिए एक घटक के रूप में उपयोग किया जाता है। इनका उपयोग सलाद में या सूप और सैंडविच गार्निश करने के लिए कर सकते हैं। माइक्रोग्रीन्स के सलाद काफी लोकप्रिय हो रहे हैं तथा इन्हें उगाना और खाने की टेबल पर परोसना भी प्रतिष्ठा-प्रतीक बन रहा है। एक विकसित पौधे की पत्तियों की तुलना में माइक्रोग्रीन्स में लगभग पाँच गुना अधिक पोषक तत्व होते हैं। परिपक्व पौधे की तुलना में माइक्रोग्रीन्स का स्वाद अधिक तेज होता है। माइक्रोग्रीन्स को खानपान में जितना ताजा प्रयोग में लाया जाए, उतना ही बेहतर होता है।

कुछ बहुचर्चित माइक्रोग्रीन्स रेसिपी

1. माइक्रोग्रीन्स - पिज्जा
2. माइक्रोग्रीन्स - बर्गर
3. माइक्रोग्रीन्स - पेस्टो
4. माइक्रोग्रीन्स - सुशी
5. ग्रीन स्मूथी (मटर, बीट और मूली माइक्रोग्रीन्स)
6. ब्रोकोली माइक्रोग्रीन्स सूप
7. माइक्रोग्रीन्स - मैंगो जूस
8. चावल और माइक्रोग्रीन्स सलाद
9. माइक्रोग्रीन्स - स्मोकी फूलगोभी

बाजार

यह दुनिया भर के विभिन्न बड़े शहरों की दुकानों और सुपरमार्केट में उच्च मूल्य के उत्पाद के रूप में बेचे जाते हैं। बाजारों में उन्हें अब साग की एक विशेष श्रेणी का माना जाता है जो सलाद, सूप और सैंडविच को गार्निश करने के लिए मुख्य रूप से प्रयोग में लाया जाता है। माइक्रोग्रीन्स के लोकप्रिय होने से स्वास्थ्य खाद्य उद्योग के साथ-साथ होम गार्डनर्स को एक आला बाजार भी मिल गया है।

कैसे लगाएं?

माइक्रोग्रीन्स को हम अपनी जरूरत के अनुरूप मिट्टी या मिट्टी जैसी सामग्री जैसे पीट में लगा सकते हैं। माइक्रोग्रीन्स को धनिया, सरसों, मूँग, मसूर, तुलसी आदि के बीजों से तैयार किया जा सकता है। एक छोटे गमले या पात्र में करीब 2 इंच मिट्टी या कोकोपीट में इन बीजों को लगा कर हल्का पानी दें। लगभग तीन से चार दिन में इनके अंकुर फूटने लगेंगे और 7-14 दिन में माइक्रोग्रीन्स उपयोग के लिए तैयार हो जाता है। चना, मूँग, मसूर को पहले अंकुरित कर के फिर बुआई करने से इन्हें कम समय में तैयार किया जा सकता है। इसके अलावा धनिया, पुदीना, मूली, गाजर और प्याज के बीज से भी माइक्रोग्रीन्स तैयार किए जा सकते हैं। सामान्यतः माइक्रोग्रीन्स को तैयार करने में किसी भी तरह के रासायनिक उर्वरकों का प्रयोग नहीं किया जाता, इसलिए ये सेहत के लिए काफी लाभदायक होते हैं। माइक्रोग्रीन्स को पूरे वर्ष उगाया जा सकता है और ये 7 से 10 दिन में तैयार हो जाते हैं। इन्हें पानी की भी बहुत कम ज़रूरत होती है।

माइक्रोग्रीन्स के पौधों को अधिक रख-रखाव की जरूरत नहीं होती है तथा कम समय में इनकी देखभाल की जा सकती है। इन्हें जरूरत है तो बस थोड़ी सी धूप, पानी, रोशनी, हल्की मिट्टी और पत्तियों की खाद की। इनमें से कुछ पौधों को कांच की बोतल या छोटे गमलों में भी लगाया जा सकता हैं। दो सप्ताह की अवधि के युवा पौधे यानी माइक्रोग्रीन्स, खासतौर पर फ्लेवर और पोषक तत्वों से भरपूर होते हैं। घर में ग्रीनरी उगाने का शौक रखने वालों के लिये माइक्रोग्रीन्स एक अच्छा विकल्प है। यह एक तो घर में ताज़ा हवा का संचार कर सकते हैं, साथ ही साथ इन माइक्रोग्रीन्स हर्ब्स को घर के खाने में इस्तेमाल किया जा सकता है, खासकर सलाद और मसालों के तौर पर।

अनुसंधान

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के आनुवंशिकी संभाग ने मूँग एवं मसूर के माइक्रोग्रीन्स की पोषक तत्व प्रोफ़ाइल का विभिन्न परिस्थितियों में अध्ययन आरंभ

किया है (चित्र संख्या-1)। मसूर तथा मूँग, एक लेग्युमिनस माइक्रोग्रीन्स है, जिसे सोयाबीन या जौ की तरह लगाया जा सकता है। इसमें प्रोटीन और फाइबर की उत्कृष्ट मात्रा होती है तथा इसे जार या मिट्टी पर लगा सकते हैं। मसूर का बीज थोड़ा बड़ा होता है, तथा बेहतर अंकुरण दर के लिए बीज को कुछ देर (8-12 घंटे) भिगोना बेहतर अंकुरण के लिये अच्छा है। मूँग माइक्रोग्रीन्स के पत्ते लंबे एवं जालीदार होते हैं तथा इसका स्वाद अखरोट जैसा होता है। आमतौर पर, हम मूँग को कांच के जार में हाइड्रोपोनिक रूप से अंकुरित कर सकते हैं, और अंकुरित मूँग को बाद में माइक्रोग्रीन्स के लिए लगाना बहुत आसान हो जाता है। हालाँकि इसे सीधे मिट्टी में भी लगाया जा सकता है, तथा बेहतर अंकुरण दर के लिए इसे रात भर भिगोना बेहतर है। मूँग की माइक्रोग्रीन्स बहुत तेजी से बढ़ती हैं और इसे 7-10 दिनों के भीतर काट लेना चाहिए। मूँग एवं मसूर के माइक्रोग्रीन्स का विवरण सारणी 2 में दिया गया है।

चित्र संख्या 1. उपयोग के लिए तैयार (i) मसूर एवं (ii) मूँग के माइक्रोग्रीन्स

सारणी 2 मूँग एवं मसूर के माइक्रोग्रीन्स का विवरण

नाम	मसूर	मूँग
भिगोना	हां (4-6 घंटे)	हां (8-12 घंटे)
स्वानद	हल्का कड़वा, मटर जैसा स्वाद	हल्का बीन एवं मक्खन जैसा स्वाद
रंग	गहरे हरे रंग के पत्ते, हल्के हरे रंग के तने	बड़ी एवं हरी पत्तियां, हरे रंग का तना, जिसका निचला भाग लाल रंग का होता है।
पोषण	विटामिन (ए, बी, सी, ई), कम वसा, फोलेट, पोटैशियम और प्रोटीन।	विटामिन (ए, बी, सी, ई), फोलेट, पोटैशियम और प्रोटीन।
स्वास्थ्य लाभ	आंख, हड्डी तथा दिल के स्वास्थ्य के लिए अच्छा एवं कैंसर रोधी।	आंख तथा दिल के स्वास्थ्य के लिए अच्छा एवं कैंसर रोधी।
सीडिंग दर (10"X20" ट्रे)	28-30 ग्राम	80-130 ग्राम
अंकुरण की अवधि	2-3 दिन	1-2 दिन
कटाई की अवधि	7-12 दिन	7-9 दिन

ब्रोकोली माइक्रोग्रीन्स की पोषण की गुणवत्ता की जांच के लिए, कम अवधि की नीली रोशनी के प्रभाव को मापने का एक अध्ययन किया गया। जिसमें ब्रोकोली को एलईडी के एक नियंत्रित वातावरण में उगाया गया। कम अवधि की नीली रोशनी ने इसके माइक्रोग्रीन्स की पोषण गुणवत्ता को प्रभावित किया तथा कुछ महत्वपूर्ण पोषक तत्वों की मात्रा में वृद्धि दर्ज की गई।

भंडारण और वाणिज्यिक परिवहन

माइक्रोग्रीन्स की निधानी आयु (4-7 दिन) होती है और वर्तमान में माइक्रोग्रीन्स के भंडारण और परिवहन के बेहतर तरीकों का अध्ययन किया जा रहा है। व्यावसायिक माइक्रोग्रीन्स को अकसर प्लास्टिक के पात्र में संगृहीत किया जाता है, जो इनकी पत्तियों को ऑक्सीजन और कार्बन डाइऑक्साइड का सही संतुलन प्रदान नहीं करता।

निष्कर्ष

चूंकि माइक्रोग्रीन्स को उगाना आसान है और ये लगभग दो सप्ताह में तैयार हो जाते हैं, इसलिए उत्पादक एक वर्ष में दो दर्जन तक फसलों का उत्पादन कर सकते हैं। इतना ही नहीं अधिकांश माइक्रोग्रीन्स को नियंत्रित वातावरण जैसे कि ग्रीन-हाउस या घर के अंदर उगाया जाता है। इसलिए इसमें रोग या कीट जैसी समस्याएं बहुत ही कम होती हैं। हालांकि एक नई फसल के रूप में, माइक्रोग्रीन्स अभी भी तुलनात्मक शैशव अवस्था में है, परंतु विगत कुछ वर्षों में विश्व के विभिन्न संस्थानों में होने वाले वैज्ञानिक शोध ने माइक्रोग्रीन्स में एक सुपर-फूड होने की अपार संभावनाएं पाई गई हैं। ऐसा माना जा रहा है कि आने वाले समय में माइक्रोग्रीन्स भारत सहित विश्व के विभिन्न देशों में अपनी एक पहचान बनाने में सक्षम होगा।

अनुराग, यौवन, रूप या धन से उत्पन्न नहीं होता। अनुराग, अनुराग से उत्पन्न होता है।

- प्रेमचंद

बागवानी फसलों हेतु आधुनिक कृषि उपकरण

रणबीर सिंह एवं राजकुमार

फार्म संचालन सेवा इकाई
भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारत में प्राचीन काल से कृषि अर्थव्यवस्था का मूल आधार रही है। भारतीय कृषि छः आधारभूत स्तंभों जैसे: भूमि, जल, जलवायु, बीज, उपकरण और किसानों की शारीरिक क्षमताओं पर निर्भर करती है। सरकार की नीतियों और किसानों की कड़ी मेहनत का ही परिणाम है कि वर्ष 2016-17 के दौरान देश में 275 मिलियन टन से अधिक खाद्यान्न और लगभग 300 मिलियन टन फलों-सब्जियों का उत्पादन हुआ है। बागवानी फसलों के अंतर्गत फल, सब्जियां, मसाले, मधु, औषधीय एवं सगंधीय पादप कुल कृषित क्षेत्र के लगभग 15 प्रतिशत भाग पर उगाए जाते हैं, परंतु बागवानी फसलें अन्य कृष्य फसलों की तुलना में प्रति इकाई कहीं अधिक आय प्रदान करती हैं। ये खाद्यान्न फसलों की तुलना में न केवल अधिक आय प्रदान करती हैं एवं रोजगारोन्मुखी हैं बल्कि पोषण-सुरक्षा तथा पौष्टिक गुणों के विभिन्न अवयवों को भी पूरा करती हैं। फलों एवं सब्जियों के उत्पादन में भारत, चीन के बाद दूसरे स्थान पर है। भारत में विविध प्रकार की जलवायु होने के कारण यहां पर लगभग सभी प्रकार के ताजे फल और सब्जियों की उपलब्धता होती हैं। इसके फलस्वरूप भारत, दुनिया में ताजा सब्जियों का एक प्रमुख निर्यातक देश है। विगत वर्षों में ताजे एवं प्रसंस्कृत फलों तथा सब्जियों के निर्यात में क्रमशः 14 और 16.27 प्रतिशत की वृद्धि हुई है। शरीर को स्वस्थ रखने के लिए प्रति व्यक्ति प्रतिदिन 90 ग्राम फल तथा 284 ग्राम सब्जी खाने की संस्तुति भारतीय चिकित्सा परिषद ने की है परंतु हमारे देश में प्रति व्यक्ति प्रतिदिन मात्र 55 ग्राम फल एवं 125 ग्राम सब्जी ही उपलब्ध हो पाती है। वर्तमान समय में बागवानी फसलों की खेती में आधुनिक कृषि यंत्रों एवं मशीनों का उपयोग महत्वपूर्ण है। आलू की फसल को छोड़कर अन्य सभी फसलों में यांत्रीकरण का निम्न स्तर है। बागवानी फसलों में उन्नत कृषि यंत्रों द्वारा आज किसान किसी भी कृषि कार्य में होने वाले खर्च, श्रम, ऊर्जा, ईंधन एवं समय की बचत करके अधिक लाभ कमा सकते हैं तथा अधिक उत्पादन प्राप्त कर सकते हैं। आज के परिप्रेक्ष्य में किसानों को बागवानी उत्पादन को जीविकोपार्जन के साथ-साथ व्यवसाय के रूप में भी अपनाने की आवश्यकता है, जिसमें उन्नत कृषि यंत्र अच्छा साथ निभा सकते हैं। आज बागवानी फसलों में कृषि यांत्रीकरण को अपनाने के मुख्य कारणों में मजदूरों की कमी, जनसंख्या वृद्धि, खरपतवारों की वृद्धि और उत्पादन पर व्यय में कमी आदि हैं। बागवानी फसलों से अधिक उत्पादन लेने के लिए यह आवश्यक हो गया है कि सभी कृषि कार्य ट्रैक्टर एवं आधुनिक कृषि यंत्रों द्वारा समय पर पूरे किए जाएं। आज कम समय में कम लागत लगाकर अधिक उत्पादन लेने की आवश्यकता है और यह तभी संभव है, जब बागवानी फसलों का प्रत्येक कार्य उन्नतशील यंत्रों एवं मशीनों द्वारा उचित समय पर उचित ढंग से किया जाए।

बागवानी फसलों में कृषि यांत्रकीकरण की आवश्यकता

हमारे देश में बागवानी फसलों की खेती के कार्यकलापों में कृषि उपकरणों का प्रयोग अधिक प्रचलन में नहीं है क्योंकि आज भी अधिकांश बागवान अपनी छोटी जोतों पर गहन श्रम पर आधारित परंपरागत विधियों से बागवानी करते हैं। अधिकतर बागवान कृषि यांत्रीकरण से होने वाले लाभों से वंचित है तथा उनमें जागरुकता एवं जानकारी का भी अभाव है। इसके अतिरिक्त कृषि उपकरणों की ऊंची कीमतें भी एक अन्य कारक है जिसके कारण यंत्रों की खरीद कम संपन्न किसानों की पहुंच से बाहर है।

बागवानी फसलों हेतु कृषि उपकरण

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद के विभिन्न संस्थानों एवं कृषि विश्वविद्यालयों द्वारा बागवानों की

आवश्यकताओं के अनुसार शरीरिक श्रम, समय एवं लागत को कम करने के लिए विभिन्न प्रकार के कृषि यंत्र, उपकरणों एवं मशीनों का विकास और उन्नयन किया जाता है। इस लेख में हाल में विकसित कुछ ऐसे ही बागवानी से संबंधित उपकरणों के बारे में संक्षिप्त जानकारी देने का प्रयास किया गया है।

सारणी 1 औद्यानिकी फसलों में प्रयोग हेतु उन्नतशील औजार एवं उपकरण

कृषि कार्य	उपकरण
हस्त चालित यंत्र	प्रूनिंग स्केटियर, प्रूनिंग चाकू, थिनिंग कैंची, वीडिंग फोर्क और पौध रोपण यंत्र, हस्त चालित वीडर/कल्टीवेटर, प्रूनिंग आरी, फावड़ा, गार्डन कुदाल, गार्डन रैक, डिगिंग फॉर्क, ग्रास कटर, हस्त चालित पहिए वाला एवं सीडर, उन्नत दरांती आदि।
खेत की तैयारी	पशु एवं ट्रैक्टर चालित हल, कल्टीवेटर, हैरो, रोटावेटर आदि।
भिंडी, मटर, आलू की बुआई/रोपाई	मानव, पशु, ट्रैक्टर एवं स्वचालित बीज बुआई यंत्र तथा न्युमैटिक प्लांवटर।
खरपतवार नियंत्रण (वीडिंग/होइंग)	हस्त चालित खुरपा, फावड़ा, ग्रबर, व्हील हैन्ड हो, कोनोवीडर, पशु चालित वीडर/स्वीप, स्वचालित वीडर, ट्रैक्टर चालित स्वीप, कल्टीवेटर।
छिड़काव/बुरकाव	मानव चालित कम्प्रेशन स्प्रेयर, पैर से चलने वाला, दवा छिड़काव(फुट) स्प्रे-यर, पीठ पर रखकर चलने वाला (नेपसैक) स्प्रेयर, छोटे इंजन से चलने वाला स्प्रेयर एवं डस्टर, हस्त चालित डस्टर, कंट्रोल ड्रापलेट स्प्रेयर आदि।
कटाई एवं चुनाई	मानव चालित चुनाई यंत्र या चाकू, खुरपा, फावड़ा, आलू फसल हेतु पशु/ट्रैक्टर चालित डिगर।
खाद्य प्रसंस्करण	श्रेणीकरण, ग्रेडिंग, पिसाई, जूशर, ड्रायर आदि उपकरण।

अ. हस्त चालित उपकरण

कुदाली, फावड़ा, कुल्हाड़ी, गेंती, खुरपा, सब्बल, चाकू, स्क्रेटियर, प्रूनिंग-आरी वीडर, स्प्रेयर एवं डस्टर, दरांती आदि हस्त चालित औजार किसानों द्वारा पौधशाला एवं सब्जियों को उगाने में प्रयोग किए जाते हैं। इन स्थानीय उपलब्ध औजारों की गुणवत्ता अच्छी नहीं है तथा इनको बदलने की आवश्यकता है। अच्छी गुणवत्ता के विभिन्न प्रकार के हस्त चालित औजार जैसे प्रूनिंग स्केटियर, प्रूनिंग चाकू, थिनिंग कैंची, वीडिंग फॉर्क, और पौध रोपण यंत्र, हस्त चालित वीडर/कल्टीवेटर, प्रूनिंग आरी, फावड़ा, गार्डन कुदाल, गार्डन रैक, डिगिंग फॉर्क, ग्रास कटर, हस्त चालित पहिए वाला कुदाल एवं सीडर, उन्नत दरांती विकसित किए गए हैं। प्रमुख हस्त चालित यंत्रों का विवरण निम्नलिखित है:-

हस्त चालित 'पूसा' क्रिसेन्ट (चंद्राकार) हैन्ड हो: यह भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा विकसित सभी फसलों के लिए सस्ता एवं सरल हस्त चालित औजार है, जिसमें एक लंबी लकड़ी का हैंडिल तथा अर्ध-चंद्राकार लोहे का ब्लेड लगा होता है, (चित्र1)। इस यंत्र द्वारा मनुष्य सीधा खड़ा होकर पंक्तियों में बोई गई सब्जियों में निराई-गुड़ाई एवं खरपतवार का नियंत्रण कर सकता है। इसका भार 02 किग्रा. तथा इसकी कार्यक्षमता 0.08 हेक्टेयर/दिन है।

चित्र 1. हस्त चालित क्रिसेन्ट हो

'सिंह' हस्त चालित गुड़ाई यंत्र (सिंह हैंड हो) : इसमें तीन नोकदार साधारण लोहे के हुक होते हैं, जो एक कोणीय लोहे के टुकड़े पर जुड़े रहते हैं। इन हुकों की शक्ल सर्प के फन के आकार की होती है। कोणीय लोहे की बीच में ऊपर की ओर एक कुल्फीनुमा पाइप जुड़ा रहता है, जिसे सामी कहते हैं। सामी में दो छिद्र होते हैं जिसमें 135 सेमी. लम्बा बांस फिट कर दिया जाता है। बांस को पकड़कर यह प्रयोग में लाया जाता है। इसका वजन 2 किग्रा. एवं खिंचाई 25.3 किग्रा. है (चित्र 2)।

चित्र 2. 'सिंह' हस्त चालित गुड़ाई यंत्र

ब्रश कटर: यह एक आधुनिक कंटाई छंटाई यंत्र है। इसके उपयोग से सीधी खड़ी फसल जैसे-गेहूं, गन्ना आदि की कटाई की जा सकती है। साथ ही अधिक ऊंचे खरपतवार व झाडियां आदि भी काटी जा सकती है। इसमें एक छोटा पॉवर इंजन लगा होता है, जिसे एक मजदूर द्वारा आसानी से संचालित किया जा सकता है। यह कम जोत वाले किसानों के लिए उपयोगी कटाई यंत्र है (चित्र 3)।

चित्र 3. ब्रश कटर

मानव चालित हल एवं सीड ड्रिल: कम क्षेत्रफल या प्रयोगात्मक प्रेक्षत्र में सब्जियों, गेहूं एवं मक्का आदि की बुआई हेतु उन्नत हस्त चालित सीड-ड्रिल का विकास किया गया है। इस यंत्र को बुआई के समय एक आदमी संचालित करता है तथा दूसरा आदमी हाथ से बीज की बुआई करता चलता है (चित्र 4 क व ख)।

(चित्र 4 क व ख)

मानव चालित डिब्बलरः इस हस्त चालित यंत्र का विकास विभिन्न फसलों जैसे गेहूं, चना, मटर, अरहर, मक्का व भिंडी आदि फसलों को छोटे क्षेत्र में बुआई के लिए किया गया है। इस यंत्र से एक बार में 1 से 3 बीज एक साथ गिरते हैं। इसका भार 3 किग्रा. तथा कार्य क्षमता 8-10 हजार वर्ग मीटर प्रतिदिन है। शून्य जुताई एवं फसल अवशेष की उपस्थित में बीज की बुआई के साथ उर्वरक भी आसानी से डाला जा सकता है (चित्र 5)। बीज व उर्वरक उपयोग दक्षता में वृद्धि के साथ-साथ फसल उत्पादन में 20 प्रतिशत तक की वृद्धि होती है। इस यंत्र की कीमत लगभग 2-3 हजार रुपये तक होती है।

चित्र 5. डिब्बलर

हस्त चालित सब्जियों व फूलों की पौद रोपाई यंत्र: यह एक पुरुष/महिला द्वारा चालित बुआई यंत्र है। इस यंत्र

द्वारा एक उचित लाइन में एवं उचित दूरी पर सब्जियों (टमाटर, बैंगन, पत्तागोभी, मिर्च, फूलगोभी, करेला) एवं फूलों (गेंदा) की रोपाई की जा सकती है। रोपाई के लिए पौद को प्रो-ट्रे में तैयार किया जाता है।

चित्र 6 क, ख, गः प्लग प्लान्टर

इस यंत्र द्वारा रोपाई करने में पारंपरिक रोपाई की तुलना में कम समय में अधिक पौद की रोपाई की जा सकती है तथा यह उपयोग में भी सरल है (चित्र 6)। इस को प्रयोग करने में मांसपेशीय विकार तथा शारीरिक थकान में कमी एवं कार्य क्षमता में वृद्धि होती है। किसान बिना झुके पौधे लगा सकते हैं एवं पौधों की रोपाई एक पंक्ति में होती है। इस यंत्र से एक व्यक्ति 7 घंटे में औसतन 5,000 से 7,000 पौधे आसानी से लगा सकता है। इस यंत्र की कीमत 3 हजार रूपए है।

ब. मशीन चालित यंत्र

पॉवर टिलर: औद्यानिकी फसलें लेने वाले तथा कम जोत वाले किसानों के लिए पॉवर टिलर एक बहुपयोगी कृषि यंत्र है। पावर टिलर दो पहियों का मिनी ट्रैक्टर है, जिसके द्वारा छोटे खेतों व बागों में जुताई, निराई-गुड़ाई तथा अन्य कार्य जैसे पंप को चलाना, ट्रॉली द्वारा ढुलाई करना

आदि कार्य किए जा सकते हैं (चित्र 7)। इसके द्वारा वे सभी कृषि कार्य जिनमें सामान्यतः ट्रैक्टर की आवश्यकता होती है, जैसे जुताई, गुड़ाई, सिंचाई, पीड़कनाशी का छिड़काव, थ्रेशर चलाना आदि किए जा सकते हैं। इसमें 5-12 हॉर्स पावर का इंजन लगा होता है। कम वजन वाले पावर टिलर का प्रयोग पर्वतीय क्षेत्रों के लिए सुगम व उपयुक्त है।

ट्रैक्टर चालित वीडर: ट्रैक्टर चालित कल्टीवेटर से भी निराई कार्य अच्छी तरह हो जाता है। परंतु कतारों की दूरी ऐसी होनी चाहिए कि ट्रैक्टर उसमें चल सके। इन यंत्र में 7, 9, 11 या 13 स्प्रिंग लोडिड या रिज्ड टाइनों के साथ खुरपे या स्वीप लगे होते हैं (चित्र 8)। भारतीय मृदाओं के लिए (जैसेः काली मृदाएं) तथा अधिक दूरी पर बोई गई फसलों के लिए ट्रैक्टर चालित वीडर प्रयोग में लाये जाते हैं। इससे मिट्टी भुरभुरी हो जाती है। इसकी कार्य क्षमता 0.50 हे./घंटा है।

चित्र 8. ट्रैक्टर चालित वीडर

बहुउद्देशीय बागवानी हेतु हाइड्रोलिक लिफ्ट प्रणाली: बाग-बगीचों की प्रूनिंग यानि काट-छांट एक बहुत ही आवश्यक, लेकिन कठिन काम है। पेड़ बड़े होने के कारण चोटी तक, किसानों की पहुंच नहीं हो पाती है, जिससे पेड़ों की सही छंटाई नहीं हो पाती है। छंटाई सही नहीं होने से पेड़ों पर नई टहनियों का विकास नहीं हो पाता है। इसका सीधा असर पैदावार पर पड़ता है। नागपुर के संतरे के बाग हो या उत्तर प्रदेश के अमरूद या फिर किसी भी तरह

के फलदार पेड़ों के बाग-बगीचों में समय पर और सही तकनीक से प्रूनिंग न होने के चलते पैदवार पर असर पड़ रहा है। इन सब बातों के अलावा पेड़ों की प्रूनिंग काफी खर्चीली और जोखिम भरा काम भी है। किसान पेड़ों पर चढ़ कर, डालों पर लटक कर सही तकनीक से प्रूनिंग नहीं कर पाते हैं। लेकिन अब इस समस्या के समाधान के लिए आर्चर्ड प्रूनर उपलब्ध है। बाग में बड़े पेड़ों से फल तोड़ने, कटाई, छंटाई, कीटनाशक छिड़काव तथा चंदवा प्रबंधन जैसे कठिन कार्य आसानी से करने के लिए इसका प्रयोग किया जाता है। यह यंत्र 12 एच.पी. इंजन से चलता है तथा इसका भार 200 किग्रा. होता है। "ग्रास ब्लेड्स" कृषि मशीनरी निर्माण कंपनी ने आर्चड प्रूनर बनाएं है, जो 24 से 60 हॉर्सपावर के ट्रैक्टर से चलता है (चित्र 9)।

चित्र 9. बागवानी हेतु हाइड्रोलिक लिफ्ट प्रणाली

बागों हेतु छिड़काव तथा बुरकाव यंत्र: बागवानी फसलों को कीड़ों एवं रोगों से बचाने के लिए छिड़काव एवं भुरकाव यंत्रों का प्रयोग करते हैं। ये यंत्र मनुष्य द्वारा चलाए जाते हैं। इन यंत्रों में हैंड कंप्रेशर स्प्रेयर, पैर से चलाने वाला स्प्रेयर, पीठ पर रखकर लीवर से चलने वाला स्प्रेयर, छोटे इंजन से चलने वाला स्प्रेयर एवं डस्टर, हाथ से चलने वाला डस्टर तथा कंट्रोल ड्रापलेट स्प्रेयर प्रचालित है। ट्रैक्टर चालित स्प्रेयर भी उपलब्ध है तथा प्रयोग में लाए जा रहे हैं। पर्णीय छिड़काव में रसायनों के प्रयोग हेतु ब्लास्ट स्प्रेयर का प्रयोग किया जाता है। तेज हवा की अवस्था में पर्णीय छिड़काव नहीं करना चाहिए। सभी स्प्रेयरों के प्रयोग से 30-50 प्रतिशत रसायनों की बचत होती है। सभी फसलों में विभिन्न तरह के यंत्रों का बड़े पैमाने पर प्रचार-प्रसार करने की आवश्यकता है।

ट्रैक्टर चालित स्प्रेयर: इसका उपयोग बड़े खेतों एवं बागवानी में पीड़कनाशियों को छिड़कने के लिए किया जाता है। दाब उत्पन्न करने के लिए रोटर वेन पंप या टुल्लु पंप लगा होता है जिसे ट्रैक्टर के पी.टी.ओ. शॉफ्ट द्वारा चलाया जाता है। इसमें फ्रेम पर एक पंप, दाबमापी, टंकी, प्रेशर रिलिफ वाल्व, सक्शन एवं निकास नली, बूम तथा समायोज्य फ्रेम (एडजेस्टेबल) नॉजल लगे होते हैं (चित्र 10)। इस फ्रेम को ट्रैक्टर के तीन प्वाइंट लिंकेज से जोड़ा जाता है और इस स्प्रेयर के बूम को आवश्यकतानुसार ऊपर या नीचे किया जा सकता है।

चित्र 10. क एवं खः पावर-चालित स्प्रेयर

यह स्प्रेयर एक या दो 200 लीटर की टंकी या एक 400 लीटर की टंकी के साथ उपलब्ध है। इसका बूम 6.5 लीटर लंबा होता है, जिसमें 12-14 समायोज्य नॉजल लगे होते हैं। सिंगल ड्रम वाले स्प्रेयर का भार 150 किग्रा. तथा डबल ड्रम वाले स्प्रेयर का भार 200 किग्रा. होता है। खड़ी फसल में स्प्रेयर के प्रयोग के लिए ट्रैक्टर चालन के लिए खेतों में समुचित रास्ते का प्रावधान करना आवश्यक है।

ट्रैक्टर चालित लॉन मोअर: यह घास काटने की मशीन है, जिसका प्रयोग लॉन की घास काटने तथा उसे एक समान बनाने के लिए किया जाता है। इसमें एक बेलन होता है, जिस पर कुछ फलक या ब्लेड लगे रहते हैं। चलाने पर बेलन घूमता है तथा उसमें लगे ब्लेड घास को काटते हैं। ब्लेडों को समायोजित करके इच्छानुसार घास की ऊंचाई व निचाई से कटाई की जा सकती है। गृह वाटिका के लिए एक छोटी लॉन मोअर उपयोगी रहती है। ट्रैक्टर चालित मोअर का आकार 1.75 से 2 मीटर होता है। इनकी कार्यक्षमता 2 से 8 हेक्टेयर प्रतिदिन है (चित्र 11)।

चित्र 11. ट्रैक्टर चालित लॉन मोवर

बागवानी फसलों में यांत्रीकरण प्रोत्साहन के उपाय

भारत में बागवानी फसलों में यांत्रीकरण का स्तर बहुत ऊंचा करना है, तो इन फसलों में यांत्रीकरण की दर में वृद्धि हेतु निम्न उपाय करने चाहिए:

1. देश में किसानों के लिए उन्नत एवं अच्छी गुणवत्ता के हस्त चालित औजारों तथा उपकरणों की व्यापारिक उपलब्धता एवं लोकप्रिय बनाने की आवश्यकता है। सभी किसानों के लिए टी.वी., समाचार पत्र में विज्ञापन तथा उपकरणों के प्रदर्शन तथा यंत्रों की उन्नति पर अनुदान दिया जाना चाहिए।
2. विकसित देशों में उपलब्ध उच्च क्षमता, परिशुद्ध उपकरणों का प्रसार-प्रचार करना चाहिए।
3. उच्च तकनीकियों द्वारा सब्जी की खेती के लिए प्रचार-प्रसार करना चाहिए।
4. बागवानी फसलों तथा सब्जी अनुसंधान यांत्रीकरण संगठन की सुविधाओं व उपलब्धता की शुरुआत करनी चाहिए। अखिल भारतीय अनुसंधान परियोजना द्वारा बागवानी फसलों एवं स्थानीय विभिन्न क्षेत्रों में यांत्रीकरण को पहचानने/अनुकूलता विकसित की सही तकनीकी शुरुआत करने की अति-आवश्यकता है।
5. अखिल भारतीय अनुसंधान परियोजनाओं में कटाई उपरांत प्रयोग एवं प्रसंस्करण, पैकेजिंग, रख-रखाव तथा बागवानी उत्पाद परिवहन के सही उपकरण का विकास तथा प्रौद्योगिकी की शुरुआत करनी चाहिए।
6. समय-समय पर मिट्टी पलटने हेतु कस्टम हायरिंग केंद्रों द्वारा मिट्टी पलट यंत्र उपलब्ध कराए जाने चाहिए।
7. उठी हुई क्यारियां बनाने, सटीक रूप से समतल बनाने वाले उपकरण तथा जल उपयोग दक्षता सुधारने हेतु कस्टम हायरिंग केंद्रों द्वारा उपलब्ध कराए जाने चाहिए।
8. सिंचाई जैसे ड्रिप एवं स्प्रिंकलर प्रणाली को प्रोत्साहित किया जाए ताकि ऊर्जा की बचत हो सके और जल का अनुचित उपयोग रोका जा सके।
9. पिछड़ी खेती वाले क्षेत्रों में पशु एवं हस्त चालित उन्नत कृषि यंत्रों को लोकप्रिय बनाने की योजना आरंभ की जानी चाहिए।
10. कृषि यांत्रिकीकरण के विकास में तेजी लाने के लिए विभिन्न प्रकार की कृषि मशीनरी पर विशेष प्रोत्साहन एवं उच्च सब्सिड़ी देनी चाहिए।
11. जब तक बदलाव कि स्थिति गति पकड़े, तब तक अदक्ष यंत्रों के स्थान पर उन्नत यंत्रों का उपयोग करने के लिए वित्तीय प्रोत्साहन दिए जाने चाहिए।

कृषि में मौसम पूर्वानुमान एवं मौसम आधारित सलाह

अनन्ता वशिष्ठ

कृषि भौतिकी संभाग

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली -110012

कृषि उत्पादन, कई कारकों पर निर्भर करता है, जिनमें से मौसमीय कारक प्रमुख हैं। मौसम की विविधता का कृषि कार्यों से काफी गहरा संबंध होता है। फसलों की पैदावार तथा गुणवत्ता पर जलवायु परिवर्तन के कारण कमी पाई गई है। भारत में उगाई जाने वाली फसलों के उत्पादन पर जलवायु परिवर्तन का काफी असर पड़ता है। क्योंकि फसल को अंकुरण से लेकर पकने तक, एक उपयुक्त मौसम की जरूरत पड़ती है। जो कम से कम एक निश्चित अवधि तक होना चाहिए, लेकिन यदि अंकुरण के समय उपयुक्त तापमान नहीं मिला तो अंकुरण ठीक से नहीं होगा, फसल में दाना बनने के दौरान तापमान में अचानक वृद्धि होने से अनाज जल्दी पकने लगता है। अतः दाना बनने की अवधि में कमी आ जाती है जिससे उत्पादन में कमी आती है। साथ ही उत्पादन की गुणवत्ता भी खराब हो जाती है।

किसी भी क्षेत्र का कृषि उत्पादन, उस क्षेत्र के जैविक, भौतिक, सामाजिक व आर्थिक कारकों पर निर्भर करता है। इन सभी उत्पादन के लिए जिम्मेदार कारकों में मौसमी कारकों की भूमिका मुख्य है। मौसमी कारक फसल उत्पादन को दो तिहाई तक प्रभावित कर सकते हैं। किसी प्रकार के कृषि कार्य-कलाप मौसम के प्रति बहुत संवेदनशील होते हैं। किसी भी फसल की पैदावार की मात्रा तथा गुणवत्ता, उसको प्राप्त अनुकूल मौसम पर आधारित करती है। यदि अंकुरित होने से लेकर फसल के कटने तक फसल को उपयुक्त मौसम प्राप्त होता है तो फसल की गुणवत्ता तथा उत्पादकता में बढ़ोतरी होती है। मौसम के अनुसार उचित समय पर उचित कृषि कार्य करने से पैदावार में बढ़ोतरी होती है। मौसम संबंधी जानकारियां कृषि पैदावार की गुणवत्ता तथा मात्रा दोनों को बढ़ाने में तथा पैदावार मूल्य घटाने में सहायक होती हैं।

मौसम पूर्वानुमान

मौसम पूर्वानुमान का अर्थ है - पहले से ही मौसम के बारे में अनुमान लगा लेना। मौसम पूर्वानुमान की सहायता से किसान सिंचाई, खरपतवार नियंत्रण, उर्वरक प्रबंधन, फसल की कटाई-मड़ाई आदि का समुचित प्रबंधन करते हैं। इसके अतिरिक्त मौसम पूर्वानुमान से कृषि संबंधी योजनाओं के निर्धारण में सहायता मिलती है। दूरदर्शन, रेडियो एवं समाचार पत्रों के माध्यम से हमें समय-समय पर मौसम और उसके पूर्वानुमान के विषय में सूचना मिलती रहती है। मौसम का पूर्वानुमान देने में मौसम विशेषज्ञों की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। बाढ़ की संभावना होगी या सूखे की स्थिति होगी, शीतलहर चलेगी अथवा लू / गर्म हवाएं चलेंगी, कोहरा छाया रहेगा या पहाड़ों पर हिमपात होगा, समुद्री लहरें, तूफानी हवाएं, भारी वर्षा, आदि मौसम की जानकारी मौसम विशेषज्ञों द्वारा समय-समय पर दी जाती है। मौसम के क्षेत्रों में जिनेवा स्थित विश्व मौसम विज्ञान संगठन पूरे विश्व में सभी राष्ट्रों के आपसी सहयोग के लिए महत्वपूर्ण कार्य कर रहा है। इसके द्वारा जलवायु परिवर्तन, जलवायु अध्ययन तथा नये अंतरराष्ट्रीय कार्यक्रम भी बनाए जाते हैं। इसकी विशिष्ट मौसम सेवाओं का उपयोग वायुयानों की उड़ानों एवं समुद्री जहाजों की सुरक्षा के अतिरिक्त कृषि के क्षेत्रों में किया जाता है। भारत सरकार का मौसम विज्ञान विभाग, मौसम को लेकर विभिन्न तरह के पूर्वानुमान जैसे दीर्घावधि, मध्यावधि, अल्पावधि और तुरंत पूर्वानुमान जारी करता है। खेती तथा कृषि संबंधी अन्य जरूरतों की पूर्ति हेतु मौसम पूर्वानुमान को मुख्यत: निम्न श्रेणियों में बांटा गया है:

तुरंत: इसमे मौसम का पूर्वानुमान 3-24 घंटे पहले बताया जाता है। यह दिन में दो बार दिया जाता है, इसमें तेज वर्षा, बवंडर, तूफान, ओले पड़ना आदि के बारे में बताया जाता है।

कम अवधि का मौसम पूर्वानुमानः इसका अभिप्राय है कि एक से तीन दिन पहले ही मौसम की भविष्यवाणी करना। इस पूर्वानुमान की गणना भारत मौसम विज्ञान विभाग करता है, जो नई दिल्ली में स्थित है तथा रेडियो एवं दिल्ली दूरदर्शन दूवारा, इसका प्रसारण प्रतिदिन दो बार किया जाता है। इस पूर्वानुमान का मुख्य उद्देश्य, जनता तथा किसान को संभावित मौसम के प्रति जागरूक करना है। अत: यह पूर्वानुमान खेती में कार्य करने की दृष्टि से भी उपयोगी है। इसमें अगले तीन दिनों के लिए वर्षा का वितरण, भारी वर्षा की चेतावनी, दिन व रात का तापमान, गर्मी तथा शीत लहरें, तूफान, आँधी, तेज हवाएं, बर्फ पड़ना, ओला, पश्चिमी गड़बड़ी, उष्ण-कटिबंधीय अवसाद आदि शामिल हैं।

मध्यम अवधि मौसम पूर्वानुमानः इस पूर्वानुमान का उद्देश्य 3 से 10 दिन पूर्व मौसम की सही जानकारी का अनुमान लगाना है। इस जानकारी की सही गणना करने हेतु भारत सरकार के पृथ्वी विज्ञान मंत्रालय द्वारा राष्ट्रीय मध्यम अवधि मौसम पूर्वानुमान केंद्र बनाया गया तथा इस केंद्र का मुख्य उद्देश्य देश के 130 कृषि जलवायु क्षेत्रों के लिए 5 दिन पूर्व मौसम की सही जानकारी का अनुमान लगाना है तथा अभी तक लगभग 130 क्षेत्रों में इस जानकारी की गणना सफलतापूर्वक की जा रही है। इसके अंतर्गत मौसम के विभिन्न तत्वों का पूर्वानुमान प्रत्येक मंगलवार व शुक्रवार को सप्ताह के पहले पाँच दिनों के लिए लिया जाता है तथा इसी अनुमान के आधार पर किसान भाइयों को खेतों में खड़ी विभिन फसलों के लिए सुझाव, कृषि कार्यकलाप एवं पशुओं के भरण पोषण एवं संभावित बीमारियों एवं उनके उपचार संबंधी जानकारी दी जाती है। इन सेवाओं के अंतर्गत मौसम का पूर्वानुमान एवं खेत की तैयारी से बुआई एवं फसल की कटाई तक की प्रति सप्ताह किए जाने वाले कृषि-कार्यों की जानकारी जिसमें फसलों की विभिन प्रजातियों के नाम, जल एवं मृदा प्रबंध, खाद एवं बीज की मात्रा, ख़रपतवार नियंत्रण, कीट एवं संभावित बीमारियां पहचानने के लक्षण एवं निदान संबंधी नवीनतम जानकारी प्रदान की जाती है।

दीर्घकालीन मौसम पूर्वानुमानः इस मौसम पूर्वानुमान का उद्देश्य 10 दिन से ज़्यादा यानि एक महीना पूर्व अवधि या एक फसल अवधि के लिए वर्षा तथा वर्षा के वितरण का पूर्वानुमान लगाना है। इस अनुमान की सूचना प्रतिवर्ष अप्रैल माह के दूसरे सप्ताह तक ली जाती है। इस पूर्वानुमान का खेती के लिए बहुत महत्व है। इस पूर्वानुमान के आधार पर किसान भाई अपनी जमीन के क्षेत्रफल को जल एवं आर्थिक परिस्थितियों को ध्यान में रखकर विभिन्न फसलों के लिए आबंटन कर सकते हैं, जिससे संसाधनों की कमी न होने पर तथा खेती में सभी क्रियाएं समय से की जाएं, जिससे खेती से भरपूर पैदावार प्राप्त किया जा सके। यह पूर्वानुमान, भारत सरकार का मौसम विभाग सफलतापूर्वक कर रहा है, जिसमें देश की विभिन्न जलवायु उपखंडों के लिए वर्षा सामान्य, सामान्य से कम या अधिक होने का अनुमान प्रत्येक वर्ष लगाया जाता है।

कृषि के लिए मौसम पूर्वानुमान निम्न पहलू पर आवश्यक है:

- **तापमान :** अधिक तापमान, न्यूनतम तापमान, गर्म तथा शीत लहरें।
- **वर्षा :** वर्षा आने का समय, वर्षा की तीव्रता तथा वर्षा की अवधि।
- **हवा :** हवा की गति तथा दिशा।
- सूरज का प्रकाश।
- प्रकाशीय तथा बादलीय घंटे।
- वाष्पीकारण की दर।
- पाला, ओला तथा तूफान।

इन मौसमीय तत्वों की जानकारी के आधार पर किसान विभिन्न कृषि कलाप उपयुक्त समय एवं विधि से कर सकते हैं। जैसे बुआई करने अथवा रोकने का कार्य, उर्वरक डालने अथवा रोकने का कार्य, कीटनाशक छिड़काव करने अथवा रोकने का कार्य, पाले से बचाव का कार्य, कृषि कार्य कलापों का प्रबंधन, कटाई का कार्य शुरू करना या नहीं, खाद्यान्न का परिवहन तथा भंडारण का कार्य इत्यादि कर सकते हैं। मौसम के पूर्वानुमान के उपयोग

से फसल उत्पादन में हुई कमी को कम किया जा सकता है। मौसम पूर्वानुमान तथा फसल की मौजूदा स्थिति को ध्यान में रखते हुए विशेषज्ञों की राय से असामान्य एवं प्रतिकूल आपदाओं से बचने के उपाय किए जा सकते हैं।

मौसम पूर्वानुमान की फसल प्रबंधन में उपयोगिता

- फसलों को सबसे ज्यादा क्षति सूखे से होती है। भारतीय कृषि मानसून पर निर्भर है तथा मानसून में देरी या विफलता के कारण खरीफ के मौसम में सूखा हो जाता है। यदि हमें मानसून के आने तथा इसके सामान्य रहने की जानकारी का पूर्वानुमान हो, तो हमें खरीफ फसलों की बुआई सही समय पर आरंभ कर सकते हैं। यदि मानसून की शुरूआत में देरी या विफलता आती है, तो इस स्थिति में बुआई तथा रोपाई में देरी की जा सकती है। मानसून में ज्यादा देरी होने से कम अवधि में तैयार होने वाली धान की किस्में लगाई जा सकती हैं। जल्दी तथा मध्य सूखे के लिए मौजूदा फसलों को छोड़ दिया जाता है तथा कम समय एवं कम पानी की आवश्यकता वाली फसलें जैसे बाजरा या दलहनी फसलों को लगाया जा सकता है। इसके अलावा मध्य समय पर आने वाले सूखे के लिए भंडारित किए गए पानी से उपयुक्त चरण में सिंचाई की जा सकती है जिससे फसल उत्पादन में वृद्धि हो सकती है।
- खरीफ मौसम की विभिन्न फसलों का चुनाव, भूमि आबंटन तथा अन्य तैयारियां इस बात पर निर्भर करती हैं, कि कम से कम पानी के निजी या सरकारी साधन उपलब्ध होने के बावजूद दक्षिण-पश्चिम मानसून द्वारा कब तथा कितनी वर्षा किस क्षेत्र में होने की संभावना है। यदि सामान्य से अधिक वर्षा होने की संभावना है, तब धान के लिए अधिक क्षेत्रफल आबंटित किया जा सकता है तथा किसान अपनी आवश्यकतानुसार अन्य फसलों के लिए कम क्षेत्रफल का निर्धारण कर सकते हैं। यदि मानसून की सामान्य से कम रहने की संभावना है, तो धान की जगह कम पानी की आवश्यकता वाली फसलें जैसे बाजरा या दलहनी फसलों को लगाया जा सकता है।
- वर्षा होने की संभावना से फसलों में सिंचाइयों की संख्या में कमी की जा सकती है, जिससे बिजली तथा डीजल पर होने वाले व्यय को कम किया जा सकता है। अधिक वर्षा होने पर धान के खेतों की मेंड़ों को मजबूत बना सकते हैं, जिससे ज्यादा पानी खेतों में रुक सकता है तथा अन्य फसलों (दलहनी, मक्का तथा सब्जियों) में जल निकास का प्रबंध कर सकते हैं। साथ ही अधिक वर्षा होने पर खेत के किसी एक भाग में वर्षा के पानी को इकट्ठा कर उसका उपयोग वर्षा न आने के दौरान फसलों की उचित समय पर सिंचाई के लिए कर सकते हैं ।
- यदि मौसम पूर्वानुमान से कृषकों को यह अवगत करा दिया जाए कि बीज की बुआई के लिए अनुकूल मौसम नहीं है। तब वे बीज, खाद, बिजली, डीजल, समय तथा कार्य के लिए नियुक्त किए गए मजदूरों पर होने वाले व्यय को कम कर सकते हैं। जैसा कि सर्वविदित है कि अन्य व्यवसायों के साथ कृषि व्यवसाय पर भी महंगाई का प्रभाव हुआ है। जिससे रासायनिक खाद, दवाइयां, खरपतवारनाशी, कीटनाशी या फफूंदीनाशी आदि प्रमुख हैं। यदि मौसम अनुकूल है, तब इन सभी का फसलों पर अच्छा प्रभाव पड़ सकता है तथा खर्च में कमी आ सकती है।
- खरीफ की फसलों जैसे धान, गन्ना, सोयाबीन, दलहनी फसलें आदि में सितंबर माह में अकसर कीड़े तथा बीमारियों का प्रकोप होता है। अतः मौसम पूर्वानुमान द्वारा कृषकों को इन फसलों में लगने वाले संभावित कीटों की पहचान एवं बीमारियों के लक्षण पहचानने एवं इनको नियंत्रण करने की उचित सलाह दी जा सकती है।
- मार्च माह में मौसम में काफी बदलाव आता है जैसे कि तापमान में वृद्धि होना, हवा की गति का अधिक होना इत्यादि। इस समय गेहूं की फसल दूधिया अवस्था से पकने की अवस्था में होती है। फसल की इस क्रांतिक अवस्था में यदि वर्षा होने की संभावना होने की सूचना कृषकों को

दे दी जाए तब वे सिंचाई रोक सकते हैं, साथ ही यदि तेज हवा चलने की संभावना हो तब उस परिस्थिति में सिंचाई 2-3 दिन के लिए टाली जा सकती है या फिर लगातार तेज हवा चलने की दशा में हल्की सिंचाई जब हवा की गति कम हो, करने की सलाह दी जा सकती है, जिससे फसल को तेज हवा से गिरने से होने वाले नुकसान से बचाया जा सकता है तथा सिंचाई पर होने वाले व्यय को भी कम किया जा सकता है।

- यदि गन्ने की फसल अच्छी है तथा मौसम पूर्वानुमान में तेज हवा चलने की संभावना व्यक्त की गई है तो यथाशीघ्र 3-4 गन्नों को एक साथ मिलाकर बंधाई का कार्य करने की सलाह दी जाती है, जिससे फसल गिरने से होने वाली क्षति से बचा जा सकता है।
- लगभग प्रति वर्ष अप्रैल माह में यदि कृषकों को समय से तूफान, ओलावृष्टि, धूल भरी आंधी या तेज हवा के साथ वर्षा की संभावना से पहले ही अवगत करा दिया जाए तो उच्च मूल्य वाले फल तथा सब्जियों को हेलनेट से ढककर ओले से बचाव किया जा सकता है।
- मध्यम अवधि के मौसम पूर्वानुमान के आधार पर हम अपनी सब्जियों की फसलों से उचित लाभ कमाकर बाजार में उचित मूल्य पर एवं समय से बेच सकते हैं। उदाहरण के लिए फूलगोभी की तैयार फसल के समय, यदि लगातार 3-4 दिन तक घने बादल तथा कोहरा रहने की संभावना व्यक्त की गई हो, तब फसल को यथाशीघ्र कटाई कर के बाजार में बेच देना चाहिए अन्यथा इसकी गुणवत्ता खराब हो जाती है तथा बाजार में इसका मूल्य गिर जाता है।
- फसलों में कीड़े तथा बीमारियों का प्रकोप एवं प्रसार बादलों की दशा, वर्षा, दिन व रात्रि के तापक्रम एवं वायुमंडलीय नमी पर ही आधारित होते हैं। मौसम की जानकारी के आधार पर फसलों में समय पर उचित प्रबंधन करने से फसलों को कीड़ों तथा बीमारियों के प्रकोप से बचाया जा सकता है।
- फसलों में पाला, शीत लहरें, गर्म हवाएं आदि की जानकारी से उचित समय पर उपयुक्त प्रबंधन करने से फसलों में होने वाले नुकसान को कम कर सकते है ।

मौसम आधारित कृषि सलाह

कृषि भौतिकी संभाग, भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा नजदीकी गांवो के किसानों को सप्ताह में हर मंगलवार एवं शुक्रवार को मौसम आधारित कृषि कार्य करने की सलाह दी जाती है। प्रगतिशील किसान इसमें काफी रुचि लेते हैं तथा लाभान्वित होते हैं। भारत का मौसम विज्ञान विभाग, नई दिल्ली, सप्ताह के हर मंगलवार व शुक्रवार को अगले पाँच दिनों के मौसम की जानकारी जैसे अधिकतम व न्यूनतम तापमान, वर्षा की संभावना, बादलों की स्थिति, अधिकतम व न्यूनतम आर्द्रता, हवा की गति व दिशा की जानकारी कृषि भौतिकी संभाग को ई-मेल के माध्यम से उपलब्ध करवाता है। पिछले सप्ताह तथा अगले पाँच दिनों के मौसम को ध्यान में रखते हुए फसल की अवस्था तथा मौसम को भी ध्यान में रखते हुए मौसम आधारित बुलेटिन बनाते हैं। इसमें निम्नलिखित जानकारियां दी जाती है।

- पिछले सप्ताह के मौसम की जानकारी तथा इसका सामान्य से अंतर।
- अगले पाँच दिनों के मौसम का पूर्वानुमान।
- उगाई हुई फसलों के नाम तथा चरण।
- फसल की बुआई का सही समय, किस्मों का सही चयन, निराई-गुड़ाई, फसलों की कटाई, उर्वरकों का सही समय पर प्रयोग तथा मात्रा, सिंचाई का समय तथा मात्रा।
- बीमारियों तथा कीड़ों का आक्रमण एवं इसकी रोकथाम के उपाय।
- कीटनाशकों की मात्रा तथा सही समय पर प्रयोग।
- फसलों में मौसम आधारित प्रबंधन।
- उत्पादन का भंड़ारण में रखरखाव।

किसानों को यह सब जानकारियां हर मंगलवार व शुक्रवार को एस.एम.एस., ई-मेल के माध्यम से दी जाती हैं। साथ ही इसे संस्थान के वेबपेज (www.iari.res.in), (farmer.gov.in) व (www.imdagrimet.gov.in) पर

भी दर्शाया जाता है तथा हिंदी अखबारों में भी प्रकाशित करवाया जाता है। मौसम आधारित कृषि बुलेटिन को कृषि विज्ञान केंद्र, शिकोहपुर, उजवा, इफको किसान संचार लिमिटेड, कृषि तकनीकी केंद्र, गैर सरकारी संगठन, आत्मो, ई-चौपाल, कृषि दर्शन, ऑल इंडिया रेडियो, डी.डी. किसान आदि को भी ई-मेल के माध्यम से दिया जाता है। कृषि विज्ञान केंद्र तथा इफको किसान संचार लिमिटेड, इसे आगे किसानों तक पहुंचाने में सहयोग करते हैं जिससे ज्यादा से ज्यादा किसान इस सेवा से लाभान्वित हों। प्रगतिशील किसान इससे काफी लाभ उठ रहे हैं।

औद्योगीकरण के कारण जलवायु परिवर्तन आ रहा है। इसके कारण मौसम विविधता में लगातार बढ़ोतरी हो रही है। ऐसे में मौसम पूर्वानुमान के आधार पर कृषि परामर्श देना तथा सही समय पर कृषि में उचित प्रबंधन करना कृषि पैदावार को बढ़ाने, संसाधनों की बचत करने, कृषि में होने वाली क्षति को कम करने तथा किसानों की आर्थिक स्थिति को सुधारने में सहायक होता है| फसलों में बीमारियां, कीड़े आदि मौसम से बहुत प्रभावित होते हैं। यदि हम मौसम की जानकारी किसानों को देने में सफल होते हैं तो समय रहते फसलों में कीड़ों तथा बीमारियों से निजात पाया जा सकता है। जिससे आर्थिक हानि होने से बचा जा सकता है। मौसम आधारित कृषि परामर्श जो कि पिछले तथा आने वाले मौसम को ध्यान में रखकर बनाए जाते हैं, के आधार पर कृषि कार्य करना, कृषि में होने वाली क्षति को कम करने, कृषि पैदावार को बढ़ाने, लागत में कमी लाने तथा किसानों की आर्थिक स्थिति को मजबूत करने में सहायक होता है।

हिंदी उन सभी गुणों से अलंकृत है जिनके बल पर वह विश्व की साहित्यिक भाषाओं की अगली श्रेणी में समासीन हो सकती है।

- राष्ट्रकवि मैथिलीशरण गुप्त

बेहतर पोषण और स्वास्थ्य के लिए अपनाएं गृह वाटिका

बृज बिहारी शर्मा, महेश कुमार धाकड़[1] एवं श्रवण सिंह

शाकीय विज्ञान संभाग
भा.कृ.अनु.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012
[1]भा.कृ.अनु.प. - भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद का पूर्वी अनुसंधान परिसर, रांची

गृह वाटिका एक ऐसा स्थल है, जो गृह के समीप होता है और स्वयं की आवश्यकता तथा रुचि के अनुसार फल, सब्जियों एवं फूलों का उत्पादन किया जा सकता है। इस तरह के उत्पादन का उद्देश्य व्यावसायिक न होकर आत्म संतुष्टि होता है। गृह वाटिका, आज के युग की एक महती आवश्यकता हो गई है, विशेषकर शहरी क्षेत्रों में जहां भूमि का मूल्य अत्यधिक बढ़ गया है। संतुलित आहार पूर्ति की समस्या को आंशिक रूप में फल व सब्जियां उगाकर किया जा सकता है। बाज़ार में उपलब्ध फल तथा सब्जियों को खरीदना महंगा पड़ता है, जबकि गृह वाटिका में कम लागत में सब्जियां उगाई जा सकती हैं। प्रतिदिन पूजा, आराधना के लिए ताजे पुष्प उपलब्ध हो पाते हैं, इन्हें गृह वाटिका में सरलता से उगाया जा सकता है।

गृह वाटिका दो प्रकार की होती है:

1. **शाक वाटिका या बाड़ी:** ऐसी वाटिका जिसमें कि मात्र फल और सब्जियों का उत्पादन किया जाता है, शाक वाटिका कहलाती है। 5 से 6 सदस्यों के परिवार के लिए 300 मी.^{2} की शाक वाटिका पर्याप्त होती है।
2. **मिश्रित गृह वाटिका:** ऐसी वाटिका, जिसमें फल और सब्जियों के उत्पादन के साथ शोभा- उद्यान भी लगाया जाता है, ऐसी वाटिका शहरों में होती है।

गृह वाटिका की स्थापना

गृह वाटिका फल उद्यान, सब्जी प्रक्षेत्र एवं शोभा उद्यान का क्रमबद्ध मिला-जुला लघु रूप होता है । इन तीनों विज्ञानों का सार स्वरुप गृह वाटिका में देखने को मिलता है। गृह वाटिकाओं की अपनी ही सीमाएं होती हैं, जिनको ध्यान में रखकर इनकी स्थापना की जाती है।

स्थान का निर्धारण: गृह वाटिका, निवास स्थान के पूर्व और दक्षिण दिशा की ओर हो, जिससे कि पौधों को पर्याप्त मात्रा में सूर्य का प्रकाश मिल सके और उत्तर-पश्चिम दिशा की ओर से बहने वाली ग्रीष्म ऋतु की गर्म और तेज़ हवाओं से पौधों की रक्षा हो सके। इस बात का ध्यान गृह निर्माण के समय रखना चाहिए कि गृह वाटिकाओं के लिए भूमि पूर्व या दक्षिण दिशा की ओर छोड़ी जाएं और मकान उत्तर-पश्चिम दिशा की ओर हो।

घेरा या बाड़ लगाना: गृह वाटिका में घेरा या बाड़ दीवार के रूप में बनाई जाती है। साधारणत: 1.5 से 2.0 मी. ऊंची दीवार बनाकर उस पर 1 मी. झुके हुए लोहे के खंभे लगाकर उनमें कांटेदार तार लगा देने से घेरा अधिक सक्षम हो जाता है। इन खंभों पर कोई शोभादार बेल चढ़ाई जा सकती है। शोभादार झाड़ियों से भी घेरा या बाड़ बनाई जा सकती है, किंतु इन्हें अधिक फैलने नहीं देने के लिए नियमित काट-छांट की आवश्यकता होती है। क्लोरोडैन्ड्रों, दुरन्ता, एक्लीफा और सेस्बेनिया आदि झाड़ियों की बाड़ लगाई जा सकती है।

भूमि का विकास: समतल करते समय भूमि की ढाल उस दिशा की ओर बनाएं, जिस ओर सामान्य ढाल हो, जिससे वर्षा का जल सरलता से निकल जाए। रेतीली भूमि में, काली मिटटी व चिकनी मिट्टी में रेत या हल्की मिट्टी मिलाना आवश्यक है। जैविक पदार्थ पर्याप्त मात्रा में होना आवश्यक है।

गृह वाटिका का विन्यास: गृह वाटिका का विन्यास तीन प्रमुख उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है। जैसे 1. गृह वाटिका की भूमि का अधिकतम उपयोग हो अर्थात भूमि का कोई भी भाग व्यर्थ न पड़ा रहे 2. गृह वाटिका का स्वरुप चित्ताकर्षक हो अर्थात सुंदर दिखाई दें और 3.

गृह वाटिका में अधिकतम उत्पादन हो अर्थात संतुलित औद्यानिक क्रियाएं अपनाई जाएं।

गृह वाटिका के आवश्यक अंग

पथ या रास्ते: प्रवेश द्वार से निवास तक पहुंचने के लिए 2 से 3 मी. चौड़ा रास्ता सीधा या गोलार्ध लिए हुए हो और इस रास्ते से लगे हुए अन्य रास्ते जो 0.5 से 0.6 मी. चौड़े हों, गृह वाटिका के अन्य स्थानों में पहुंचने के लिए होने चाहिए।

सिंचाई की नालियां: सिंचाई नाली से वाटिका का प्रत्येक खंड जुड़ा होना चाहिए। मुख्य सिंचाई नाली ईंटों से बनानी चाहिए तथा अन्य नालियां कच्ची बनाई जा सकती हैं। सिंचाई के लिए यदि पाईप का प्रबंध हो और क्षेत्र छोटा हो, तो सिंचाई नाली की आवश्यकता नहीं होती है।

कंपोस्ट के गड्डे: वाटिका एवं घर का कचरा आदि एकत्रित करने के लिए वाटिका के एक कोने में एक या दो गड्डे बना देने चाहिए। इन गड्डों में वाटिका की आवश्यकता के लिए कंपोस्ट खाद तैयार की जा सकती है ।

भंडार गृह: उद्यान के औजार, बीज, खाद, उर्वरक, कीट और रोगनाशक दवाएं आदि रखने के लिए छोटा-सा भंडार गृह भी बनाना चाहिए।

नर्सरी: वाटिका में लगाए जाने वाले शोभाकारी पौधों तथा सब्जियों के पौधे तैयार करने के लिए एक छोटी नर्सरी होना आवश्यक है। इसका आकार 3×2 मी. या अधिक हो सकता है। कलमें भी वाटिका में तैयार की जा सकती हैं।

गमला स्थल: गमले में लगाए गए पौधे किसी भी स्थान पर रखे जा सकते हैं।

सब्जियों की क्यारियां: सब्जियों की क्यारियां, क्षेत्र के अनुसार बनाई जाती हैं। ये क्यारियां आकार में 3.0×2.0 मी., 2.5×1.5मी. या 3.0×1.5 मी. आकार की बनाई जा सकती हैं। प्रत्येक क्यारी में पहुंचने के लिए 0.4 से 0.5 सेमी. चौड़ा रास्ता होना चाहिए। सब्जियों के उगाने के स्थान पर सूर्य का प्रकाश पर्याप्त मात्रा में आना चाहिए।

फल वृक्षों का स्थान: वृक्षों के लिए क्यारियां, वाटिका के उत्तर-पश्चिम दिशा की ओर किनारे पर होना चाहिए, जिससे कि उनकी छाया सब्जियों पर न पड़ सके। पपीता (किस्म-पूसा नन्हा), केला, मीठी नीम, नींबू तथा करोंदा, तो अवश्य होना चाहिए।

शोभाकारी उद्यान: शोभाकारी उद्यान, वृक्ष व सब्जियों के स्थान अलग से होने चाहिए। शोभाकारी उद्यान के स्थान के आकार के अनुसार वृक्ष, झाड़ियां, लताएं, मौसमी पुष्प, हरियाली, फुव्वारा, मूर्तियां आदि विकिसित की जाती हैं। शहरों में ऐसी वाटिकाएं होती हैं, जिनमें मात्र शोभाकारी उद्यान ही रहता है। सामान्यत: शोभाकारी उद्यान का स्थान, निवास के सामने और फल तथा सब्जियों का स्थान पीछे या दाएं-बाएं होता है और यह उचित भी है।

फल सब्जियां और पुष्पों का चुनाव: गृह वाटिका में अपनी रुचि के अनुसार ही फल, सब्जियां तथा फूलों के पौधों का चुनाव किया जाता है, किंतु इसका यह तात्पर्य यह नहीं है कि उद्यान के नियमों को छोड़कर मात्र अपनी ही रुचि देखी जाए। अपनी रुचि को उद्यान विज्ञान के सामान्य नियमों के अनुरूप ढाल कर फूल, सब्जियां तथा पुष्पीय पौधे लगाने चाहिए।

फल: गृह वाटिका में कम फैलने वाले तथा शीघ्र फलने वाले वृक्षों को लगाना चाहिए, जैसे-पपीता, केला, अन्नानास, स्ट्राबेरी आदि। यदि अधिक स्थान उपलब्ध है, तो नींबू, संतरा, अनार, मीठी नीम तथा फालसा आदि भी लगा सकते हैं। इन फल वृक्षों की बौनी किस्में लगानी चाहिए, जैसे- आम की आम्रपाली।

सब्जियां: रुचि के अनुसार सब्जियां चुनें। जो सब्जियां बाज़ार में महंगी तथा कम मिलती हों, उन्हें उगाना चाहिए। पत्तेदार सब्जियां निश्चित रूप से उगानी चाहिए। बेल वाली सब्जियां, जैसे - कुम्हड़ा, लौकी, शकरकंद, सेम, करेला आदि कम लगाने चाहिए। यदि लगाते हैं, तो इन्हें मंडप बनाकर फैला देना चाहिए। सब्जियों की उत्तम किस्म ऐसे समय में उगाएं जब ये बाज़ार में बहुतायत में उपलब्ध न हो अर्थात अगेती या पछेती किस्मों को प्राथमिकता दें। फलीदार सब्जियां, जैसे मटर, बरबटी, फ्रेंचबीन आदि निश्चित रूप से लगाएं।

शोभाकारी पौधे: शोभाकारी वृक्ष, झाड़ियां, लताएं तथा मौसमी पुष्प आदि स्थान के अनुसार लगाए जा सकते

हैं। कम स्थान होने पर मौसमी पुष्प अधिक लगाने चाहिए। हरियाली निश्चित ही लगनी चाहिए, बिना इसके वाटिका अधूरी मानी जाती है ।

फल, सब्जियां तथा शोभाकारी पौधों को लगाने में ऐसा प्रयास न किया जाए कि ये अधिक संख्या में लगें, बल्कि सूर्य प्रकाश आदि का ध्यान रखते हुए उचित स्थान पर लगाएं। जिससे हरेक पौधे को पूर्ण विकसित होने का अवसर मिल सके और सब मिलकर एक आकर्षक स्वरुप दे सकें।

गृह वाटिका प्रबंधन

गृह वाटिका का प्रबंधन एक मनोरंजन का विषय है, जिसके अंतर्गत फलोत्पादन, सब्जी उत्पादन तथा शोभाकारी उद्यान के सामान्य नियमों को लघु या सीमित क्षेत्र अपनाकर फल, सब्जी एवं पुष्पों का उत्पादन किया जाता है। कुछ प्रमुख नियम इस प्रकार हैं:

भूमि का अधिकतम उपयोग: वाटिका का सबसे महत्वपूर्ण अंश यह है कि किसी भी ऋतु में कोई भी भूखंड खाली न रहे। जहां पर वृक्ष और शोभाकारी वृक्ष एवं झाड़ियां लगी हैं, उस स्थान पर थाला बना देना चाहिए। थाला वाले स्थान को छोड़कर, छाया चाहने वाली सब्जियां, जैसे - हल्दी, अदरक आदि लगा सकते हैं। मेंड़ तथा सिंचाई, नाली के दोनों ओर मूली या पत्तेदार सब्जियां लगाई जा सकती हैं। वर्षा ऋतु में कुछ ही सब्जियां उगाई जा सकती है जैसे - भिंडी, बरबटी, लौकी आदि।

उचित फसल-चक्र व क्रियाएं अपनाएं: सब्जियां उगाने में उचित फसल चक्र अपनाएं जिससे कि भूमि की उर्वराशक्ति बनी रहे व वर्ष भर सब्जियां प्राप्त होती रहें। एक ही प्लाट में सब्जियां बदलकर लगाएं। (सारणी-1) बेल वाली सब्जियां किनारे पर लगाएं और उन्हें मंडप पर चढ़ाएं। टमाटर जैसी सब्जियों को लकड़ी के सहारे से बढ़ाना चाहिए। सब्जियों की उत्तम किस्म ही लगाएं (सारणी-2)। खाद तथा उर्वरक उचित मात्रा में तथा उचित समय पर दें। गोबर की खाद या कंपोस्ट का अधिक उपयोग करना चाहिए। यदि सब्जियों की बाड़ कमजोर दिखाई दें, तो यूरिया के 2 से 3 प्रतिशत घोल का छिड़काव किया जा सकता है।

पौद संरक्षण: पौद सरंक्षण के लिए अधिक जहरीली दवाओं का उपयोग नहीं करना चाहिए तथा दवा छिड़कने के कम से कम 9 से 10 दिनों तक कोई सब्जी नहीं तोड़नी चाहिए। पत्तेदार सब्जियों में विशेष सावधानी आवश्यक है। कीट नियंत्रण के लिए प्रकाश पाश का उपयोग करना अच्छा रहता है। इसके लिए चौड़े बर्तन में पानी भरकर उसमें मिट्टी का तेल या मेलाथियॉन दवा मिला दें और उस बर्तन के मध्य में प्रकाश कर दें, जिससे रात्रि में कीड़े प्रकाश से आकर्षित होकर पानी से भरे हुए बर्तन में गिरकर मर जाए।

कटाई-छंटाई: गृह उद्यानों में लगे हुए वृक्षों, झाड़ियों, लताओं आदि की बाड़ को स्थान के अनुसार नियंत्रित रखना प्राथमिक आवश्यकता होती है। इसलिए समय पर कटाई-छंटाई करते रहना चाहिए।

सारणी 1: गृह वाटिका के लिए सब्जियों का फसल - चक्र

(अ) वर्ष में दो सब्जियां

- बैंगन (जून - फरवरी)- बरबटी / भिंडी / तर ककड़ी (मार्च - मई)
- शिमला मिर्च (जुलाई - फरवरी)- तरबूज (फरवरी - जून)
- अदरक (जून - नवंबर)- करेला / लौकी (दिसंबर - मई)
- तोरई (जून - अक्टूबर)- मिर्च (नवंबर - मई)
- सेम (जुलाई - जनवरी)- चौलाई (फरवरी - जून)
- लौकी (फरवरी - सितंबर)- आलू (अक्टूबर - जनवरी)
- टमाटर (जून - नवंबर)- लहसुन (दिसंबर - मई)

(ब) वर्ष में तीन सब्जियां

- बरबटी (जुलाई - सितंबर) - फूलगोभी/आलू (अक्टूबर - फरवरी) - भिंडी / तर ककड़ी (मार्च -जून)
- भिंडी (जून - सितंबर) - गाज़र (सितंबर - दिसंबर) - टमाटर (जनवरी - मई)

- टमाटर (जुलाई - अक्टूबर) - पत्तागोभी (नवंबर - फरवरी) - तर ककड़ी (मार्च - जून)
- फूलगोभी अगेती (जुलाई - अक्टूबर) - पालक (नवंबर - जनवरी) - खरबूजा (फरवरी - जून)
- खीरा (जून -अगस्त) - पत्तागोभी (सितंबर - दिसंबर) - बैंगन (जनवरी - मई)
- मिर्च (जून -अक्टूबर) - फ्रेंचबीन (नवंबर - जनवरी) - खरबूजा (फरवरी - मई)

(स) वर्ष में चार सब्जियां

- गाज़र (अगस्त - अक्टूबर) - फ्रेंचबीन (नवंबर - जनवरी) - मूली (फरवरी - मार्च) - ककड़ी (अप्रैल - जुलाई)
- कद्दू छप्पन (मई - अगस्त) - फ्रेंचबीन (सितंबर - मध्य नवंबर) - गांठ गोभी (मध्य नवंबर - जनवरी) - बरबटी (फरवरी - अप्रैल)
- मूली (जून - जुलाई) - मेथी (अगस्त -अक्टूबर) - पालक (नवंबर - जनवरी) - ककड़ी (फरवरी - मई)

(द) मेंड़ों पर सब्जियां

- गाज़र (जुलाई - अक्टूबर) - धनिया (नवंबर - जनवरी) - मूली (फरवरी - मार्च) - पुदीना (अप्रैल - जून)
- मूली (जुलाई - अगस्त) - धनिया (सितंबर - नवंबर) - पालक (दिसंबर - जनवरी) - खेडा (फरवरी - मई)
- चौलाई (जुलाई - सितंबर) - चना (अक्टूबर - जनवरी) - मूली (फरवरी - मार्च) - पुदीना (अप्रैल - मई)

सारणी 2. गृह वाटिका के लिए उपयुक्त सब्जियों की उन्नत किस्में

फसलें	**गृह वाटिका के लिए किस्में**
पत्तेदार सब्जियां	
चौलाई	पूसा कीर्ति, पूसा किरण, पूसा लाल चौलाई।
पालक	पूसा हरित, पूसा भारती, आल ग्रीन, पूसा ज्योति।
मेथी	पूसा कसूरी, पूसा अर्ली बंचिंग।
लेटुस	ग्रेट लेक्स, आइस बर्ग।
कद्दूवर्गीय सब्जियां	
करेला	पूसा दो मौसमी, पूसा विशेष, पूसा संकर-1, पूसा संकर-2।
बथुआ	पूसा बथुआ-1, पूसा ग्रीन।
लौकी	पूसा नवीन, पूसा संदेश, पूसा संतुष्टि, पूसा संकर-3।
खरबूजा	पूसा मधुरस, पूसा शरबती, पूसा रसराज।
चप्पन कद्दू	अर्ली येल्लो प्रोलिफिक, ऑस्ट्रेलियन ग्रीन, पूसा अलंकार
खीरा	पूसा उदय, पूसा संयोग, पूसा बरखा।
बैंगन	पूसा श्यामला, पूसा कौशल, पूसा उत्तम, पूसा बिंदू, पूसा अंकुर, पूसा अनुपम।
गोभी वर्गीय सब्जियां	
पत्तागोभी	गोल्डन एकड़, पूसा मुक्ता, पूसा अगेती।

फूलगोभी	**अगेती:** पूसा मेघना, पूसा कार्तिकी, पूसा कार्तिक संकर; **मध्य-अगेती:** पूसा शरद **मध्य-पछेती:** पूसा शुक्ति, पूसा पौषजा; **पछेतीः** पूसा स्नोबॉल-1, पूसा स्नोबॉल-25
जड़दार सब्जियां	
मूली	पूसा चेतकी, पूसा श्वेता, पूसा मृदुला, पूसा हिमानी, जापानीज वाइट।
गाज़र	पूसा रुधिरा, पूसा वृष्टि, पूसा आशिता (काली गाज़र), पूसा यम्दाग्निनी, पूसा नयनज्योति।
चुकंदर	डेट्रॉइट डार्क रेड, क्रिमसन ग्लोब।
अन्य सब्जियां	
मिर्च	पूसा सदाबहार, पूसा ज्वाला; शिमला मिर्च: कैलिफ़ोर्निया वंडर, येलो वंडर।
टमाटर	पूसा रोहिणी, पूसा दिव्या, पूसा संकर-1, पूसा संकर-2, पूसा संकर-4, पूसा संकर-8।
बरबटी	पूसा कोमल, पूसा सुकोमल, पूसा फाल्गुनी, पूसा बरसाती, पूसा दो-फसली।
फ्रेंचबीन	पूसा हिमलता, पूसा पारवती, केंटुकी वंडर।
सब्जी मटर	अर्केल, पूसा प्रगति।
सेम	पूसा सेम-2, पूसा सेम-3, पूसा अर्ली प्रोलिफिक।

फूल चुन कर एकत्र करने के लिए मत ठहरो। आगे बढ़े चलो, तुम्हारे पथ में फूल निरंतर खिलते रहेंगे।

- रवींद्रनाथ ठाकुर

सूबे सिंह को सूबे में फसल विविधीकरण से लाभ : सफलता की कहानी

प्रतिभा जोशी, जे. पी. एस. डबास, निशी शर्मा, नफीस अहमद, सर्वाशीष चक्रवर्ती एवं पुनीता पी.

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

जिला गाजियाबाद के सिरौरा गाँव लोनी ब्लॉक के किसान श्री सूबे सिंह ने धान व गेहूं के साथ-साथ बे-मौसम में गहन सब्जी उत्पादन प्रौद्योगिकी को अपनाकर आय वृद्धि का उत्कृष्ट उदाहरण प्रस्तुत किया है। श्री सूबे सिंह के पास 6.0 हेक्टेयर भूमि है और वह मुख्य रूप से धान आधारित फसल पद्धति की खेती करते थे। हालांकि ब्लॉक लोनी में चावल-गेहूं मुख्य फसल प्रणाली है, लेकिन विविधीकरण के लिए कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र, भा.कृ.अनु.प-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली द्वारा संचालित राष्ट्रीय प्रसार कार्यक्रम के माध्यम से के.वी.के. गाजियाबाद के साथ मिलकर गेहूं-धान के साथ-साथ सब्जियों, मसूर, जैविक खेती आदि पर भी प्रशिक्षण व क़िस्मों का प्रदर्शन किया। इस इलाके में अधिकांश किसान धान की कटाई के बाद गेहूं ले रहे हैं, लेकिन श्री सूबे सिंह धान के बाद मसूर लेते हैं। श्री सिंह ने रबी की दालों और मसूर में सब्जियों के साथ सहफसली प्रणाली का उपयोग करते हैं। राष्ट्रीय प्रसार कार्यक्रम के तहत 1 एकड़ भूमि पर धान की फसल की कटाई के बाद मसूर का प्रदर्शन किया। मसूर के बाद खीरा उत्पादन से कृषक को 110,000/- रुपये का शुद्ध लाभ हुआ। श्री सूबे सिंह जी ने इससे उत्साहित होकर वैज्ञानिक पद्धति से सब्जियों की ओर रुख किया तथा साथ में बायोगैस संयंत्र लगाकर जैविक उत्पादन शुरू किया। इन्होनें इस बीच जनवरी के महीने में लौकी के

बीज को गिलास में अंकुर उगाने के लिए लगाया गया और फिर खीरा की दो मेड़ों पर प्रत्यारोपित किया। लौकी ने मई से मध्य जुलाई तक 22,500 रुपये के शुद्ध लाभ के साथ फल देना शुरू किया। इस अवधि के दौरान अप्रैल के प्रथम सप्ताह में लेन्टिल काटा गया और 19000/- रुपये का लाभ प्राप्त किया गया। जनवरी के प्रथम सप्ताह के दौरान खीरा के अंकुरण से पहले खेत में पालक और धनिया की बुआई की जाती थी और फरवरी/मार्च के दौरान 8,000/- रुपये की शुद्ध लाभ के साथ काटा जाता था। इस प्रकार विविधीकरण द्वारा आठ महीने में 159500/- रुपये का शुद्ध लाभ (मसूर+पालक+धनिया+खीरा+लौकी) का रिले फसल प्रणाली का पालन करके प्राप्त किया गया जो चावल-गेहूं फसल प्रणाली (पारंपरिक प्रणाली) से काफी अधिक है । श्री सूबे सिंह के पास 05 वर्मी कंपोस्ट, 01 अज़ोला इकाई और बायोगैस संयंत्र है, जो वह धान और सब्जी फसलों में इस्तेमाल करते है। लगभग 40 किसानों ने इनसे प्रेरणा लेकर गहन सब्जी की खेती को अपनाया है। श्री सुबे सिंह को प्रौद्योगिकी हस्तांतरण गतिविधियों के लिए कई बार सम्मानित किया गया है।

सारणी 1: रिले फसल के रूप में रबी दालों के साथ सब्जियों की अंतर फसल

कार्य	फसल					
	प्रथम वर्ष			द्वितीय वर्ष		
	धान (पीबी-1121)	मसूर (पूसा मसूर -5) + खीरा (हाइब्रिड)	पालक (ऑल ग्रीन)+ धनिया + लौकी (पूसा नवीन)	धान (PB-1121)	सरसों + खीरा	पालक + धनिया + करेला

बुआई / रोपण	जून	नवंबर, दिसंबर	जनवरी, मार्च	जून	नवंबर, दिसंबर	जनवरी, मार्च
कटाई /तुड़ाई	नवंबर	फरवरी - मार्च	फरवरी-मार्च व मई-जुलाई	जुलाई-सितंबर	सितंबर-अक्टूबर	मार्च
लागत (रु./है.)	14240	12800	3000	15400	15800	4500
कुल उत्पादन (कु./है.)	21	मसूर - 4.1कु. खीरा - 55कु.	पालक - 3कु. धनिया- 2कु. लौकी - 26कु.	20.8	सरसों 8.5कु. खीरा 56कु.	पालक - 3.2कु. धनिया - 2.2कु. लौकी - 28कु.
शुद्ध लाभ (रु)	46,660	1,29,000	30,500	34,360	1,16,500	56,400
फसल प्रणाली द्वारा शुद्ध लाभ (रु.)		159500.00			172900.00	

सब्जी आधारित प्रणाली विविधीकरण और आर्थिक स्थिरता के लिए और किसानों के बेहतर जीवन के लिए चावल - गेहूं फसल के लिए एक विकल्प के रूप में आया है। यह प्रणाली बाजार मूल्य को हल करने के लिए एक बेहतर विकल्प हो सकती है। इसके अतिरिक्त श्री सिंह के प्रयासों से किसान उत्पादक समूह का गठन किया गया है और सब्जियों के प्रत्यक्ष विपणन के लिए उपभोक्ता समूह का गठन किया जा रहा है। यह समूह श्री सिंह के साथ मिलकर गाय व भैंस का शुद्ध घी, पीली व काली सरसों का तेल, गुड़, खांड, शक्कर, गुड़, चावल, आटा, मसाले, जैविक सब्जियां, शहद आदि का विपणन भी कर रहा है।

बायोगैस अपनाने से किसान मालामाल : किसान की जुबानी सफलता की कहानी

पुनीता पी., जे.पी.एस. डबास, विजय भान सिंह, निशी शर्मा, प्रतिभा जोशी, सर्वाशीष चक्रवर्ती एवं नफीस अहमद

कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र
भा.कृ.अनु.प.- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली 110012

भारतवर्ष के बहुत से ग्रामीण हिस्सों में फसल उत्पादन के साथ-साथ किसान पशुपालन का कार्य करते हैं। इसी कड़ी में राजस्थान का अलवर जिला, जहां की भूमि रेतीली है, सर्वविदित है कि रेतीली भूमि में कृषि कार्य अत्यंत चुनौती-पूर्ण है, इस क्षेत्र में गर्मी के मौसम में तापमान 48 डिग्री सेंटीग्रेड हो जाता है एवं रबी के मौसम में यह जमाव बिंदु तक पहुंच जाता है। रेतीली भूमि की जलधारण क्षमता बहुत कम होती है एवं भूमि की उर्वरा शक्ति भी काफी कम होने के कारण फसलों की पैदावार सामान्यत: कम होती है। बहुत-सी फसलें जिन्हें अधिक पानी की जरूरत होती है, ऐसी फसलों को उगाना बहुत ही कठिन होता है। सीमित फसलों को अपनाकर जीविकोपार्जन अत्यंत ही कठिन कार्य है। पशुओं की अधिक संख्या इनके आय के साधन के रूप में अहम भूमिका अदा करते हैं। किसान ज्यादातर गाँव के बजाय अपने ट्यूबवेल पर रहते हैं और वहीं पर वे पशुओं को भी रखते है। बायोगैस संयंत्र किसानों के लिए बहुत ही लाभदायक है। ग्रामीण क्षेत्रों में स्वच्छता के साथ-साथ ईंधन, सर्वोत्तम खाद और ऊर्जा के रूप में कई कार्य किया जा सकता है जैसे- प्रकाश, पंपिंग सेट सिंचाई उपलब्धता आदि द्वारा बहुत से कृषि के कार्य आसानी से किए जा सकते हैं। इन कार्यो से जुड़कर ग्रामीण बेरोजगारी को दूर करने में मदद मिल सकती है।

सिंचाई जल में कमी होने के कारण पशुओं का गोबर जो किसान खाद के रूप में प्रयोग करते हैं, उसके अपघटन की प्रक्रिया न के बराबर होती है जिसका भरपूर लाभ किसान नहीं उठा पाते हैं। ग्रामीण महिलाएं कच्चे गोबर के उपले बना डालती हैं, जिसका ईंधन के रूप में प्रयोग करती हैं जिसके धुएं से प्रदूषण होता है और बहुत ही कम समय में अपनी आंख की रोशनी भी खो बैठती हैं। साथ ही गोबर के उपले बनाने में भी काफी समय बर्बाद होता है।

वर्तमान समय में किसान, कृषि रसायनों, दवाओं पर काफी खर्च करते हैं, जिससे लागत खर्च काफी बढ़ जाती है। पैदावार पर लागत खर्च बढ़ने से और उसकी तुलना में उत्पाद बिक्री की कम कीमत प्राप्त होने पर निराशा से किसान का हौसला टूट जाता है ऐसे ही एक किसान श्री थावर सिंह, जो भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान के कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र द्वारा संचालित परियोजना के तहत अंगीकृत गाँव के अंतर्गत आते हैं, जो अपनी परंपरागत खेती करते थे, जिसमें वह खुश नहीं थे क्योंकि उसमें उन्हें अधिक लाभ नहीं मिल पा रहा था जिसके पीछे मूल कारण तकनीकी एवं वैज्ञानिक जानकारी का अभाव था।

सामान्य ढंग से खेती करने वाले किसान श्री थावर ने केंद्र के अध्यक्ष डॉ. जे.पी.एस. डबास से अपनी व्यथा बताई, जिसके निदान के संदर्भ में बायोगैस संयंत्र लगाने से मिलने वाले अधिक से अधिक लाभ के बारे में अवगत कराया और संयंत्र निर्माण का सुझाव दिया। इसके साथ ही एक प्रशिक्षित एवं निपुण कारीगर से परिचय भी करवाया गया। 4 घन मीटर बायोगैस संयंत्र लगाने का कुल लागत खर्च रुपया 42,200 आया। श्री थावर के पास कुल 10 पशु हैं, जिनका गोबर इस संयंत्र को संचालित करने के लिए काफी है। बायोगैस स्लरी के प्रयोग से उन्होंने अपने 3 हेक्टेयर जमीन पर गेहूं की जैविक खेती करना शुरू किया और उसे अपने नजदीकी मंडी अटेली में रुपये 18.00 के स्थान पर रुपये 36.00 प्रति क्विंटल के हिसाब से बेचा जो सामान्य कीमत से दोगुना रहा, वे रासायनिक उर्वरकों के खर्च से भी बच गए एवं उनके खेत में स्लरी के प्रयोग से खरपतवार भी कम हुआ। इसके साथ ही खेत में जो दीमक लगती थी, उसका भी नियंत्रण हो गया है। इस प्रकार से उनका खरपतवार नाशी दवा और कीटनाशी दवा पर होने वाला खर्च भी बच गया। वैज्ञानिक तकनीकी अपनाने से किसान श्री थावर की

खुशी का कोई ठिकाना नहीं रहा। चर्चा के दौरान वे कहते हैं कि जो गोबर खुले में नुकसान हो रहा था और वह बच गया और अच्छे खाद के रूप में बदल गया इसके साथ अब हमारे घर का गैस सिलिंडर का जो खर्च था वह भी बचने लगा है। बायोगैस संयंत्र लगाने के बाद में मेरी समझ में आ गया कि यह संयंत्र खेती संबंधित बहुत-सी समस्याओं का निदान बहुत सहज ढंग से कर सकता है।

पूसा संस्थान के वैज्ञनिकों के संपर्क में आने के बाद मैं अब बीज उत्पादन का कार्य करूंगा। अभी मैं डेयरी के कार्य के साथ-साथ सब्जी पैदा करके लाभ ले रहा था। आज मेरे लाभ का अनुपात दोगुने से भी ज्यादा हो गया है। आज मुझे बहुत खुशी मिल रही है कि पूसा संस्थान ने मेरे भाग्य और पहले की ख़राब आर्थिक स्थिति में बेहतर बदलाव ला दिया है। अब मेरा बेटा भी साथ देने लगा है, जो मेरे लिए बहुत बड़ा साहस है। मैं संस्थान के सभी वैज्ञानिकों एवं अधिकारियों का हृदय से आभार प्रकट करता हूं।

मैं चाहता हूं कि सभी किसान भाई अपनी मेहनत के साथ पशुपालन का कार्य कर बायोगैस संयंत्र लगाकर अपनी आमदनी में बढ़ोतरी करें। साथ ही खेती के कार्य के साथ बायोगैस स्लरी का प्रयोग अवश्य करें, जिससे रासायनिक उर्वरकों पर होने वाले खर्च घटाते हुए घर में प्रयोग होने वाले गैस सिलिंडर पर आने वाले अधिक खर्च को भी बचाएं। किसान भाइयों को परिवार की महिलाओं के स्वास्थ्य पर भी ध्यान देना जरूरी है। माननीय प्रधानमंत्री जी के स्वच्छता अभियान को असली रूप देने के लिए बायोगैस संयंत्र किसान भाइयों को अवश्य लगाना चाहिए और जो लोग अभी तक नहीं लगा सके हैं, वे भी अपनाने का प्रयास जरूर करेंगे। ऐसी मैं सभी किसान भाइयों से आशा रखता हूँ। श्री थापर अधिक से अधिक किसान भाइयों को इस प्रकार का प्रेरणादायक संदेश देने के साथ-साथ आज स्वयं भी प्रेरणा के स्रोत बन गए हैं।

निर्माणाधीन बायोगैस संयंत्र

बायोगैस संयंत्र द्वारा रसोई का कार्य

बायोगैस सयंत्र निर्माण पर किसान को परामर्श देते हुए केंद्र के अध्यक्ष डॉ जे.पी.एस. डबास

बायोगैस सयंत्र में पानी डालते हुए

बायोगैस सयंत्र में पानी और गोबर को किसान द्वारा मिलाना

बायोगैस बायोगैस सयंत्र से निकलती हुई स्लरी सयंत्र में पानी

बायोगैस सयंत्र से निकलती हुई गैस की किसान द्वारा जांच

बायोगैस सयंत्र से निकलती हुई गैस से खाना पकाने का कार्य

राजभाषा खंड...

यायावर

युयुत्सु ह्रदय को,
यातना का नीर क्या निर्बल बनाएगा।
नित नवीन बाधा से,
क्या यायावर तू रुक जायेगा।

प्रारंभ में विघ्न की प्रचंडता पुकारती,
पौरुष ही प्रगति के द्वार खोल पाएगा।
संघर्ष की वेदनाएं चरम पर है,
आज प्रत्युत्तर की रणभेरी तू बजाएगा।

कर प्रहार की संवेदन शून्यता के,
नेपथ्य में आज हाहाकार तू मचाएगा।
आहत ह्रदय कि वेदना आज है पुकारती,
शौर्य की शमशीर पे विजय तिलक कब लगाएगा।

तिरस्कार के ताप से शून्यता है भस्म हुई,
संघर्ष का सूर्योदय अब जगमगाएगा।
आह्वान की अग्नि से पीर लावा बन उठी,
आगाज़ का ये इत्र है सर्वत्र अब जो छाएगा।

शिवानी चौधरी
कार्मिक v अनुभाग

किसान दिवस

आज फिर बच्चे भूखे पेट सोए हैं उसके
आज फिर जैसे तैसे उन्हें बहलाया है
आज फिर खेत में सींच कर खून अपना
दिल में उम्मीद का दिया जलाया है

आज फिर सेठ के पैरों में उसने
गिर कर, कर्ज उठाया है
आज फिर उसके ज़हन में
आत्महत्या का ख़्याल आया है

आज फिर किसान दिवस पर
नेताजी ने बढ़िया भाषण सुनाया है
आज फिर किसान के हिस्से की
रोटी पर घी मल मल खाया है

आज फिर नेताजी ने दावत का
बचा खाना बाहर फिकवाया है
आज फिर उस अभागिन मां ने
जूठन से अपना घर चलाया है!

-कृति गुप्ता
सर्तकता अनुभाग

शहीद की गुहार

(पुलवामा आतंकी हमले पर आधारित)

खुश हूं आज यारों मैं,
खाली ना गई मेरी कुर्बानी
मौत ने मेरी भर जो दिया
आज तुम्हारी आंखों में पानी

मां भारती की सेवा को
मैं तो जिस दिन निकला था
यौवन के अरमानों को छोड़
कफ़न सिर बांध के निकला था

मैं छोड़ आया पीछे अपने
राह तकते बूढ़े मां बाप
नई दुल्हन के सपनों को भी
तोड़ने का कर आया पाप

पर खुश हूं आज यारों मैं
लौटा हूं लिपट तिरंगे को
मेरी काया आज धन्य हुई
आंच ना आई तिरंगे को

उस गीदड़ की क्या बात करें
जो कायरता की है मूरत
इन दहशत के आकाओं को
कड़े सबक की है ज़रूरत

मत रोओ तुम इस बात पर
कि मेरे साथ हुई नाइंसाफी है
इन सौ सौ दहशतगर्दों को
मेरा एक ही भाई काफी है

खुश हूं आज यारों मैं
सरहद पर अभी मेरे भाई खड़े
मेरे साथी, मेरे यार सभी
मुस्तैदी से सीना तान खड़े

तुम भी अब इस क्रोध की
ज्वाला को दिल में जलाए रखना
भारत मां की जय के नारों से
धरती आकाश सजाए रखना

दो दिन मचा कर शोरगुल
तुम ठंडे मत पड़ जाना
आक्रोश की आग से ही
तुम दुश्मन से लड़ जाना

खुश हूं आज यारों मैं
मेरी मौत पर तो तुम एक हो!
यूं तो बंट जाते बात बात पर
लेकिन आज तुम सारे एक हो!

तुम सच्चे हिंदू, सच्चे सिख
ईसाई, मुस्लिम सच्चे हो
पर मत भूलो तुम सबसे पहले
भारत मां के बच्चे हो!

बस इस शहीद की गुहार इतनी
मेरे बलिदान से मुंह ना मोड़ना
कोई बांटे चाहे कितना भी
तुम एक दूजे का हाथ ना छोड़ना!

-कृति गुप्ता
सर्तकता अनुभाग

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान
राजभाषा प्रगति रिपोर्ट 2018-19

भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान का नाम देश के कृषि अनुसंधानों में हमेशा अग्रणी ही रहा है। साथ ही देश को खाद्यान्नों के क्षेत्र में आत्मनिर्भर बनाने वाली हरित क्रान्ति का जनक भी यही संस्थान रहा है। नित नये अनुसंधानों एवं प्रौद्योगिकियों के विकास का जनक यह संस्थान प्रतिदिन प्रगति के नए आयाम छू रहा है। कृषि क्षेत्र के साथ-साथ राजभाषा के प्रचार-प्रसार हेतु किये गए प्रयासों की दृष्टि से भी संस्थान निरंतर ही प्रगतिशील है। उपलब्धियों की दृष्टि से वर्ष 2018-19 संस्थान के लिए गौरवपूर्ण रहा। संस्थान को नराकास (उत्तरी दिल्ली) की तरफ से बड़े कार्यालय वर्ग में तृतीय पुरस्कार से सम्मानित किया गया। संस्थान में राजभाषा की प्रगति हेतु किये जा रहे अन्य प्रयास व उपलब्धियों का वर्णन निम्नवत है-

- संस्थान का प्रकाशन कार्य सुचारु रूप से चल रहा है। संस्थान की वार्षिक रिपोर्ट हिंदी में भी प्रकाशित की जा रही है। संस्थान द्वारा पूसा सुरभि (वार्षिक), पूसा समाचार (तिमाही), प्रसार दूत (द्विमासिक) तथा सामयिकी (मासिक) जैसे नियमित प्रकाशनों के अलावा अनेक तदर्थ प्रकाशन, पैम्फलेट तथा प्रसार बुलेटिन जारी किए जाते हैं।
- हिंदी बुलेटिन प्रकाशित करने के लिए संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) की अध्यक्षता में हिंदी प्रकाशन समिति गठित है जो प्रकाशन इकाई द्वारा हिंदी में तकनीकी बुलेटिन प्रकाशित करने के लिए विषयों का सुझाव देने, इन्हें तैयार करने के लिए वैज्ञानिकों की पहचान करने, वैज्ञानिकों द्वारा तैयार की गई पाण्डुलिपियों में शामिल किए जाने वाले पहलुओं पर सुझाव देने के अलावा उनका पुनरीक्षण भी करती है।
- संस्थान में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग की स्थिति की मॉनीटरिंग के लिए गठित राजभाषा निरीक्षण समिति ने संभागों/निदेशक कार्यालय के अनुभागों का निरीक्षण किया तथा संबंधित निरीक्षित संभाग/अनुभाग को निरीक्षण रिपोर्टें भेजी गईं। इसके अलावा कुछ संभागों के औचक निरीक्षण भी किये गए। निरीक्षण के उपरांत संबंधित संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केंद्रों पर हिंदी की वास्तविक प्रगति को वांछित गति प्राप्त हुई।
- संस्थान में राजभाषा विभाग के नियमानुसार प्रत्येक तिमाही में कार्यशालाओं का आयोजन किया जाता है। इस वर्ष से एक नवीन पहल के तौर पर यह निर्णय लिया गया कि हिंदी कार्यशालाओं का आयोजन सभी संभागों में बारी-बारी से जाकर किया जाएगा ताकि समयबद्ध संस्थान के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया जा सके। इसके अंतर्गत इस वर्ष सबसे पहले कृषि अभियांत्रिकी संभाग में हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। जिससे संभाग के समस्त अधिकारी/कर्मचारी लाभान्वित हुए।
- संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन को वांछित गति प्रदान करने और अधिकारियों/कर्मचारियों में हिंदी में कार्य करने के प्रति जागरुकता का सृजन करने के लिए हिंदी चेतना मास के दौरान कुल दस प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया जिनमें प्रमुख थीं: वाद-विवाद, निबंध लेखन, काव्य-पाठ, टिप्पण एवं मसौदा लेखन, कंप्यूटर पर हिंदी टंकण, आशु-भाषण, प्रश्न-मंच, अनुवाद तथा श्रुतलेख। उक्त प्रतियोगिताओं में सभी वर्गों के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया। इसके अतिरिक्त कुशल सहायी कर्मचारियों

तथा दैनिक वेतनभोगी कर्मचारियों के लिए अलग से सामान्य ज्ञान-प्रतियोगिता भी आयोजित की गई।

- प्रत्येक वर्ष की भांति संस्थान के मेला ग्राउंड में 'कृषि उन्नति मेला' आयोजित किया गया। इस अवसर पर मुख्य पंडाल के सभी चित्रों के शीर्षक, ग्राफ, हिस्टोग्राम आदि हिंदी में प्रदर्शित किए गए। मल्टी मीडिया के माध्यम से कृषि संबंधी जानकारी आकर्षक ढंग से प्रस्तुत की गई तथा किसानों, छात्रों व अन्य आगंतुकों को कृषि साहित्य हिंदी में उपलब्ध कराया गया।
- संस्थान को मानद विश्वविद्यालय का दर्जा प्राप्त है। यहां एम.एससी. और पीएच.डी. की उपाधियां प्रदान की जाती हैं। संस्थान के सभी पीएच.डी. छात्रों को अपनी थीसिस का सारांश हिंदी में प्रस्तुत करना अनिवार्य है। संस्थान द्वारा आयोजित की जाने वाली पीएच. डी. प्रवेश परीक्षा में अभ्यर्थियों को द्विभाषी माध्यम उपलब्ध कराया जा रहा है। इसी प्रकार संस्थान द्वारा बड़ी संख्या में किसानों, प्रसार कार्यकर्ताओं व उद्यमियों के लिए प्रशिक्षण कार्यक्रम आयोजित किए जाते हैं। इन सभी प्रशिक्षण कार्यक्रमों में प्रतिभागियों को पाठ्य सामग्री भी हिंदी में उपलब्ध कराई जाती है तथा प्रशिक्षण का माध्यम भी हिंदी ही होता है।
- संस्थान में हिंदी में पुस्तक लेखन को बढ़ावा देने के लिए सर्वश्रेष्ठ पुस्तक लेखन के लिए 'डॉ. रामनाथ सिंह पुरस्कार' द्विवार्षिक प्रदान किया जाता है। इस पुरस्कार योजना में 10,000/- रुपए नकद प्रदान किए जाते हैं। इसी प्रकार विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी में वैज्ञानिक लेख लिखने पर एक पुरस्कार योजना भी चल रही है जिसमें 7000/-, 5000/- तथा 3000/- रुपये प्रथम द्वितीय, तृतीय नकद पुरस्कार स्वरूप दिए जाते हैं। साथ ही हिंदी में व्याख्यान देने को बढ़ावा देने के लिए संस्थान के प्रवक्ताओं द्वारा हिंदी में सर्वश्रेष्ठ वैज्ञानिक/तकनीकी व्याख्यान देने के लिए पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार के नाम से एक नकद पुरस्कार योजना चलाई जा रही है। इस योजना में प्रत्येक वर्ष 10,000 रु. का नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है। इसके साथ ही हिंदी में प्रशासनिक कार्य को बढ़ावा देने के लिए राजभाषा विभाग की नकद पुरस्कार योजना के तहत कुल दस कर्मचारियों को पुरस्कार प्रदान किए जाने का प्रावधान है जिसमें 5000 रु. के दो प्रथम, 3000 रु. के तीन द्वितीय तथा 2000 रु. के पाँच तृतीय पुरस्कार दिए जाते हैं।
- संस्थान के वैज्ञानिकों को हिंदी में शोध पत्र तैयार करने और उनका पॉवर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से एक प्रतियोगिता/संगोष्ठी का आयोजन किया जाता है जिसमें संस्थान के वैज्ञानिक निर्धारित विषय पर अपने शोध-पत्र का पॉवर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण करते हैं। इस प्रतियोगिता में 10,000 रु., 7000 रु., 5000 रु. व 3,000 रु. के दो कुल पाँच नकद पुरस्कार प्रदान किए जाते हैं। इस वर्ष 'जैविक खेती बनाम रासायनिक खेती' विषय पर पॉवर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता का आयोजन किया गया।
- संस्थान द्वारा प्रकाशित पत्रिका 'पूसा सुरभि' की मांग देश के किसान व आमजन के बीच बेहद बढ़ी है इसका उदाहरण समय-समय पर उनसे मिलने वाला फीडबैक और उनके द्वारा पत्रिका की मांग किया जाना है। पूसा सुरभि पत्रिका को उत्कृष्ट कृषि पत्रिका के लिए भा.कृ.अनु.प. द्वारा अनेक बार गणेश शंकर विद्यार्थी पुरस्कार मिल चुका है। साथ ही नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति(उत्तरी दिल्ली) द्वारा भी इसको सम्मानित किया गया है पत्रिका को राजभाषा विभाग के निर्देशानुसार यूनिकोड समर्थित फोन्ट में प्रकाशित किया जा रहा है।
- संस्थान की वेबसाइट पर सभी संभागों से संबंधित तकनीकी शब्दावली उपलब्ध करा दी गई है।
- संस्थान में हिंदी पुस्तकों की खरीद के लिए एक समिति बनाई गई है जो हिंदी पुस्तकालय के लिए पुस्तकें खरीदने की सिफारिश करती है।

पुस्तकालय में प्रत्येक वर्ष राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्य के अनुसार पुस्तकें खरीदने का प्रयास किया जा रहा है। संस्थान के हिंदी पुस्तकालय में उपलब्ध सभी प्रकाशनों की सूची संस्थान की वेबसाइट पर उपलब्ध कराई गई है।

- राजभाषा विभाग, भारत सरकार के आदेशानुसार आशुलिपिकों तथा कनिष्ठ लिपिकों को क्रमश: हिंदी आशुलिपि व हिंदी टंकण का प्रशिक्षण प्राप्त करना अनिवार्य है। इसी क्रम में राजभाषा विभाग द्वारा चलाये जा रहे हिंदी आशुलिपि प्रशिक्षण में संस्थान के तीन नवनियुक्त आशुलिपिकों को हिंदी आशुलिपि प्रशिक्षण के लिए नामित किया गया है। इसी अनिवार्यता को ध्यान में रखते हुए संस्थान स्तर पर भी हिंदी टंकण प्रशिक्षण केंद्र स्थापित है जिसमें संस्थान में नव-नियुक्त सहायकों तथा कनिष्ठ लिपिकों को हिंदी टंकण का प्रशिक्षण दिया जाता है। इसके अलावा प्रशिक्षण प्राप्त कार्मिकों के लिए समय-समय पर पुनश्चर्या प्रशिक्षण कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जाता है।
- संस्थान के जिन अधिकारियों और कर्मचारियों को हिंदी में प्रवीणता प्राप्त है उन्हें निदेशक महोदय द्वारा राजभाषा नियम 8(4) के तहत अपना शत-प्रतिशत प्रशासनिक काम हिंदी में करने के लिए प्रतिवर्ष व्यक्तिश: आदेश जारी किए जा रहे हैं। इसके अलावा संस्थान के सभी संभागों/अनुभागों को अपना शत-प्रतिशत सरकारी काम हिंदी में करने के लिए विनिर्दिष्ट किया गया है। इसके परिणामस्वरुप रिपोर्टाधीन वर्ष में संस्थान में राजभाषा के प्रयोग में उल्लेखनीय प्रगति हुई है।
- संस्थान को प्राप्त होने वाले सभी हिंदी पत्रों के उत्तर अनिवार्यत: हिंदी में दिए जा रहे हैं, 'क' और 'ख' क्षेत्रों में स्थित सरकारी कार्यालयों के साथ अब लगभग 93 प्रतिशत से अधिक पत्र-व्यवहार हिंदी में किया जा रहा है। इन दोनों क्षेत्रों में स्थित कार्यालयों से अंग्रेजी में प्राप्त पत्रों के उत्तर भी अधिक से अधिक हिंदी में दिए जा रहे हैं। संस्थान में मूल पत्राचार अधिकाधिक हिंदी में करने को बढ़ावा देने के लिए संस्थान के सभी संभागों/अनुभागों व केंद्रों के बीच हिंदी व्यवहार प्रतियोगिता चलाई जा रही है जिसमें वर्षभर सबसे अधिक पत्राचार हिंदी में करने वाले संभाग/अनुभाग व केंद्र को पुरस्कार स्वरुप प्रशस्ति पत्र व शील्ड प्रदान की जाती है।
- संस्थान में फाइलों पर हिंदी में टिप्पणियां लिखने में भी बहुत प्रगति हुई है, सेवा-पुस्तिकाओं व सेवा संबंधी अन्य अभिलेखों में अब लगभग सभी प्रविष्टियां हिंदी में की जा रही हैं और राजभाषा अधिनियम की धारा 3(3) का कड़ाई से अनुपालन किया जा रहा है। संस्थान में हिंदी को दैनिक प्रशासन कार्यों में बढ़ावा देने के उद्देश्य से फाइल कवर पर ही हिंदी-अंग्रेजी की प्रासंगिक टिप्पणियां प्रकाशित की गई हैं।
- संस्थान के अधिकारियों तथा कर्मचारियों के हिंदी शब्द ज्ञान को बढ़ाने के उद्देश्य से निदेशक कार्यालय व एनेक्सी भवन के प्रवेश द्वारों पर डिजिटल बोर्ड स्थापित किए गए हैं। जिसमें प्रतिदिन हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ व एक सुविचार के साथ प्रदर्शित होता है। इसके अतिरिक्त संस्थान के सभी संभागों/केंद्रों/इकाइयों के प्रवेश द्वारों पर लगे सूचना पट्टों पर 'आज का शब्द' शीर्षक के अंतर्गत भी हिंदी का एक शब्द उसके अंग्रेजी समानार्थ के साथ लिखा जाता है, ताकि आते-जाते कर्मचारियों की नज़र इन पट्टों पर पड़े और उनके शब्द ज्ञान में वृद्धि हो सके।
- राजभाषा विभाग के आदेशानुसार संस्थान के सभी कंप्यूटरों में हिंदी में यूनिकोड में काम करने की सुविधा उपलब्ध कराई गई है।
- संस्थान के सभी संभागों/क्षेत्रीय केंद्रों में राजभाषा कार्यान्वयन उप-समिति गठित है जिनकी नियमित रूप से बैठकें आयोजित की जा रही हैं। संस्थान के हिंदी अनुभाग द्वारा इसकी निगरानी की जाती है।
- संस्थान, राजभाषा विभाग द्वारा गठित की गई

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) का भी सदस्य है। उक्त समिति की बैठकों में नगर में स्थित केंद्रीय सरकार के सदस्य कार्यालयों/उपक्रमों आदि में राजभाषा हिंदी में निष्पादित कामकाज/गतिविधियों की समीक्षा की जाती है। राजभाषा विभाग के आदेशानुसार समिति की बैठकों में कार्यालय प्रमुख के रुप में संस्थान से निदेशक द्वारा सक्रिय रूप से भाग लिया जाता है।

- संभागों/अनुभागों/क्षेत्रीय केंद्रों में हिंदी की प्रगति को वांछित गति प्रदान करने, राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में लिए गए निर्णयों को क्रियान्वित करने तथा संभाग एवं हिंदी अनुभाग के बीच सम्पर्क-सूत्र के रूप में कार्य करने के उद्देश्य से प्रत्येक संभाग/केंद्र में राजभाषा नोडल अधिकारी नामित किए गए हैं। इसके तहत सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार योजना भी आरंभ की गई है जिसके अंतर्गत 5000/-रु. का नकद पुरस्कार प्रदान किया जाता है।
- संस्थान के अनेक अधिकारियों व कर्मचारियों ने देश की विभिन्न हिंदी संस्थाओं व भा.कृ.अनु.प. के कई संस्थानों द्वारा देशभर के विभिन्न नगरों में आयोजित हिंदी वैज्ञानिक संगोष्ठियों, कार्यशालाओं, सम्मेलनों आदि में भाग लिया।
- उपर्युक्त सभी कार्य संस्थान की राजभाषा कार्यान्वयन समिति की देखरेख में किए जाते हैं। जिसकी प्रत्येक तिमाही बैठक में संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन में हुई प्रगति की समीक्षा की जाती है तथा समिति हिंदी के उत्तरोतर प्रगति के लिए निर्णय लेती है। इन बैठकों में प्रत्येक संभाग/इकाई द्वारा हिंदी की प्रगति के संबंध में किए गए अभिनव प्रयोग की रिपोर्ट भी प्रस्तुत की जाती है।

मुठ्ठी भर संकल्पवान लोग जिनकी अपने लक्ष्य में दृढ़ आस्था है, इतिहास की धारा को बदल सकते हैं।

- महात्मा गांधी

संस्थान में राजभाषा हिंदी की गतिविधियां

हिंदी चेतना मास

संस्थान में गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी राजभाषा कार्यान्वयन के प्रति नवीन चेतना और जागृति उत्पन्न करने तथा वैज्ञानिकों/अधिकारियों/कर्मचारियों को हिंदी में कार्य करने के लिए प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से संस्थान मुख्यालय में सितंबर, 2018 मास को हिंदी चेतना मास के रूप में मनाया गया। जिसमें अनेक विविधरंगी प्रतियोगिताओं यथा- काव्य-पाठ, श्रुतलेख, वाद-विवाद, टिप्पण व मसौदा लेखन, निबंध लेखन, अनुवाद प्रतियोगिता, आशु-भाषण, हिंदी टंकण (कंप्यूटर पर), प्रश्न-मंच एवं कुशल सहायी वर्ग/दैनिक वेतनभोगी वर्ग के लिए सामान्य-ज्ञान का आयोजन किया गया। गतवर्ष आयोजित की गई **वाद-विवाद प्रतियोगिता का विषय था- "सरकारी कार्यो में हिंदी प्रयोग को अनिवार्य कर दिया जाना चाहिए"** और निबंध प्रतियोगिता के लिए मुख्य दो विषय रखे गए, जिसमें पहला **"वैज्ञानिक चेतना के विकास में शोध संस्थानों की भूमिका"** एवं दूसरा विषय **"आरक्षण आर्थिक आधार पर होना चाहिए"** था। श्रुतलेख प्रतियोगिता में प्रतियोगियों की हिंदी में शुद्ध एवं मानक वर्तनी की परीक्षा ली गई वहीं एक अन्य लोकप्रिय प्रतियोगिता प्रश्न-मंच में विविधरंगी प्रश्न पूछे गए जिनमें हिंदी सामान्य ज्ञान, साहित्य, भारतीय संस्कृति, खेल जगत एवं मनोरंजन से संबंधित प्रश्न शामिल किए गए। साथ ही कुशल सहायी/दैनिक वेतनभोगी कर्मचारियों के लिए विशेष रूप से एक सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता का आयोजन किया गया जिसमें सामान्य हिंदी, व्याकरण व हिंदी साहित्य से संबंधित प्रश्न पूछे गए। उक्त सभी प्रतियोगिताओं में संस्थान मुख्यालय स्थित निदेशक कार्यालय एवं विभिन्न संभागों/इकाइयों के सभी वर्गो के अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढ़कर भाग लिया।

संस्थान मुख्यालय के साथ-साथ संस्थान के विभिन्न संभागों तथा क्षेत्रीय केंद्रों में भी हिंदी में जागरूकता का सृजन करने और हिंदीमय परिवेश बनाने के उद्देश्य से अपने स्तर पर अनेक प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया।

इसी क्रम में-

सूत्रकृमि विज्ञान संभाग: संभागाध्यक्ष डॉ. उमा राव की अध्यक्षता में हिंदी चेतना मास 2018 के उपलक्ष्य में सूत्रकृमि संभाग ने हिंदी चेतना दिवस का आयोजन कर दिनांक 24-09-2018 को हिंदी में प्रश्नोत्तरी प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। उक्त प्रतियोगिता में संभाग के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों ने बढ़-चढकर भाग लिया। इस प्रतियोगिता में पाँच टीमें बनाई गई जिसमें प्रत्येक टीम में छः प्रतिभागी शामिल किए गए। डॉ. हरेन्द्र कुमार प्रधान वैज्ञानिक तथा श्री जगन लाल नोडल अधिकारी (राजभाषा), गौरव ठकरान वरिष्ठ तकनीशियन व छात्र मनोरंजन दास, अमित आहूजा ने प्रतिभागियों से प्रश्न पूछने का कार्य किया। इस प्रतियोगिता के 12 चरणों में कुल 60 प्रश्न जिनमें सूत्रकृमि विज्ञान, सामान्य ज्ञान, कृषि, साहित्य, खेल एवं मुख्य शहरों के प्रसिद्ध स्मारकों के नाम तथा कुछ फिल्मों के प्रसिद्ध डाइलॉग से संबंधित प्रश्न पूछे गये थे, उक्त प्रतियोगिता में डॉ. उमा राव (अध्यक्ष) की टीम ने प्रथम स्थान प्राप्त किया व डॉ. चावला, प्रधान वैज्ञानिक की टीम ने द्वितीय स्थान तथा डॉ. अंजू कामरा, प्रधान वैज्ञानिक की टीम ने तृतीय स्थान प्राप्त किया।

उपर्युक्त प्रतियोगिता में पाँचों टीमों के प्रत्येक प्रतिभागी को पुरस्कार के रूप में संभागाध्यक्ष द्वारा प्रसिद्ध साहित्यकारों की, प्राकृतिक चिकित्सा एवं योग, योग और योगासन, योगासन और प्राणायाम आदि से संबंधित हिंदी की रु. 4256/- की पुस्तकें भेंट की गई। संभागाध्यक्ष, डॉ. उमा राव, प्रधान वैज्ञानिक डॉ. हरेन्द्र कुमार ने उक्त प्रतियोगिता के सफल आयोजन के लिए तथा सभी विजयी प्रतिभागियों को उनकी जीत पर हार्दिक बधाई दी।

पादप रोग विज्ञान संभाग: संभागाध्यक्ष डॉ. रश्मि अग्रवाल की अध्यक्षता में वैज्ञानिक, तकनीकी एवं प्रशासनिक अधिकारी/कर्मचारी एवं कुशल सहायी कर्मचारियों द्वारा अत्यधिक सरकारी कार्य राजभाषा हिंदी में करने तथा हिंदी के कुशल एवं प्रभावी प्रयोग की क्षमता बढ़ाने हेतु संभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति के माध्यम से पादप रोग विज्ञान संभाग की विषाणु विज्ञान इकाई के सभाभवन में दिनांक 26.10.2018 को हिंदी दिवस के उपलक्ष्य में दो प्रतियोगिताओं (आशुभाषण एवं प्रश्न मंच) का आयोजन किया गया। जिनमें आशुभाषण प्रतियोगिता में संभागीय वैज्ञानिक, तकनीकी एवं प्रशासनिक अधिकारी/कर्मचारी एवं कुशल सहायी कर्मचारियों ने भाग लिया तथा प्रश्न मंच, सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता केवल कुशल सहायी कर्मचारियों के लिए ही आयोजित की गई। इस सुअवसर पर श्री केशव देव उप निदेशक (राजभाषा) हिंदी अनुभाग तथा डॉ. ए.के. सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, सूत्रकृमि संभाग मुख्य अतिथि थे। प्रतियोगिताओं में विजयी

पुरस्कार प्राप्त करते हुए विजयी प्रतियोगी

प्रतिभागियों के लिए प्रथम, द्वितीय, तृतीय तथा प्रोत्साहन एवं दर्शक दीर्घा में उपस्थित विजयी दर्शकों के लिए दर्शक पुरस्कार वितरित किए गए।

इस अवसर पर मुख्य अतिथि ने संभागीय राजभाषा कार्यान्वयन समिति एवं प्रतिभागियों के उत्साह की प्रशंसा करते हुए, आयोजित प्रतियोगिताओं को और प्रभावशाली बनाने तथा प्रतिभागियों को उत्साहित करने के विषय में अपने विचार रखे। अंत में संभागाध्यक्ष ने सभी प्रतिभागियों तथा अतिथियों का प्रतियोगिता समारोह में सम्मिलित होने के लिए धन्यवाद किया।

कृषि प्रसार संभाग: संभागाध्यक्ष डॉ. प्रेमलता सिंह की अध्यक्षता में दिनांक 23 अगस्त, 2018 को राजभाषा हिंदी के उन्नयन हिंदी से संबंधित यथा - **सुलेखन प्रतियोगिता, कविता पाठ, "पोषण सुरक्षा में महिलाओं की भागीदारी"** विषय पर भाषण, **प्रश्नोत्तर प्रतियोगिता एवं अपना परिचय हिंदी में बोलना** (केवल कुशल सहायी कर्मचारियों के लिए) प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। उक्त प्रतियोगिताओं को सफल बनाने के लिए संभाग के सभी अधिकारियों/कर्मचारियों/विद्यार्थियों/

प्रतियोगता में भाग लेते प्रतियोगीगण

अनुसंधानकर्ताओं ने पूर्ण सहयोग के साथ बढ़-चढ़ कर भाग लिया। प्रतियोगिताओं को पारदर्शक व सफल बनाने के लिए एक निर्णायक मंडल का गठन किया गया। जिसमें डॉ. डी.के. सिंह, प्राध्यापक, कृषि अभियांत्रिकी संभाग, अध्यक्ष, डॉ. रवीन्द्र पडारिया, प्राध्यापक, कृषि प्रसार संभाग एवं श्री केशव देव, उप निदेशक (राजभाषा) सदस्य नामित किए गए।

मुख्य अतिथि से पुरस्कार प्राप्त करते हुए विजयी प्रतियोगीगण

अंत में सभी विजयी प्रतिभागियों को अपराह्न में मुख्य अतिथि डॉ. जे.पी. शर्मा, संयुक्त निदेशक (प्रसार) एवं कार्यवाहक संयुक्त निदेशक (अनुसंधान), भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, नई दिल्ली के कर कमलों से पुरस्कारों का वितरण किया गया। मुख्य अतिथि द्वारा कृषि प्रसार संभाग में आयोजित उक्त हिंदी प्रतियोगिताओं के सफल आयोजन पर अपनी खुशी जाहिर की तथा सभी विजयी प्रतिभागियों को उनकी जीत पर हार्दिक बधाई दी।

कृषि रसायन संभागः कृषि रसायन संभाग में दिनांक 28 एवं 29 सितंबर, 2018 को दो दिवसीय कार्यशाला का आयोजन किया गया, जिसमें हिंदी में शोध पत्र एवं पुस्तक प्रकाशन विषय पर डॉ. अशोक सिंह, प्रकाशन विभाग तथा डॉ. आर. आर. शर्मा, पी.एच.टी. संभाग ने व्याख्यान प्रस्तुत किए गए। संभाग के सभी अधिकारियों कर्मचारियों ने कार्यशाला में भाग लेकर कार्यशाला को सफल बनाया। इसके अलावा संभाग में हिंदी दिवस के अवसर पर कुछ प्रतियोगिताएं जिनमें हिंदी में टिप्पण लेखन व अनुवाद, आशुभाषण, श्रुतलेख एवं सामान्य ज्ञान (केवल कुशल सहायी वर्ग के कर्मचारियों के लिए) आदि का आयोजन किया गया, जिसमें संभाग के अधिकारियों/ कर्मचारियों ने पूरे उत्साह के साथ भाग लिया।

पर्यावरण विज्ञान एवं जलवायु समुत्थानशील कृषि केंद्र (सेस्करा)ः संस्थान में दिनांक 01.09.2018 से 30.09.2018 तक आयोजित हिंदी चेतना मास के दौरान पर्यावरण विज्ञान एवं जलवायु समुत्थानशील कृषि केंद्र (सेस्करा) में कार्यवाहक संभागाध्यक्ष डॉ. भूपेन्द्र सिंह, की अध्यक्षता में दिनांक 15 सिंतबर, 2018 को हिंदी दिवस के रूप में मनाया गया। जिसमें ''प्रश्न-मंच'' प्रतियोगिता का आयोजन किया गया, जिसका संचालन डॉ. रेणु सिंह, वरिष्ठ वैज्ञानिक द्वारा किया गया। उक्त प्रतियोगिता को सफल बनाने के लिए संभाग के सभी अधिकारियों/ कर्मचारियों/विद्यार्थियों ने पूर्ण सहयोग के साथ बढ़-चढ़ कर भाग लिया। इस प्रश्न-मंच प्रतियोगिता के लिए 4-4 सदस्यों की चार (ए, बी, सी एवं डी) टीम बनाई गई। हर टीम से हिंदी साहित्य, कवि, कविता, गीत एवं संगीतकार, हिंदी लोकोक्तियों से संबंधित प्रश्न पूछे गए तथा प्रत्येक भाग पूर्ण होने के बाद 2-2 प्रश्न दर्शकों से पूछे गए।

पुरस्कार स्वरूप पुस्तक प्राप्त करते हुए विजयी प्रतियोगी

जिसमें टीम-ए ने प्रथम स्थान प्राप्त किया तथा टीम डी, टीम बी और टीम सी ने द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ स्थान प्राप्त किया।

अंत में उक्त प्रतियोगिता में विजयी रहे प्रतिभागियों को डॉ. सूरा नरेश कुमार, प्राध्यापक द्वारा पुरस्कार के रूप में पुस्तक प्रदान की गई तथा सभी अधिकारियों/ कर्मचारियों को श्री रमेश चंद हरित, नोडल अधिकारी (रा.भा.) द्वारा धन्यवाद दिया गया।

जैव रसायन संभागः हर वर्ष की भांति इस वर्ष भी संस्थान के जैव रसायन संभाग में दिनांक 15 सितंबर, 2018 को प्रातः 10:30 बजे ''हिंदी में एक परिचर्चा'' का आयोजन किया गया, जिसका विषय ''किसानों की आय वृद्धि में कृषि अनुसंधान की भूमिका'' रखा गया। इस परिचर्चा में पूरे संस्थान से प्रतिभागी आमंत्रित किए गए और प्रत्येक संभाग में पैम्फलेट भेज कर सूचना प्रसारित की गई। संस्थान के विभिन्न संभागों से 15 प्रतिभागियों ने अपने-अपने नामांकन भेजे। प्रतिभागियों के प्रोत्साहन

परिचर्चा पर प्रारंभिक टिप्पणी करती हुई संभागाध्यक्ष डॉ. शैली प्रवीण

पुरस्कार प्राप्त करते हुए विजयी प्रतियोगी

हेतु अच्छे वक्ताओं के लिए 1000/- एवं 500/- रुपये का एक प्रथम पुरस्कार तथा दो सांत्वना पुरस्कार रखे गए। निर्णय को निष्पक्ष करने के लिए निर्णायक मंडल के सदस्य के रूप में डॉ. मानसिंह, परियोजना निदेशक, जल प्रौद्योगिकी संभाग, श्री केशव देव, उप निदेशक (राजभाषा) तथा डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, सेस्करा को आमंत्रित किया गया।

परिचर्चा के प्रारंभ में सर्वप्रथम डॉ. किश्वर अली, नोडल अधिकारी राजभाषा ने निर्णायक मंडल के सदस्यों, सभी प्रतिभागियों एवं सभा में उपस्थित श्रोताओं का स्वागत किया और परिचर्चा के नियमों से सभी को अवगत कराया। इसके पश्चात् डॉ. शैली प्रवीण, अध्यक्ष, जैव रसायन संभाग ने भी सभी का स्वागत किया और परिचर्चा के विषय पर प्रकाश डालते हुए कहा की इस परिचर्चा में आपके द्वारा दिए गए विचार और सुझाव किसानों की आय वृद्धि के सुधार में महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करेंगे। परिचर्चा में 12 प्रतिभागियों ने अपने विचार प्रस्तुत किए। निर्णायक मंडल के सदस्यों ने भी अपने विचार प्रस्तुत करते हुए कहा कि इस प्रकार की परिचर्चाएं अन्य संभागों में भी होनी चाहिए। उन्होंने इसे राजभाषा के प्रचार-प्रसार में एक अच्छा कदम बताया।

डॉ. मानसिंह ने कहा कि हमारी दृष्टि में सभी प्रतिभागियों के विचार सुंदर, सूचनाप्रद और सराहनीय हैं और सभी विजेता हैं। परिचर्चा के विजयी के रूप में डॉ. अरुणा त्यागी, प्राध्यापक, जैव रसायन संभाग (प्रथम पुरस्कार), डॉ. गीता सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, सूक्ष्म जीव विज्ञान (प्रोत्साहन पुरस्कार) तथा किशन सिंह, सहायक मुख्य तक. अधिकारी, कैटेट (प्रोत्साहन पुरस्कार) के नाम की घोषणा की गई। इस परिचर्चा के अंत में प्रतिभागियों ने भी अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त की और परिचर्चा की सराहना करते हुऐ उन्होंने अपने-अपने संभाग में इस तरह के कार्यक्रम करने की बात भी कही। परिचर्चा के अंत में डॉ. शैली प्रवीण, संभागाध्यक्ष, जैव रसायन संभाग ने विजयी प्रतिभागियों को बधाई दी और परिचर्चा में आने के लिए धन्यवाद दिया। प्रतियोगिता के समापन पर डॉ. किश्वर अली ने सभी निर्णायक मंडल के सदस्यों, प्रतिभागियों तथा संभागाध्यक्ष का परिचर्चा में सहयोग के लिए धन्यवाद दिया। इसके साथ ही परिचर्चा की समाप्ति उपरांत संभागाध्यक्ष ने सभी प्रतिभागियों को संभाग का एक भ्रमण करवाया तथा संभाग में होने वाले अनुसंधान की जानकारी उपलब्ध करवाई। साथ ही संभाग में विभिन्न अनुसंधान से संबंधित पैम्फलेट भी उपलब्ध कराए गए।

भा.कृ.अनु.प.-भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, करनाल : नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति, करनाल द्वारा वर्ष 2017-18 में राजभाषा में उल्लेखनीय कार्य के लिए इस केंद्र को तृतीय पुरस्कार एवं डॉ. रविन्द्र कुमार को राजभाषा प्रभारी के रूप में उल्लेखनीय कार्य के लिए प्रशस्ति पत्र प्रदान किया गया। राजभाषा कार्यान्वयन संबंधी गतिविधियों के प्रोत्साहन के लिए दिनांक 14 जून, 2018 को केंद्र पर ''राजभाषा प्रोत्साहन कार्यक्रम'' का आयोजन किया गया। इसके अंतर्गत आशुभाषण तथा भाषण प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया। जिसमें प्रतिभागियों को प्रथम, द्वितीय, तृतीय व प्रोत्साहन पुरस्कार स्वरुप नगद राशि तथा प्रमाण पत्र देकर सम्मानित किया गया।

हिंदी पखवाड़ा संबंधी गतिविधियां: संस्थान, क्षेत्रीय स्टेशन, करनाल में डॉ. विनोद कुमार पण्डिता, अध्यक्ष, भा.कृ.अ.सं. की अध्यक्षता में दिनांक 01 सितंबर से 15 सितंबर, 2018 तक हिंदी पखवाड़ा मनाया गया। पखवाड़े के दौरान दिनांक 11 सितंबर, 2018 को वैज्ञानिक वर्ग के लिए निबंध लेखन प्रतियोगिता, तकनीकी एवं प्रशासनिक वर्ग के कर्मचारियों के लिए पत्र लेखन प्रतियोगिता तथा कुशल सहायी एवं दैनिक वेतन भोगी कर्मचारियों के लिए सुलेख प्रतियोगिता का आयोजन किया गया। इन प्रतियोगिताओं में संस्थान के सभी वर्गो के कर्मचारियों ने बढ़-चढ़ कर भाग लिया। सभी वर्गो में प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार प्रदान किए गए। पखवाड़े के दौरान निबंध लेखन प्रतियोगिता के वैज्ञानिक वर्ग में डॉ. अनुजा गुप्ता, प्रधान वैज्ञानिक ने प्रथम, डॉ. अश्वनी कुमार, वरिष्ठ वैज्ञानिक ने द्वितीय, डॉ. निशा कांत चौपड़ा, प्रधान वैज्ञानिक एवं डॉ. राम निवास यादव, प्रधान वैज्ञानिक ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। पत्र लेखन प्रतियोगिता में तकनीकी वर्ग में श्रीमती सुषमा, वरिष्ठ तकनीकी सहायक ने प्रथम, श्री धीरेन्द्र चौधरी, तकनीकी अधिकारी ने द्वितीय तथा श्री विनोद कुमार, मुख्य तकनीकी अधिकारी ने तृतीय स्थान प्राप्त किया। सुलेख प्रतियोगिता में कुशल सहायी एवं दैनिक सहायी वर्ग में श्री राम शरण, कुशल सहायी कर्मचारी ने प्रथम, श्री केदार नाथ, कुशल सहायी कर्मचारी ने द्वितीय एवं श्री राम नारायण, कुशल सहायी कर्मचारी तथा श्री बीर सिंह, दैनिक सहायी कर्मचारी ने तृतीय स्थान प्राप्त किया।

तदुपरांत 15 सिंतबर, 2018 को हिंदी पखवाड़े का समापन समारोह आयोजित कर सभी विजेताओं को नकद पुरस्कार एवं प्रमाण पत्र देकर सम्मानित किया गया। इस समारोह के निर्णायक एवं मुख्य अतिथि डॉ. रतन तिवारी, प्रधान वैज्ञानिक, भारतीय गेहूं एवं जौ अनुसंधान संस्थान, करनाल द्वारा सभी विजेताओं को हार्दिक बधाई दी। कार्यक्रम के अध्यक्ष डॉ. विनोद कुमार पण्डिता एवं संयोजक व राजभाषा प्रभारी, डॉ. रविन्द्र कुमार ने राजभाषा हिंदी का महत्व बताते हुए राजभाषा के नियमों व अधिनियमों की जानकारी दी।

पुरस्कार प्राप्त करते हुए विजयी प्रतियोगी

अत: हिंदी चेतना मास के दौरान 28 सितंबर, 2018 को मुख्यालय में जैविक खेती बनाम रासायनिक खेती विषय पर पावर प्वाइंट प्रतियोगिता में डॉ. सुरेश चन्द राणा, प्रधान वैज्ञानिक एवं डॉ. रविन्द्र कुमार, वैज्ञानिक ने पाँचवा स्थान प्राप्त किया।

भा.कृ.अनु.प- भारतीय कृषि अनुसंधान संस्थान, क्षेत्रीय केंद्र, पुणे : इस क्षेत्रीय केंद्र में दिनांक 24 नवंबर, 2018 को एक हिंदी कार्यशाला का आयोजन किया गया। जिसमें मुख्य अतिथि के रूप में श्रीमती स्वाति चढ्ढ़ा, हिंदी अधिकारी राष्ट्रीय रासायनिक प्रयोगशाला, पुणे को आमंत्रित किया गया था। उन्होंने "राजभाषा में किए जा रहे कार्यों की गुणवत्ता बनाए रखने के उपाय" विषय पर व्याख्यान दिया। इस कार्यशाला में कार्यालय में कार्य करने हेतु सरल हिंदी के महत्व पर विस्तार से बताया गया। कर्मचारियों ने कार्यालय में कार्य करने हेतु हिंदी के प्रयोग में उन्हें जो दिक्कतें आती है, उनके बारे में चर्चा की, मुख्य अतिथि ने उन पर सुझाव दिए। इसके अतिरिक्त मुख्य अतिथि ने राजभाषा के निरंतर प्रयास करने तथा उसकी गुणवत्ता बनाए रखने के महत्व पर भी जोर दिया।

कार्यशाला में संबोधित करती हुई मुख्य अतिथि

हिंदी वार्षिकोत्सव एवं पुरस्कार-वितरण समारोह

संस्थान में दिनांक 19 दिसंबर, 2018 को हिंदी वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह का आयोजन किया गया। जिसमें हिंदी चेतना मास के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं और वर्षभर चलने वाली विभिन्न पुरस्कार योजनाओं के विजेताओं को पुरस्कार प्रदान किए गए। इस पुरस्कार वितरण समारोह के मुख्य अतिथि प्रो. आर.बी. सिंह, पूर्व निदेशक, भा.कृ.अ.सं., नई दिल्ली थे। समारोह की अध्यक्षता संस्थान के निदेशक

मुख्य अतिथि डॉ. आर.बी. सिंह को सम्मानित करते हुए संस्थान के निदेशक डॉ. ए.के. सिंह

डॉ. ए. के. सिंह, भा.कृ.अ.सं. ने की। समारोह के प्रारम्भ में संयुक्त निदेशक (अनुसंधान) डॉ. अशोक कुमार सिंह ने सभी का स्वागत किया। समारोह के अध्यक्ष डॉ. ए.के. सिंह ने मुख्य अतिथि का स्मृति चिह्न व शॉल से अभिनंदन किया। उप निदेशक (राजभाषा) श्री केशव देव

समारोह को संबोधित करते हुए मुख्य अतिथि डॉ. आर.बी. सिंह

ने वर्ष 2017-18 की संस्थान की राजभाषा प्रगति रिपोर्ट प्रस्तुत की। संस्थान के उक्त समारोह में मुख्य अतिथि द्वारा संस्थान की "गृह पत्रिका पूसा-सुरभि 2017-18" के अंक का भी विमोचन किया गया। साथ ही उन्होंने हिंदी चेतना मास के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं के प्रतिभागी विजेताओं को शील्ड एवं प्रमाण पत्र देकर सम्मानपूर्वक पुरस्कृत किया गया। मुख्य अतिथि ने अपने वक्तव्य में संस्थान में राजभाषा हिंदी

की प्रगति की भूरि-भूरि प्रशंसा की। समारोह के अध्यक्ष डॉ. ए.के. सिंह, निदेशक भा.कृ.अनु.सं., नई दिल्ली ने राजभाषा के महत्व पर प्रकाश डालते हुए सभी अधिकारियों/कर्मचारियों को अपना अधिकाधिक सरकारी कामकाज हिंदी में कर राजभाषा विभाग द्वारा निर्धारित लक्ष्यों को प्राप्त करने हेतु आवाहन किया। सहायक निदेशक (राजभाषा) सुश्री सुनीता ने मंच संचालन किया।

पुरस्कार व सम्मान

नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) द्वारा सदस्य कार्यालयों में बृहत कार्यालय वर्ग के लिए पुरस्कार योजना (2018-19)

विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति की बैठक में डॉ. के.वि.प्रभु, पौधा किस्म एवं किसान संरक्षण प्राधिकरण, अध्यक्ष, नगर राजभाषा कार्यान्वयन समिति (उत्तरी दिल्ली) ने वर्ष 2018-19 के राजभाषा कार्यान्वयन पुरस्कारों के अंतर्गत बृहत कार्यालय वर्ग में इस वर्ष भी संस्थान को राजभाषा हिंदी में उत्कृष्ट कार्यान्वयन करने पर पुरस्कार प्रदान किया गया। साथ ही नराकास द्वारा आयोजित लोकोक्तियों का पल्लवन प्रतियोगिता में संस्थान से भाग लेने वाले कार्मिक सुश्री शिवानी चौधरी, सहायक एवं श्री नीरज कुमार, पूर्व सहायक को नकद पुरस्कार व प्रशस्ति पत्र से सम्मानित किया गया।

संस्थान द्वारा हिंदी में सर्वाधिक सरकारी कामकाज के लिए जारी नकद पुरस्कार योजना (2017-18)

संस्थान में विगत वर्षों की भांति इस वर्ष भी यह पुरस्कार योजना, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशों के अनुसार चलाई गई जिसमें वर्षभर मूलरूप से सरकारी कामकाज हिंदी में करने के लिए नकद पुरस्कार योजना के तहत संस्थान के कुल चार कर्मचारियों को नकद पुरस्कार प्रदान किए गए।

अधिकारियों द्वारा हिंदी में डिक्टेशन देने के लिए पुरस्कार योजना 2017-18

यह पुरस्कार योजना, राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशानुसार लागू की गई है। जिसमें अधिकारियों द्वारा अधिक से अधिक हिंदी में डिक्टेशन देने हेतु अधिकारी द्वारा दिये गये डिक्टेशन की मात्रा व गुणवत्ता को ध्यान में रखते हुए यह पुरस्कार दिया जाता है। गत वर्ष यह पुरस्कार डॉ. जे.पी.एस. डबास, अध्यक्ष, कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र को प्रदान किया गया। जिसमें प्रत्येक को 5000/- का नकद पुरस्कार दिया गया।

अन्य पुरस्कार योजनाएं/प्रतियोगिताएं

वर्ष 2017-18 में कर्मचारियों को हिंदी में अपना अधिकाधिक सरकारी कामकाज करने के लिए प्रेरित करने हेतु विभिन्न प्रतियोगिताएं/प्रोत्साहन योजनाएं चलाई गई। रिपोर्टाधीन अवधि में निम्न प्रतियोगिताओं/पुरस्कार योजनाओं का आयोजन किया गया।

हिंदी पत्र व्यवहार प्रतियोगिता (2017-18)

संस्थान के विभिन्न संभागों/इकाइयों/अनुभागों/केंद्रों के बीच वर्ष 2017-18 में आयोजित यह पुरस्कार योजना राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार के निर्देशानुसार लागू की गई है, जिसमें वर्षभर हिंदी में सर्वाधिक कार्य करने वाले दो संभागों व दो क्षेत्रीय केंद्रों को तथा दो अनुभाग/इकाइयों को शील्ड देकर सम्मानित किया गया। रिपोर्टाधीन वर्ष में संभाग स्तर पर खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग को प्रथम व कृषि रसायन संभाग को द्वितीय क्षेत्रीय केंद्र स्तर पर क्षेत्रीय केंद्र इंदौर को प्रथम व क्षेत्रीय केंद्र शिमला को

द्वितीय तथा अनुभाग/इकाई स्तर पर कृषि प्रौद्योगिकी आकलन एवं स्थानांतरण केंद्र को प्रथम एवं फोसू इकाई को द्वितीय पुरस्कार की शील्ड प्रदान की गई।

विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में हिंदी में कृषि विज्ञान लेखन के लिए पुरस्कार

इस पुरस्कार योजना के तहत कैलेन्डर वर्ष 2018 में प्रकाशित विभिन्न वैज्ञानिकों/ तकनीकी अधिकारियों के लेखों के लिए प्रतियोगिता आयोजित की गई। प्रथम, द्वितीय एवं तृतीय पुरस्कार के रूप में क्रमश: 10,000/- रु., 7,000/- रु. एवं 5,000/- रु. प्रदान किए गए।

पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार

पूसा विशिष्ट हिंदी प्रवक्ता पुरस्कार के अंतर्गत पाठ्यक्रम समन्वयक की सिफारिशों और प्रशिक्षणार्थियों की प्रतिपुष्टि (फीडबैक) के आधार पर इसको मूल्यांकित किया जाता है। इसमें पुरस्कार के रूप में 10,000/- रुपये का नकद पुरस्कार और एक प्रमाण-पत्र दिया जाता है।

हिंदी में पॉवर प्वाइंट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता

इस वर्ष भी संस्थान के वैज्ञानिक विषयों में राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से संस्थान के तकनीकी व वैज्ञानिक वर्ग के लिए कृषि विज्ञान से संबंधित ''जैविक खेती बनाम रासायनिक खेती'' विषय पर दिनांक 28.09.2018 को हिंदी में पॉवर प्वांइट प्रस्तुतीकरण प्रतियोगिता आयोजित की गई। प्रतियोगिता में संस्थान के कार्यवाहक संयुक्त निदेशक (अनुसंधान), डॉ. जे.पी. शर्मा ने प्रतियोगिता के निर्णायकों एवं सभी प्रतिभागियों का स्वागत किया। प्रतियोगिता का संचालन करते हुए उप निदेशक (राजभाषा) श्री केशव देव ने प्रतियोगिता के नियमों की जानकारी दी। प्रतियोगिता के सभी विजेताओं को प्रथम, द्वितीय और तृतीय पुरस्कारों के रूप में क्रमश: 10,000/- रु., 7,000/- रु. एवं 5,000/- रु. तथा 3,000-3,000/- रु. के दो प्रोत्साहन पुरस्कार की नकद राशि प्रदान की गई। साथ ही सभी प्रतिभागियों को प्रशस्ति पत्र प्रदान किए गए।

राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार

संस्थान में राजभाषा हिंदी के प्रगामी प्रयोगों के सफल कार्यान्वयन हेतु प्रत्येक संभाग/केंद्र/इकाई एवं हिंदी अनुभाग के बीच बेहतर समन्वय स्थापित करने के उद्देश्य से संपर्क सूत्र के रूप में प्रत्येक संभाग/केंद्र/इकाई में राजभाषा नोडल अधिकारी नामित किए गए हैं और प्रत्येक वर्ष सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी को चिन्हित कर उसे पुरस्कृत करने के लिए सर्वश्रेष्ठ राजभाषा नोडल अधिकारी पुरस्कार योजना लागू की गई है, जिसमें 5000/- रु. का नकद पुरस्कार रखा गया है। जिसके फलस्वरूप संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन में निरंतर प्रगति प्राप्त हो रही है। गत वर्ष की भांति उक्त योजना

के तहत वर्ष 2017-18 में सर्वश्रेष्ठ नोडल अधिकारी का पुरस्कार संयुक्त रूप से डॉ. महेश्वर सिंह राठी, मुख्य तकनीकी अधिकारी, सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग एवं डॉ. राम रोशन शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, खाद्य विज्ञान एवं फसलोत्तर प्रौद्योगिकी संभाग को प्रदान किया गया।

राजभाषा कार्यान्वयन समिति

संस्थान में राजभाषा अधिनियम 1963 एवं 1976 के अनुसार राजभाषा नीति व नियमों का अनुपालन एवं कार्यान्वयन सुनिश्चित करने के लिए निदेशक की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन समिति गठित की गई है। जिसमें संस्थान के सभी संयुक्त निदेशक, संभागाध्यक्ष, लेखा नियंत्रक इसके पदेन सदस्य है जबकि उप निदेशक (राजभाषा) सदस्य सचिव हैं। राजभाषा विभाग के आदेशानुसार वर्ष में इसकी (प्रत्येक तिमाही में एक) चार बैठकें आयोजित की जानी है। रिपोर्टाधीन अवधि में इस समिति की बैठक नियमित रूप से प्रत्येक तिमाही में आयोजित की गई और संस्थान में राजभाषा के प्रभावी कार्यान्वयन के लिए आवश्यक सुझाव व निर्देश दिए गए। इसी प्रकार प्रशासन में राजभाषा कार्यान्वयन

का प्रभावी अनुपालन सुनिश्चित करने के लिए संयुक्त निदेशक (प्रशासन) की अध्यक्षता में तथा सभी संभागों व केंद्रों में उनके अध्यक्ष की अध्यक्षता में राजभाषा कार्यान्वयन उप समितियां गठित हैं जिनकी नियमित रूप से प्रत्येक तिमाही में बैठकें आयोजित की जाती हैं।

राजभाषा के प्रगामी प्रयोग का निरीक्षण

राजभाषा कार्यान्वयन समिति की सिफारिश एवं राजभाषा विभाग, गृह मंत्रालय, भारत सरकार द्वारा जारी वार्षिक कार्यक्रम में निर्धारित लक्ष्यों को पूरा करने के लिए डॉ. इंद्रमणि, कृषि अभियांत्रिकी संभाग की अध्यक्षता में गठित संस्थान राजभाषा निरीक्षण समिति द्वारा सभी संभागों, केंद्रों, इकाइयों एवं अनुभागों में राजभाषा के प्रगामी प्रयोग का जायजा लेने हेतु निरंतर निरीक्षण जारी

है। इस नियमित निरीक्षण के साथ समिति द्वारा किसी भी संभाग/अनुभाग/इकाई का राजभाषा की प्रगति का जायजा लेने के लिए समय-समय पर औचक निरीक्षण भी किया जाता है। निरीक्षण उपरांत संबंधित संभागों/अनुभागों/इकाइयों, केंद्रों को राजभाषा कार्यान्वयन में वांछित प्रगति के लिए आवश्यक सुझाव देते हुए निरीक्षण रिपोर्ट प्रेषित की जा रही है। इसके साथ ही उक्त सभी संभागों/अनुभागों/इकाइयों का समय-समय पर औचक निरीक्षण भी किया जाता है।

कवि सम्मेलन, नुक्कड़ नाटक (कार्यशाला) सह वार्षिक पुरस्कार वितरण समारोह 2018

संस्थान में राजभाषा हिंदी के प्रचार-प्रसार को वांछित गति प्रदान करने तथा राजभाषा हिंदी के प्रति संस्थान के विभिन्न वर्गो के अधिकारियों व कर्मचारियों में जागरूकता लाने और प्रोत्साहित करने के लिए हिंदी चेतना मास 2018 के दौरान विभिन्न जिन प्रतियोगिताओं का आयोजन किया गया था उन प्रतियोगिताओं में सफल व विजयी प्रतिभागियों को पुरस्कार वितरण के उद्देश्य से गत वर्षों की भांति इस वर्ष भी दिनांक 19 दिसंबर, 2018 को 'हिंदी वार्षिकोत्सव-2018 का आयोजन किया गया। इस समारोह में मुख्य अतिथि प्रो.आर.बी. सिंह, पूर्व

निदेशक, भा.कृ.अनु.सं. को आमंत्रित किया गया था। समारोह में मुख्य अतिथि ने उक्त चेतना मास के दौरान आयोजित प्रतियोगताओं के विजयी प्रतियोगियों को, वार्षिक हिंदी प्रोत्साहन पुरस्कार योजना की निर्णायक समिति एवं संस्थान की राजभाषा गृह पत्रिका पूसा सुरभि के संपादन मंडल को प्रशस्ति पत्र व स्मृति चिह्न प्रदान किए। इस समारोह में कवि सम्मेलन एवं लघु नाटिका को एक कार्यशाला के रूप में आयोजित भी किया गया। जिसमें अधिकारियों/कर्मचारियों सरकारी कामकाज में राजभाषा हिंदी का अधिकाधिक प्रयोग करने के प्रति प्रेरित किया गया।

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उप समिति द्वारा संस्थान का निरीक्षण

दिनांक 14 जनवरी, 2019 को होटल अशोका, नई दिल्ली में माननीय संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उप समिति द्वारा संस्थान का हिंदी में हो रहे कामकाज का निरीक्षण किया गया। जिसमें समिति ने संस्थान में राजभाषा कार्यान्वयन की भूरि-भूरि प्रशंसा की। उक्त समिति बैठक में संस्थान की ओर से डॉ. ए.के. सिंह निदेशक, डॉ. अशोक कुमार सिंह, संयुक्त निदेशक (अनुसंधान), डॉ. जे.पी. शर्मा, संयुक्त निदेशक (प्रसार), श्री के. सी जोशी संयुक्त निदेशक (प्रशासन) श्री केशव देव, उप निदेशक (रा.भा.), सुश्री सुनीता, सहायक निदेशक (रा.भा.) एवं निरीक्षण हेतु नामित समिति समन्वयक डॉ. ए. के. सिंह, प्रधान वैज्ञानिक उपस्थित रहे, वहीं भा.कृ.अनु. परिषद, मुख्यालय नई दिल्ली की ओर से डॉ. डी. के. यादव, सहायक महानिदेशक व श्रीमती सीमा चौपड़ा, निदेशक (रा.भा.) ने भाग लिया।

हिंदी चेतना मास 01 सितंबर - 30 सितंबर, 2018 के दौरान आयोजित विभिन्न प्रतियोगिताओं में पुरस्कृत प्रतियोगी

क्र. सं.	पुरस्कृत प्रतियोगी का नाम व स्थापना	पुरस्कार	राशि (रु.)
(1)	**निबंध प्रतियोगिता**		
1	सुश्री शिवानी चौधरी, सहायक कार्मिक v निदेशालय	प्रथम	2500/-
2	श्री शशिकांत सिन्हा, सहायक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र	द्वितीय	2000/-
3	श्री नीरज कुमार, सहायक, आनुवंशिकी संभाग	तृतीय	1500/-
4	डॉ. कमलेश कुमार शर्मा, मु.त.अ., कृषि अर्थशास्त्र संभाग	प्रोत्साहन	600/-
(2)	**हिंदी टिप्पण एवं प्रारूप लेखन**		
1	श्री आनंद विजय दुबे, व.त.अ. कैटेट इकाई	प्रथम	2500/-
2	श्री शशिकांत सिन्हा, सहायक, जल प्रौद्योगिकी केंद्र	द्वितीय	2000/-
3	श्री नरेश चन्द्र बौड़ाई, सहायक स्नातकोत्तर वि.- I	तृतीय	1500/-
4	श्री विरम सिंह, सहायक, सं.कृ.प्रौ.केंद्र	प्रोत्साहन	600/-
(3)	**हिंदी काव्य पाठ प्रतियोगिता**		
1	डॉ. लिवलीन शुक्ला, प्र.वै., सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग श्री जय प्रकाश सिंह, व.त.अ., सस्य विज्ञान संभाग	प्रथम	1250/- 1250/-
2	डॉ. बृज बिहारी शर्मा, वैज्ञानिक, शाकीय विज्ञान संभाग श्री शिव कुमार सिंह, त. सहायक, आनुवंशिकी संभाग	द्वितीय	1000/- 1000/-
3	श्रीमती नीलम, स.प्र.अ., खा.वि.फ.प्रौ. संभाग डॉ. करुणा दीक्षित, मु.त.अ., पुस्तकालय सेवाएं	तृतीय	750/- 750/-
4	डॉ. गीता सिंह, प्र.वैज्ञानिक, सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग मोहम्मद इस्लाम, व.त.अ., खा.वि.फ.प्रौ. संभाग	प्रोत्साहन	300/- 300/-
(4)	**हिंदी आशु भाषण प्रतियोगिता**		
1	डॉ. करुणा दीक्षित, मु.त.अ., पुस्तकालय सेवाएं	प्रथम	2500/-
2	श्री लोकेंद्र सिंह, तकनीकी सहायक, सं.कृ.प्रौ.केंद्र डॉ. अर्चना सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, जैव रसायन संभाग	द्वितीय	1000/- 1000/-
3	मोहम्मद इस्लाम, व.त.अ., खा.वि.फ.प्रौ.सं. श्री किशन सिंह, स.मु.त.अधिकारी, कैटेट	तृतीय	750/- 750/-
4	डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, सेस्करा	प्रोत्साहन	600/-
(5)	**अनुवाद प्रतियोगिता**		

1	सुश्री कृति गुप्ता, सहायक, कृषि अर्थशास्त्र संभाग	प्रथम	2500/-
2	डॉ. इंदु चोपड़ा, वैज्ञानिक, कृषि रसायन संभाग	द्वितीय	2000/-
3	डॉ. हरीश कुमार, स.मु.त.अ., एटिक इकाई	तृतीय	1500/-
4	डॉ. महेश्वर सिंह राठी, मु.त.अ., सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग	प्रोत्साहन	600/-
(6)	प्रश्न मंच प्रतियोगिता		
1	टीम- 5 श्री मेघराज मीणा, सहायक, रसायन संभाग श्री मुकुन्द कुमार, सहायक, स्नात.विद्या.-II श्री वीरेन्द्र कुमार, सहायक, निर्माण अनुभाग श्री अश्विनी कुमार, सहायक, कार्मिक-III	प्रथम (2500/-)	 625/ 625/ 625/ 625/
2	टीम- 6 डॉ. मीनाक्षी ग्रोवर, प्र.वै., सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग डॉ. एम.एस. राठी, मु.त.अ., सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग डॉ. ओम प्रकाश सिंह, प्रधान वैज्ञानिक, कृषि प्रसार श्री विजयभान सिंह, व.त.स., कैटेट संभाग	द्वितीय (2000/-)	 500/- 500/- 500/- 500/-
3	टीम- 8 श्री हिंमाशु शर्मा, सहायक, कीट विज्ञान संभाग श्री नीरज कुमार, सहायक, आनुवंशिकी संभाग श्री देवेश सिंह, सहायक, विधि अनुभाग श्री सुमित कुमार, सहायक, सूत्रकृमि विज्ञान संभाग	तृतीय (1500/-)	 375/- 375/- 375/- 375/-
4	टीम- 2 सुश्री शिवानी चौधरी, सहायक, कार्मिक-V श्री रूपेश गुप्ता, सहायक, कार्मिक-II सुश्री वन्दना रावत, सहायक, सेस्करा डॉ. रेणू सिंह, वरि. वैज्ञानिक, सेस्करा	प्रोत्साहन (600/-)	 150/- 150/- 150/- 150/-
	दर्शक पुरस्कार (प्रश्नमंच प्रतियोगिता)		
1.	श्री विक्रम सिंह, कुशल सहा. कर्मचारी, स्नात.विद्या.-II	--	300/-
2.	डॉ. अतुल कुमार, प्र.वैज्ञानिक, बीज विज्ञान एवं प्रौ. संभाग	--	300/-
3.	सुश्री संतोष गौतम, सहायक, पी.एम.ई. निदेशालय	--	300/-
4.	डॉ. कमलेश कुमार शर्मा, मु.त.अ., कृषि अर्थशास्त्र संभाग	--	300/-
5.	डॉ. राजेश कुमार, मु.त.अ., सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग	--	300/-
6.	श्री दिनेश कुमार गुप्ता, कु.स.क. सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग	--	300/-
(7)	**वाद-विवाद प्रतियोगिता**		
1	सुश्री शिवानी चौधरी, सहायक, कार्मिक-V, निदेशालय	प्रथम	2500/-
2	श्री जय प्रकाश, व.त.अ., सस्य विज्ञान संभाग	द्वितीय	2000/-
3	श्री किशन सिंह, स.मु.तक.अधिकारी, कैटेट	तृतीय	1500/-

4	डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्रधान वैज्ञानिक, सेस्करा	प्रोत्साहन	600/-
(8)	**श्रुतलेख प्रतियोगिता**		
1	श्री आनंद विजय दुबे, व.त.अ. कैटेट	प्रथम	2500/-
2	श्री नरेश चन्द्र बौड़ाई, सहायक, स्नात.विद्या.-I	द्वितीय	2000/-
3	सुश्री कृति गुप्ता, सहायक, कृषि अर्थशास्त्र संभाग	तृतीय	1500/-
4	सुश्री कमलेश मोंगा, सहायक, पी.एम.ई., निदेशालय	प्रोत्साहन	600/-
(9)	**सामान्य ज्ञान प्रतियोगिता**		
1	श्री विनोद कुमार, कु.स.क., परिवहन अनुभाग, निदेशालय	प्रथम	2500/-
2	श्री नवीन कुमार, दैनिक वेतन भोगी, बायोमास यूनिट, सस्य विज्ञान संभाग श्री दिनेश कुमार गुप्ता, कु.स.क. सूक्ष्म जीव विज्ञान संभाग	द्वितीय	1000/- 1000/-
3	श्री रोहित कुमार, कु.स.क., विधि अनुभाग, निदेशालय	तृतीय	1500/-
4	श्री विक्रम सिंह, कु.स.क., स्नात.विद्या.-II	प्रोत्साहन	600/-
(10)	**हिंदी टंकण प्रतियोगिता**		
1	श्री चन्द्रेश्वर कापर, सहायक, निदेशालय	प्रथम	2500/-
2	श्रीमती मधुबाला, वरिष्ठ लिपिक, स्नातकोत्तर विद्यालय-I	द्वितीय	2000/-
3	सुश्री मनीषा, आशुलिपिक ग्रेड-3, खा.वि.फ.प्रौ.सं.	तृतीय	1500/-
4	सुश्री विनीता, सहायक, पुस्तकालय सेवाएं	प्रोत्साहन	600/-
(11)	**हिंदी में पॉवर प्वाइंट प्रतियोगिता**		
1.	डॉ. ज्ञान प्रकाश मिश्र, वरिष्ठ वैज्ञानिक, आनुवंशिकी संभाग डॉ. दिनेश कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, सस्य विज्ञान संभाग	प्रथम	5000/- 5000/-
2	डॉ. अतुल कुमार, प्रधान वैज्ञानिक, बीज विज्ञान एवं. प्रौ. सं. डॉ. दिनेश कुमार शर्मा, प्रधा. वैज्ञानिक, सेस्करा संभाग	द्वितीय	3500/- 3500/-
3	डॉ. एन. वी. कुम्हारे, प्रभारी, एटिक इकाई श्री वीरेंद्र कुमार, व.त.अ., जल प्रौद्योगिकी केंद्र	तृतीय	2500/- 2500/-
4.	डॉ. गीता सिंह, प्रधा. वैज्ञानिक, सूक्ष्मजीव विज्ञान संभाग श्री आनंद विजय दुबे, व.त.अ., कैटेट इकाई डॉ. किश्वर अली, मु.त.अ., जैवरसायन विज्ञान संभाग	चतुर्थ	1000/- 1000/- 1000/-
5.	डॉ. जे.पी.एस. डबास, प्रभारी, कैटेट इकाई डॉ. रविन्द्र कुमार, वैज्ञानिक, क्षेत्रीय केंद्र करनाल डॉ. रोफ अहमद परे, वैज्ञानिक, कृषि अभियांत्रिकी संभाग	पंचम	1000/ 1000/ 1000/

आपके उद्‌गार

पूसा सुरभि का यह अंक पढ़कर सुखद अनुभूति हुई। इस पत्रिका में हमारे उपयोग के लिए कई उपयोगी लेख शामिल किए गए हैं। इसमें लेख और फोटोग्राफ भी अच्छी क्वालिटी के हैं, जिससे इनकी गुणवत्ता बढ़ जाती है। इसमें बस एक ही कमी है कि यह साल में एक बार निकलती है। मैं निदेशक महोदय से अनुरोध करता हूँ कि ऐसी पत्रिकाएं तो मासिक आधार पर निकलनी चाहिए।

- कृषक प्रताप सिंह, गाँव रावता, दिल्ली

पूसा सुरभि का ग्यारहवां अंक प्राप्त हुआ। इसके पिछले अंकों की भाँति यह भी अनेक प्रकार की किसानोपयोगी जानकारियों से भरा है। इसमें स्वामीनाथन जी की जीवनी और योगदान के बारे में जानने का मौका मिला, साथ ही अमरूद, पपीता, अनार जैसे फलों के उत्पादन और परिरक्षण पर तथा मुनक्का, तरबूज पर भी लेख अत्यंत उपयोगी थे। सूत्रकृमियों पर लेख अत्यंत ज्ञानवर्धक लगे। आंखों से दिखाई न देने वाले कृमि भी कृषि में कितना महत्व रखते हैं, वर्तमान में कृषि पर्यटन या एग्रो टूरिज्म भी उभरता विषय है, जिस पर आपने पत्रिका में सारगर्भित जानकारी दी। इन सभी लेखों के लिए संस्थान के वैज्ञानिकों का बहुत-बहुत धन्यवाद। यदि लेखकों का ईमेल या फोन नंबर भी दें तो अधिक जानकारी की आवश्यकता पड़ने पर हमें उनसे संपर्क करने में सुविधा होगी।

- कृषक कुलवंत सिंह, गाँव जलालपुर, करीरा, बुलंदशहर

भारतीय कृषि अनुसंधान द्वारा विकसित कृषि ज्ञान और प्रौद्योगिकी को सरल भाषा में बताने की महती आवश्यकता है। इस जरूरत को पूरा करने की दिशा में इस पत्रिका का योगदान सराहनीय है। इसमें जटिल तकनीकी लेख बड़ी आसान भाषा में लिखे गए हैं। इसके लिए मैं लेखकों को धन्यवाद देता हूँ। हमारे देश में ज्ञान-विज्ञान के प्रचार-प्रसार के लिए ऐसे लेखों की अत्यधिक आवश्यकता है। इसके प्रकाशन के लिए मैं पूसा संस्थान को बहुत-बहुत बधाई और शुभकामनाएं देता हूं।

- कृषक नरेंद्र सिंह, गाँव टटेसर, दिल्ली 81

आपके संस्थान से प्रकाशित **'पूसा सुरभि'** पत्रिका का नवीन अंक प्राप्त हुआ। पत्रिका का अवलोकन करने पर यह पाया गया कि **पूसा सुरभि** पत्रिका किसान भाइयों के लिए एक ज्ञानवर्धक प्रकाशन है तथा यह पत्रिका निश्चित रूप से किसानों के लिए लाभकारी होगी। संस्थान द्वारा कृषि के क्षेत्र में किए जा रहे नवीनतम अनुसंधानों को पत्रिका के माध्यम से किसानों एवं कृषि से जुड़े लोगों तक पहुंचा कर देश की प्रगति में महत्वपूर्ण योगदान देने हेतु एक अच्छा प्रयास है। पत्रिका का नियमित प्रकाशन सराहनीय है।

हम इसके उज्ज्वल भविष्य की कामना करते हुए पुन: आपका आभार प्रकट कर ढेर सारी शुभकामनाएं देते हैं।

एम.एल. गुप्ता
उप निदेशक (राजभाषा)
भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद,
कृषि भवन, नई दिल्ली-110001

सूचित किया जाता है कि इस स्टेशन को आपके संस्थान की गृह पत्रिका पूसा सुरभि 2017-18 की एक प्रति प्राप्त हुई। पत्रिका का रंगीन आवरण बड़ा आकर्षक है। पत्रिका में प्रकाशित लेख रुचिकर व ज्ञानवर्धक हैं। पत्रिका से जुड़े सभी लोग बधाई के पात्र हैं। कृपया पत्रिका का प्रकाशन भविष्य में भी जारी रखें।

राजेन्द्र कुमार साहू
जूनियर वारंट अफसर
प्रभारी शिक्षा अफसर, शिक्षा अनुभाग,
मास्टर कंट्रोल सेंटर,वायु सेना स्टेशन,
बसंत नगर, नई दिल्ली-110010

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उप समिति द्वारा संस्थान का निरीक्षण

माननीय संसदीय राजभाषा समिति की दूसरी उप समिति द्वारा संस्थान का निरीक्षण

प्रो. एम एस स्वामीनाथन पुस्तकालय
Prof, M S SWAMINATHAN LIBRARY